परामर्श समिति

आचार्य सत्यकाम, माननीय कुलपति, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज
कर्नल विनय कुमार, कुलसचिव, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

पाठ्यक्रम निर्माण समिति (अध्ययन बोर्ड)

प्रो0 संतोषा कुमार निदेशक, समाज विज्ञान विधाशाखा,उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 आशीष सक्सेना विभागाध्यक्ष, समाजशास्त्र विभाग इलाहाबाद विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रो0 महेश शुक्ला प्रोफेसर टी0 आर0 एस0 कालेज, ए0 पी0 एस0 विश्वविद्यालय, रीवाँ म0 प्र0।

डॉ0 रमेश चन्द्र यादव, असि प्रोफेसर, समाजशास्त्र विभाग, बैसवारा पी0 जी0 कालेज, लालगंज, रायबरेली।

इकाई लेखक= डॉ0 अनुपमा सिन्हा असि.प्रोफेसर, समाजशास्त्र, काशी हिन्दू विश्वविद्यालय, वाराणसी, इकाई= 1

इकाई लेखक= डॉ0 किशोर कुमार,सहायक आचार्य,समाजशास्त्र विभाग,गया कॉलेज,गया,बिहार इकाई =3, 4

इकाई लेखक= डॉ0 प्रज्ञा, असि. प्रोफेसर, समाजशास्त्र डी डी यू पी जी कालेज, सैदाबाद, प्रयागराज इकाई = 6, 7

इकाई लेखक= डॉ0 रमेशचंद्र यादव असिस्टेंट प्रोफेसर समाजशास्त्र बैसवारा पी.जी. कॉलेज, लालगंज रायबरेली इकाई =8, 19

इकाई लेखक= डॉ0 शालिनी सिंह असि. प्रोफेसर, समाजशास्त्र जगत तारन गर्ल्स पी जी कालेज, प्रयागराज इकाई 9, 10, 12

इकाई लेखक= डॉ0 राहुल तिवारी, सहायक आचार्य, समाजशास्त्र, राजकीय महाविद्यालय, बलुवाकोट, पिथौरागढ़, उत्तराखण्ड = इकाई 13, 14

इकाई लेखक= डॉ0 मनोज कुमार असि. प्रोफेसर, समाजशास्त्र समाज विज्ञान विधाशाखा, उत्तर प्रदेश राजर्षि टंडन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज, इकाई = 2,5,11,15,16,17,18

इकाई लेखक = डॉ0 विनीता लाल प्रोफेसर एवं प्रभारी समाजशास्त्र विभाग नेताजी सुभाष चंद्र बोस राजकीय महिला स्नातकोत्तर महाविद्यालय, अलीगंज, लखनऊ, इकाई = 20, 21, 22, 23

सम्पादक – प्रो0 महेश शुक्ला प्रोफेसर टी0 आर0 एस0 कालेज, ए0 पी0 एस0 विश्वविद्यालय, रीवाँ म0 प्र0।

पाठयक्रम समन्वयक डॉ0 मनोज कुमार असि0 प्रोफेसर,समाज विज्ञान विधाशाखा, उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

2024 (मुद्रित)

© उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज– 211021

ISBN …

सर्वाधिक सुरक्षित इस सामग्री के किसी भी अंश को उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय,प्रयागराज की लिखित अनुमति के बिना किसी भी रूप में मिमियोग्राफी (वक्रमुद्रण) द्वारा या अन्यथा पुन: प्रस्तुत करने की अनुमति नहीं है।

नोट:पाठ्यक्रम सामग्री मे मुद्रित सामग्री के विचारों एवं आंकड़ों आदि के प्रति विश्वविद्यालय उत्तरदायी नहीं है।

प्रकाशन– उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

प्रकाशक– कुलसचिव, कर्नल विनय कुमार उ0प्र0 राजर्षि टण्डन मुक्त विश्वविद्यालय, प्रयागराज

मुद्दक – मेसर्स चंद्रकला प्राइवेट लिमिटेड, प्रयागराज

खण्ड- परिचय

खण्ड –01 राजनीतिक समाजशास्त्र एक परिचय

खण्ड –02 राजनीतिक व्यवस्था एवं समाज में अंतः संबंध

खण्ड –03 प्रजातांत्रिक व्यवस्था

खण्ड –04 राजनीतिक समाजीकरण

खण्ड –05 समाज में शक्ति के वितरण का अभिजन सिद्धान्त

खण्ड –06 दबाव समूह और हित समूह

राजनीतिक समाजशास्त्र

Political Sociology

खण्ड -01 राजनीतिक समाजशास्त्रः एक परिचय

इकाई 1 राजनीतिक सामजशास्त्र का अर्थ, परिभाषा तथा विशेषतायें राजनीतिक सामजशास्त्र का उदभव और विकास।

इकाई 2 राजनीतिक समाजशास्त्र की विषय सामग्री एवं क्षेत्र क्या राजनीतिक सामजशास्त्र एक विज्ञान है?

इकाई 3 राजनीतिक समाजशास्त्र का अन्य समाजिक विज्ञानों से सम्बन्ध

इकाई 4 राजनीतिक समाजशास्त्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि महत्व

खण्ड -02 राजनीतिक व्यवस्था एवं समाज में अंतः संबंध

इकाई 5 राजनीतिक व्यवस्थाः परिभाषा तथा विशेषतायें

इकाई 6 राजनीतिक व्यवस्थाओं का वर्गीकरण

इकाई 7 राजनीतिक व्यवस्था व समाज में अंतः संबंध

खण्ड -03 प्रजातांत्रिक व्यवस्था

इकाई 8 प्रजातंत्ररू परिभाषायें तथा विशेषतायें

इकाई 9 प्रजातंत्र के प्रकार, मूल सिद्धान्त, गुण व दोष

इकाई 10 भारत में प्रजातंत्र

खण्ड -04 राजनीतिक समाजीकरण

इकाई 11 राजनीतिक समाजीकरण : अर्थ एवं परिभाषा

इकाई 12 राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति एवं विशेषतायें

इकाई 13 राजनीतिक समाजीकरण के प्रकार व अध्ययन के स्तर

इकाई 14 राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण, निर्धारक तत्व तथा महत्व

खण्ड -05 समाज में शक्ति के वितरण का अभिजन सिद्धान्त

इकाई 15 राजनीतिक अभिजन : अर्थ परिभाषा एवं विशेषतायें

इकाई 16 राजनीतिक अभिजन के प्रकार (बुद्धिजीवी, प्रबन्धक, नौकरशाह)

इकाई 17 राजनीतिक अभिजन के सिद्धान्त एवं एवं उनकी आलोचनायें

इकाई 18 भारत में राजनैतिक अभिजन

खण्ड 06 दबाव समूह और हित समूह

इकाई 19 दबाव समूह या हित समूह का अर्थ, प्राकृतिक एवं विशेषतायें

इकाई 20 दबाव समूहो का वर्गीकरण, साधन और तरीके

इकाई 21 दबाव समूह तथा राजनैतिक दल में अन्तर

इकाई 22 दबाव समूह या हित समूह का राजनैतिक महत्व दोष या हानियाँ

इकाई 23 भारत में दबाव समूह विशेषतायें वर्गीकरण

इकाई : 1 – राजनीतिक समाजशास्त्र : अर्थ, परिभाषा, विशेषताएँ, राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं विकास

इकाई की रूपरेखा

1.0 उद्देश्य

1.1 प्रस्तावना

1.2 राजनीतिक समाजशास्त्र का अर्थ

1.3 राजनीतिक समाजशास्त्र की परिभाषा

1.4 राजनीतिक समाजशास्त्र की विशेषताएं

1.5 राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं विकास

1.6 सारांश

1.7 बोध प्रश्न

1.8 संदर्भ सूची

1.0 उद्देश्य

इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे :

1. राजनीतिक समाजशास्त्र का अर्थ एवं परिभाषा को आप जान सकेंगे।
2. राजनीतिक समाजशास्त्र की अवधारणा से परिचित होंगे ।
3. राजनीतिक समाजशास्त्र की विशेषता, उद्‌भव एवं विकास की रूपरेखा को समझ सकेंगे।

1.1 प्रस्तावना

राजनीतिक समाजशास्त्र एक शाखा है जो समाज में राजनीतिक प्रक्रियाओं ,व्यक्तियों, संगठनों और संरचनाओं का अध्ययन करती है। इसका मुख्य उद्देश्य समाज के राजनीतिक संरचना ,तंत्र और विचारधारा को समझना है। यह शाखा समाज के अंदर होने वाली राजनीतिक गतिविधियों के पीछे छिपे तात्विक, सामाजिक, और आर्थिक प्रेरणाओं को गहराई से समझने का प्रयास करती है ।

1.2 राजनीतिक समाजशास्त्र का अर्थ (Meaning of Political Sociology)

समाजशास्त्र विषय भारत में समाज विज्ञान में सबसे नवीन विज्ञान के रूप में देखा जाता है। समाजशास्त्र के अंतर्गत हम मानव समाज से जुड़ी प्रक्रियाओं का अध्ययन/अध्यापन करतें हैं। समाजशास्त्र के संदर्भ में वीरस्टीड ने अपनी पुस्तक The Social Order में लिखा है कि "एक विषय के रूप में समाजशास्त्र नवीन है जबकि इसका इतिहास काफी प्राचीन या लंबा है।" इस नवीन विज्ञान को जन्म देने का श्रेय फ्रांस के प्रसिद्ध विद्वान ऑगस्ट कॉम्ट को जाता है। समाजशास्त्र मानव संबंधों के बीच होने वाली अंतःक्रियाओं का अध्ययन करता है। आज समाजशास्त्र के क्षेत्र में वृहद एवं स्वतंत्र रूप में वृद्धि हुई है। इसी के फलस्वरूप समाजशास्त्र के क्षेत्र में अनेकों शाखाओं जैसे ग्रामीण समाजशास्त्र, नगरीय समाजशास्त्र, औद्योगिक समाजशास्त्र, तथा चिकित्सीय समाजशास्त्र, एवं अपराध शास्त्र, धर्म के समाज के साथ–साथ समाजशास्त्र विषय के साथ आदि शाखाएं जुड़ी हुई हैं। समाजशास्त्र का विषय क्षेत्र काफी विस्तृत है। समाजशास्त्र के विषय क्षेत्र में राजनीतिक समाजशास्त्र भी एक प्रमुख शाखा है। जैसे इस विषय के साथ होकर अन्य शाखाओं ने अपनी–अपनी महत्ता सिद्ध की है ठीक वैसे ही राजनीतिक समाजशास्त्र भी समाज के अस्तित्व में आया और लोगों के अध्ययन की रुचि इसमें बढ़ी साथ ही लोगों का इस विषय क्षेत्र के प्रति ध्यान भी गया। राजनीतिक समाजशास्त्र पहले से ही समाज में विद्यमान था, जरूरत थी , तो बस इसे पढ़ने और समझने की जो कि काफी समय पश्चात प्रारंभ हुआ। ऐसा भी नहीं कहा जा सकता की राजनीतिक

समाजशास्त्र समाज के सिर्फ एक क्षेत्र से संबंधित है अपितु राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र के प्रत्येक क्षेत्र में विद्यमान है और अपनी महत्ता पूर्ण रूप से सिद्ध किए हुए है।

राजनीतिक समाजशास्त्र के अंतर्गत हम अपनी सामाजिक जीवन के बीच घटित होने वाली सामाजिक और राजनीतिक पहलुओं के बीच होने वाले अंतःक्रियाओं का अध्ययन, विश्लेषण करतें हैं। अर्थात आपसी व्यवहारों और राजनीतिक सामाजिक संरचनाओं, संस्थाओं, समूहों तथा समाज में राजनीतिक, सामाजिक व्यवस्थाओं के अध्ययन के साथ–साथ राजनीति का समाज के प्रति क्षेत्र में पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन राजनीतिक समाजशास्त्र में करतें हैं।

1.3 राजनीतिक समाजशास्त्र की परिभाषा

राजनीतिक समाजशास्त्र एक नया विषय होने के कारण इस विषय को सार्वभौमिक रूप से परिभाषित करना काफी कठिन है। इस विषय के संदर्भ में अनेकों विद्वानों नें अपनी–अपनी कुछ परिभाषाएं दी जो इस प्रकार हैं

डाउसे तथा ह्यूज के अनुसार "राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की एक शाखा है जिसका सम्बन्ध मुख्य रूप से राजनीति और समाज में अन्तःक्रिया का विश्लेषण करना है"।

लेविस कोजर के अनुसार "राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की वह शाखा है जिसका संबंध सामाजिक कारकों तथा तात्कालिक समाज में शक्ति वितरण से है। इसका संबंध सामाजिक और राजनीतिक संघर्षों से है जो शक्ति वितरण में परिवर्तन का सूचक है"।

लिपसेट के अनुसार "राजनीतिक समाजशास्त्र को समाज एवं राजनीतिक व्यवस्था के तथा सामाजिक संरचनाओं एवं राजनीतिक संस्थाओं के पारस्परिक अंतःसंबंधों के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है"।

पोपीनों के अनुसार "राजनीतिक समाजशास्त्र में वृहत सामाजिक संरचना तथा समाज की राजनीतिक संस्थाओं के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन किया जाता है"।

जेनोविट्स के अनुसार "व्यापकतर अर्थ में राजनीतिक समाजशास्त्र समाज के सभी संस्थागत पहलुओं की शक्ति के सामाजिक आधार से संबंधित है। इस परंपरा में राजनीतिक समाजशास्त्र स्तरिकरण के प्रतिमानों तथा संगठित राजनीति में इसके परिणामों का अध्ययन करता है"।

वेनडिक्स के अनुसार "राजनीति विज्ञान राज्य से प्रारंभ होता है और इस बात की जांच है कि यह समाज को कैसे प्रभावित करता है। राजनीतिक समाजशास्त्र समाज से प्रारंभ होता है और इस बात की जांच करता है कि वह राज्य को कैसे प्रभावित करता है"।

टॉम बोटोमॉर के अनुसार "राजनीतिक समाजशास्त्र का सरोकार सामाजिक संदर्भ में सत्ता (Power) से है। यहाँ सत्ता का अर्थ है एक व्यक्ति या सामाजिक समूह द्वारा कार्यवाही करने, निर्णय करने व उन्हें कार्यान्वित करने और मोटे तौर पर निर्णय करने के कार्यक्रम को निर्धारित करने की क्षमता जो यदि आवश्यक हो तो अन्य व्यक्तियों और समूहों के हितों और विरोध में प्रयुक्त हो सकती है"।

ऊपर लिखे निम्नलिखित परिभाषाओं के अन्तर्गत हम देखें तो राजनीतिक समाजशास्त्र के संदर्भ में विद्वानों द्वारा दी गई परिभाषाओं से यह अर्थ स्पष्ट होता है कि राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की वह शाखा है जिसके अंतर्गत वह समाज के हर पहलू का राजनैतिक परिप्रेक्ष्य के अन्तर्गत समाज का वैज्ञानिक अध्ययन करता है। साथ ही साथ राजनीतिक विज्ञान तथा समाजशास्त्र विषय के अंतर्गत एक दूसरे के पूरक, एक दूसरे का अध्ययन करतें हैं ।

1.4 राजनीतिक समाजशास्त्र की विशेषता

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से राजनीतिक समाजशास्त्र की निम्नलिखित विशेषताएं दृष्टिगोचर होती है जो इस प्रकार है

- राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीति विज्ञान नहीं है विशेषता स्वरूप हम देखें तो राजनीतिक समाजशास्त्र,राजनीतिक विज्ञान नहीं है क्योंकि यह सिर्फ राज्य अथवा राज्यतंत्र का अध्ययन नहीं करता बल्कि राजनीति समाज के अंतर्गत घटनाओं, सामाजिक क्रियाओं का अध्ययन, राजनीतिक सामाजिक अधिकारों एवं प्रभाव का अध्ययन करतें हैं।

- राजनीतिक समाजशास्त्र,समाजशास्त्र भी नहीं है राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र भी नहीं है क्योंकि राजनीतिक समाजशास्त्र न सिर्फ समाज अथवा सामाजिक पहलुओं का अध्ययन करता है बल्कि सामाजिक एवं राजनीतिक दोनों पक्षों का अध्ययन इसमें सम्मिलित होता है।

- राजनीतिक समाजशास्त्र में राजनीति शास्त्र तथा समाजशास्त्र दोनों का समावेशन यद्यपि विशेषता स्वरूप देखा जाए तो राजनीतिक समाजशास्त्र में न तो राजनीतिक विज्ञान और न तो सिर्फ समाजशास्त्र को रखा जाता है बल्कि राजनीतिक समाजशास्त्र विषय के अंतर्गत इन दोनों विषयों

को रखा जाता है इसे अलग करके राजनीतिक समाजशास्त्र को विशेषीकृत करना कठिन हो जाएगा।

- राजनीतिक समाजशास्त्र एक नवीनतम विषय के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र विषय की एक शाखा मात्र है जो की राजनीति शास्त्र तथा समाजशास्त्र दोनों विषयों का एक मिलाजुला विज्ञान है साथ ही साथ समाजशास्त्र स्वयं में एक नवीन विज्ञान है इस कारण राजनीतिक समाजशास्त्र भी एक नवीन विषय के रूप में विद्यमान है। जिसका अध्ययन हम समाजशास्त्र एवं राजनीतिकशास्त्र के अन्तर्गत करते हैं।

- राजनीतिक एवं सामाजिक चरों पर समान बल राजनीतिक समाजशास्त्र के अंतर्गत राजनीतिक एवं सामाजिक विज्ञान विषय के चरों को एक समान महत्व एवं बल दिया जाता है साथ ही साथ एक दूसरे के तादात्म्य पर भी बाल दिया जाता है। क्योंकि एक दूसरे के अलग थलग करके इस विषय के बारे में विस्तृत ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाएगा।

1.5 राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं विकास

संस्थागत एवं औपचारिक रूप में देखा जाए तो राजनीतिक समाजशास्त्र एक आधुनिक विषय है। इस विषय की मान्य तिथि बताना कठिन है फिर भी इस शब्द का प्रयोग द्वितीय विश्व युद्ध के पश्चात किया जाने लगा है। देखा जाए तो ऐसे अध्ययन बहुत सारे है जिसको की हम राजनीतिक समाजशास्त्र के अंतर्गत रख सकते है। जिनका अध्ययन अठारहवीं,उन्नीसवी शताब्दी में शुरू हुए थे लेकिन तब हम देखे तो उस समय राजनीतिक समाजशास्त्र विषय विकसित भी नहीं हुआ था। मिचेल के अनुसार, अरस्तू की पुस्तक 'पॉलिटिक्स' को निश्चित रूप से राजनीतिक समाजशास्त्र के अंतर्गत वर्गीकृत किया जा सकता है। **बविस्कर** (Baviskar) के विचारानुसार,राजनीतिक समाजशास्त्र शब्द का सामान्य प्रचलन 1930 –1940 के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में हुआ (बविस्कर1974) , जबकि मिचेल के अनुसार इसका सामान्य प्रचलन 1945 के पश्चात ही शुरू हुआ।

राजनीतिक समाजशास्त्र के इतिहास एवं विकास को हम देखें तो इसे कम से कम चार भागों मे बांटकर देखा जा सकता है ।

राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव एवं विकास के अंतर्गत प्रथम भाग को शास्त्रीय काल के रूप में देखा जाता है इसका काल ग्रीक और रोमन के समय का था। उस समय मनुष्य को राजनीतिक पशु के समान समझ जाता था बाद में पवित्र रोमनो के समय इन्हें विशुद्ध रूप से धार्मिक शब्दों में पुर्नभाषित किया

जाने लगा और इन्हे भगवान का एक अंश माना गया। देखा जाए तो राजनीतिक समाजशास्त्र के शास्त्रीय काल के प्रतिनिधि प्लेटों, अरस्तू , सिसरो , सेंट अगस्टाइन , जैसे दार्शनिक रहें है ।

राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्भव एवं विकास की दूसरी प्रवृत्ति पुनर्जागरण के समय काल में देखी जा सकती है इस काल में दो अलग –अलग मान्यताओं वाले दार्शनिकों के बीच बहस शामिल थी जिसमें की प्रथम मान्यता वाले दार्शनिकों के अनुसार राज्य और समाज के बीच एक महत्वपूर्ण अंतर था जिसमें लॉक ,रूसो,सेंट साइमन ,मार्क्स थे तथा द्वितीय विचारधारा वाले जो भी दार्शनिक थे वह समाज और राजनीतिक में भेद नहीं करते थे। जो कि राजतन्त्र और चर्च के आधिपत्य और वैधता के पक्षधर थे जिसमें की मैकियावेली, बर्क ,हेगेल, होब्स थे। इसके अलावा कई अन्य विद्वानों जैसे मैकाइवर एवं पेज़ , मैक्स वेबर आदि का योगदान राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्भव के लिए अद्वितीय रहा।

राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्भव एवं विकास में तीसरा काल समाज मे व्याप्त कुलीनों की भूमिका से संबंधित रही है। अभिजात वर्ग (Elite) जिसका प्रयोग दो समाजशास्त्रियों द्वारा उपयोग किया गया। इस काल में अभिजात वर्ग को सर्वोपरिता में एक मानक के रूप में स्वीकार किया गया बाद में धीरे–धीरे इसका परिदृश्य बदलकर यह बेहतर सामाजिक समूहों जैसे अत्यधिक सफल सैन्य इकाइयों और अभिजात वर्ग के उच्च पदों के रूप में विस्तारित किया गया। संभ्रांत सिद्धांतकारों का मानना है कि सम्पूर्ण इतिहास में समाज में हमेशा काम संख्या वाले शासकों का एक अलग स्थान रहा है और महत्वपूर्ण संसाधनों या एकाधिकार के कारण प्रभावी संगठन और नियंत्रण को बढ़ाने में सक्षम थे। उन संसाधनों में सैन्य बाल , धार्मिक शासन, आर्थिक वर्चस्व या राजनीतिक शक्ति थे जिस पर विभिन्न समाज का नियंत्रण समय–समय पर बदलता रहता है।

राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्भव एवं विकास की चौथी प्रवृत्ति को देखें तो वह समकालीन काल है। आज के समय में यह काल विकास के प्रमुख सिद्धांतों के निर्माण के साथ–साथ है। यह काल विकास के प्रमुख सिद्धांतों के निर्माण के साथ समाज और राजनीति से संबंधित वस्तुनिष्ठ प्रामाणिक सामान्यीकरण पर बल देता है। समकालीन राजनीतिक सिद्धांत के प्रमुख विद्वानों में लिपसेट, हंटर, मिल्स, इंकल्स मैके जैसे प्रमुख राजनीतिक समाजशास्त्री हैं। इन्होंने राजनीतिक समाजशास्त्र को एक परिपक्व वैज्ञानिक विषय के रूप में बताया है।

1.6 सारांश

निष्कर्ष रूप में हम देखे तो राजनीतिक समाजशास्त्र एक स्वतंत्र विषय न होकर बल्कि समाजशास्त्र एवं राजनीतिशास्त्र विषय की एक शाखा है जो की समाजशास्त्र की भाँति एक विषय क्षेत्र के रूप में

विद्यमान है साथ ही इस विषय के अंतर्गत हमने इसके अर्थ, परिभाषा एवं उद्भव एवं विकास पर चर्चा की है जिसके आधारस्वरूप राजनीतिक समाजशास्त्र के विषय प्रवेश को समझने में बहुत ही आसानी होगी और इस विषय के बारें में छात्र एक अच्छी समझ विकसित कर सकने में सफल होंगे । राजनीतिक समाजशास्त्र विषय के अंतर्गत हमें यहाँ यह भी देखने को मिलता है की राजनीतिशास्त्र और समाजशास्त्र विषय का जुड़ाव किस प्रकार से इस विषय क्षेत्र से है। संक्षेप इस विषय के बारे में कहें तो राजनीतिक समाजशास्त्र समाज के सामाजिक, आर्थिक पर्यावरण से उत्पन्न तनाव और संघर्षों का अध्ययन करने वाला विषय है जिसके आधारस्वरूप राजनीतिशास्त्र और समाजशास्त्र विषय को और बखूबी ढंग से समझा जा सकता है और आने ज्ञान को इस विषय के में और बढ़ाया जा सकता है।

1.7 बोध प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1. 'द सोशल ऑर्डर (The Social Order)' पुस्तक के लेखक कौन है ?

   (क) लेविस कोजर (ख) टॉम बोटोमॉर (ग) वीरस्टीड (घ) सेंट अगस्टाइन

2. 'पॉलिटिक्स' पुस्तक के लेखक कौन है ?

   (क) सिसरो (ख) हेगेल (ग) मैकियावेली (घ) अरस्तू

3. "राजनीतिक समाजशास्त्र में वृहत सामाजिक संरचना तथा समाज की राजनीतिक संस्थाओं के पारस्परिक संबंधों का अध्ययन किया जाता है।"

   (क) पोपीनों (ख) लिपसेट (ग) जेनोविट्स (घ) डाउसे तथा ह्यूज

4. समाजशास्त्र के जनक कौन है ?

   (क) मैक्स वेबर (ख) मार्क्स (ग) ऑगस्ट कॉम्ट (घ) सोरोकिन

5. समाजशास्त्र की उत्पत्ति किस भाषा से हुई है ?

   (क) लैटिन/ग्रीक (ख) फ्रांसीसी (ग) अंग्रेजी (घ) पुर्तगाली

लघु उत्तरी प्रश्न के उत्तर

1. ग 2. घ 3. क 4. ग 5. क

1.8 संदर्भ सूची

- डाउसे एवं जे. ए . ह्यूज (1975): पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, जॉन विली एण्ड संस, लंदन
- कोजर,लेविस ए (1967): पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, सेलेक्टेड एससेस, हारपर एण्ड
- लिपसेट, एस .एम. (1970): पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, विली ईस्टर्न प्रा.लि. , न्यू देहली
- पोपीनों,डी.,(1971): सोशियोलॉजी, एपलटन, सैन्चुरी, क्रॉफ्ट्स, न्यूयॉर्क
- जेनोविट्स,एम.(1968): पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, दि मैकमिलन कंपनी एण्ड दि फ्री प्रेस , न्यूयॉर्क
- वेनडिक्स–लिपसेट (1957): पॉलिटिकल सोशियोलॉजीः, एन एसे विथ स्पेशल रिफरेंस टू द डेवलपमेंट ऑफ रिसर्च इन द यूनाइटेड स्टेट ऑफ अमेरिका एण्ड वेस्टर्न यूरोप, करंट सोशियोलॉजी, 6 (2), 79–99
- बोटोमॉर, टी. (1987): पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, हारपर एण्ड रो पब्लिशर, न्यूयॉर्क
- डॉ. धर्म वीर (2014): राजनीतिक समाजशास्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर
- मुखोपाध्याय,ए.के.(1977): पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, के वागची एण्ड कंपनी, कलकत्ता
- बविस्कर,बी.एस(1974): सोशियोलॉजी ऑफ पॉलिटिक्स इन ए सर्वे ऑफ रिसर्च इन सोशियोलॉजी एण्ड सोशल एंथ्रोपोलॉजी, पॉपुलर प्रकाशन, बंबई

इकाई : 2 – राजनीतिक समाजशास्त्र की विषय सामग्री एवं क्षेत्र, क्या राजनीतिक समाजशास्त्र एक विज्ञान है ?

इकाई की रूपरेखा

2.0 उद्देश्य

2.1 प्रस्तावना

2.2 राजनीतिक समाजशास्त्र का अर्थ

2.3 राजनीतिक समाजशास्त्र की परिभाषा

2.4 परिभाषा एवं अर्थ

2.5 राजनैतिक समाजशास्त्र की प्रमुख विशेषताएँ

2.6 राजनीतिक समाजशास्त्र का क्षेत्र

2.7 राजनीतिक समाजशास्त्र का विकास

2.8 राजनीतिक समाजशास्त्र की प्रकृति और दायरा

2.9 सारांश

2.10 बोध प्रश्न

2.11 सन्दर्भ सूची

2.0 उद्देश्य

इकाई के अध्ययन उपरान्त आप जान सकेंगे :

- राजनीतिक समाजशास्त्र का अर्थ एव परिभाषा को आप जानेगे।
- राजनीतिक समाजशास्त्र की व्यवस्था परिभाषा एव विशेषताओं को आप समझेगे।
- राजनीतिक समाजशाम्र का क्षेत्र के विषय मे आप जानेगे।
- राजनीतिक समाजशास्त्र के विकास के विषय मे आप जानेगे।
- राजनीतिक समाजशास्त्र की प्रकृति और दायरा को समझेगे।

2.1 प्रस्तावना

राजनैतिक समाजशास्त्र मूलतः दो प्रमुख शब्द राजनीति तथा समाजशास्त्र से मिल कर बना है। राजनैतिक के अर्थ को हम राजनैतिक घटनाओं, राजनैतिक क्रियाओं, राजनैतिक संस्थाओ से सम्बन्धित मानते है। हमारे आस–पास प्रत्येक क्षेत्र मे राजनैतिक घटनाये घटित होती है। जबकि समाजशास्त्र में हम सामाजिक घटनाओं समूहों संस्थाओं समाजिक मूल्यों मानव व्यवहार तथा उसके आस–पास होने वाली प्रत्येक क्रिया कलापों तथा मानव सम्बन्धो के मध्य होने वाली क्रिया का अध्ययन करते है। अतः राजनैतिक समाजशास्त्र दोनों विज्ञानों से मिल कर बना है। इसलिए हम इसके अर्न्तगत दोनों का सम्मिलित रूप से अध्ययन करते है।

लैविस ए0 कॉजर के अनुसार,''राजनीतिक समाजशास्त्र वह भाग है जो समाज मे या समाज के मध्य दिए गए शक्ति वितरण के कारणां प्रभावों तथा उन सामाजिक व राजनीतिक संघर्षों का अध्ययन है। जो इस प्रकार वितरण मे परिवर्तन लाती है।''

स्टूवर्ड राइज के अनुसार, ''राजनीतिक समाजशास्त्र का क्षेत्र उस प्रयास के रूप में परिभाषित किया जा सकता है। जो राजनीतिक व्यवहार एवं राजनीतिक संस्थाओं के अध्ययन में विभिन्न समाजशास्त्रीय अवधारणाओं एवं पद्धतियों का प्रयोग करते है''।

डाउसे एवं ह्यूज के अनुसार, ''राजनैतिक समाजशास्त्र मूल में समाजशास्त्र की वह शाखा है। जिसका सम्बन्ध राजनीति एवं समाज में अतः क्रिया का विश्लेषण करना है।''

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कह सकते है कि, राजनैतिक समाजशास्त्र समाजशास्त्र की वह शाखा या विज्ञान है। जिसके अर्न्तगत समाज में होने वाली प्रत्येक घटनाओं का सामाजिक जीवन पर पडने वाले पारस्परिक सम्बन्धों की प्रक्रियाओं पारस्परिक अन्तः क्रियाओं की व्यवस्थाओं एवं अवस्थाओं का मुख्य रूप से राजनैतिक परिपेक्ष के सम्बन्ध में वैज्ञानिक अध्ययन किया जाता है।

बोध प्रश्न

स्टूवर्ड राइज की परिभाषा लिखिए

.....

.....

.....

.....

.....

2.2 राजनीतिक समाजशास्त्र का अर्थ

19वीं सदी में राज्य और समाज के आपसी संबंधों पर वाद–विवाद की शुरुआत हुई और 20वीं सदी में द्वितीय विश्व युद्ध के बाद सामाजिक विज्ञानों में विविधता और विशिष्टता की उदित प्रवृत्ति और राजनीति में व्यवहार क्रांतिकारी और अंतः विशेषीकृत उपमा का महत्व बढ़ा। परिणाम स्वरूप जर्मन और अमेरिकी विद्वानों में राजनीतिक विज्ञान के समाजोन्मुख अध्ययन की एक नूतन प्रवृत्ति हुई। इस के संभावित राजनीतिक पहलुओं की समाजशास्त्रीय खोज एवं जांच की जाने लगी। ये दस्तावेज़ एवं जाँच न तो पूर्ण रूप से समाजशास्त्रीय थी और न ही पूर्णतः राजनीतिक। मूलतः ऐसे को राजनीतिक समाजशास्त्र के नाम से बुलाया जाने लगा। एक स्वतन्त्रता एवं स्वायतशासन में राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं अध्ययन–अध्यापन एक नूतन घटना है। प्रथम विश्व युद्ध के बाद फ़ैज़ न्यूमा, सिमंड न्यूमा, हेन्स गर्थ, होरोविज़, जेनोविट्स, सी. राइट मिल्स, ग्रियर ओरलिंस, रोज, मेन्जी, लिप्सेट जैसे विद्वान और चिंतकों की मंडली ने राजनीतिक समाजशास्त्र में एक विशिष्ट निर्देश में विमोचन किया है। लेकिन आज भी यह अपने बाल्यावस्था में ही है। इसके बाल्यावस्था के कारण ही विभिन्न भारतीय मठों में राजनीतिक समाजशास्त्र के पाठ्यक्रम के रिकार्ड अध्ययन–अध्यापन के लिए परिजन को शामिल किया गया है और परिजन–सम्बन्धियों की गवेषणायें की जाय इस बात को लेकर विद्वानों में गहरी दिलचस्पी है। यहां तक कि इस के नामकरण के बारे में भी आम सहमति नहीं मिली है। कतिपय विद्वान इसे राजनीतिक समाजशास्त्र कहते हैं,जबकि

अन्य विद्वान इसे राजनीति का समाजशास्त्र कहते हैं। एस. एन. आइसेन्डेड इसे राजनीतिक प्रक्रियाओ और संप्रदाय का समाजशास्त्रीय अध्ययन (Political Processes and Political Systems) कहकर पुकारते हैं। 'राजनीतिक समाजशास्त्र वस्तुतः समाजशास्त्र और राजनीति के बीच वर्तमान सम्बन्धों की घनिष्ठता का सूचक है। इस की व्याख्या समाजशास्त्री और राजनीतिशास्त्री अपने–अपने ढंग से करते हैं। जहाँ समाजवादी के लिए यह समाजशास्त्र की एक शाखा है, जिसका सम्बन्ध समाज के अन्दर या मध्य में तनमन के कारणों एवम् परिणामों तथा उन सामाज और राजनीतिक द्वन्द्वों से है जो कि समाज में परिवर्तन लाते हैं। जिसका सम्बन्ध सम्पूर्ण समाज व्यवस्था के बजाय राजनीति व्यवस्था को करने वाले अन्त सम्बन्धों से है। ये अन्तःसम्बन्ध राजनीति व्यवस्था तथा समाज की दूसरी उपव्यवस्थाओं के बीच में होते हैं। राजनीति शास्त्री की ग्रन्थ राजनीति तक तथ्यों की व्याख्या करने वाले समाज तक रहती है जब तक समाजशास्त्री समस्त सम्बन्धी घटनाओं को देखता है। इस विषय का वर्णन समाजशास्त्री और राजनीतिशास्त्री अपने–अपने ढंग से करते हैं। जहाँ समाजवादी के लिए यह समाजशास्त्र की एक शाखा है, जिसका सम्बन्ध समाज के संगठित या मध्य में आवश्यक शक्ति के महत्व और प्रभाव तथा उन सामाजिक और राजनीतिक द्वन्द्वों से है जो सत्ता या शक्ति में परिवर्तन लाते हैं राजनीतिशास्त्र के लिए यह राजनीतिशास्त्र की शाखा है जिसका संपूर्ण समाज व्यवस्था के बजाय राजनीतिक उपव्यवस्था को प्रभावित करने वाले अंतःसंबंधों से है। ये अंतःसंबंध राजनीतिक व्यवस्था और समाज की दूसरी उपव्यवस्थाओं के बीच होते हैं। राजनीतिशास्त्री की रुचि राजनीतिक तथ्यों की व्याख्या करने वाले सामाजिक व्यत्यित्व तक बनी रहती है,जबकि समाजशास्त्री की सभी संबंधित घटनाएं देखी जाती हैं।

2.3 राजनीतिक समाजशास्त्र की परिभाषा

- **डाउसे तथा हयूज** ''राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की एक शाखा है जिसका सम्बन्ध मुख्य रूप से राजनीति और समाज में अन्तःक्रिया का विश्लेषण करना है।''

- **जेनोविटस** ''व्यापक अर्थ में राजनीतिक समाजशास्त्र समाज के सभी सस्थागत पहलुओ की शक्ति के सामाजिक आधार से सम्बन्धित है। इस परम्परा में राजनीतिक समाजशास्त्र स्तरीकरण के प्रतिमानों तथा संगठित राजनीति में इसके परिणामों का अध्ययन करता है।''

- **लिपसेट** "राजनीतिक समाजशास्त्र को समाज एवं राजनीतिक व्यवस्था के तथा सामाजिक संरचनाओं एवं राजनीतिक संस्थाओ के पारस्परिक अन्तः सम्बन्धों के अध्ययन को परिभाषित किया जा सकता है।"

- **बेनडिक्स** "राजनीति विज्ञान राज्य से प्रारम्भ होता है और इस बात की जाच करता है कि यह समाज को कैसे प्रभावित करता है। राजनीतिक समाजशास्त्र समाज से प्रारम्भ होता है और इस बात की जांच करता है कि वह राज्य को कैसे प्रभावित करता है।"

- **पोपीनो** "राजनीतिक समाजशास्त्र में वृहत् सामाजिक संरचना तथा समाज की राजनीतिक संस्थाओं के पारस्परिक सम्बन्धों का अध्ययन किया जाता है।"

- **सारटोरी** "राजनीतिक समाजशास्त्र एक अन्तःशास्त्रीय मिश्रण है जो कि सामाजिक तथा राजनीतिक चरों को अर्थात् समाजशास्त्रियों द्वारा प्रस्तावित निर्गमनों को राजनीतिशास्त्रियो द्वारा प्रस्तावित निर्गमनों से जोड़ने का प्रयास करता है। यद्यपि राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीतिशास्त्र तथा समाजशास्त्र को आपस से जोड़ने वाले पुलों में से एक है, फिर भी इसे राजनीति के समाजशास्त्र का पर्यायवाची नहीं समझा जाना चाहिए।"

- **लेविस कोजर** "राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की वह शाखा है जिसका सम्बन्ध सामाजिक कारकों तथा तात्कालिक समाज में शक्ति वितरण से है। इसका सम्बन्ध सामाजिक और राजनीतिक संघर्षों से है जो शक्ति वितरण में परिवर्तन का सूचक है।"

- **बोटोमोर** "राजनीतिक समाजशास्त्र का सरोकार सामाजिक सन्दर्भ में सत्ता (Power) से है। यहाँ सत्ता का अर्थ है एक व्यक्ति या सामाजिक समूह द्वारा कार्यवाही करने, निर्णय करने व उन्हें कार्यान्वित करने और मोटे तौर पर निर्णय करने के कार्यक्रम को निर्धारित करने की क्षमता जो यदि आवश्यक हो तो अन्य व्यक्तियों और समूहों के हितों और विरोध में भी प्रयुक्त हो सकती है।"

2.4 परिभाषा एवं अर्थ

राजनीतिक समाजशास्त्र का यथार्थ चित्रण संस्थावाद एवं व्यवहारवाद से भिन्न है। संस्थावादी मुख्य से राजनीतिक संगठनों के संस्थात्मक स्वरूप उसके कानूनी एवं औपचारिक तत्त्वों का ही अध्ययन करते हैं, जबकि व्यवहारवादी व्यक्तिगत कर्त्ता के राजनीतिक क्षेत्र में उसके मनोवैज्ञानिक व्यवहार, झुकाव, मनोवृत्ति, ज्ञान आदि का अध्ययन करते हैं । जबकि राजनीति समाजशास्त्री पूरी राजनीतिक प्रक्रिया का समाज एवं नीति निर्माणकारी शक्ति के बीच अन्तःक्रिया का अध्ययन करते हैं।

बैंडिक्स, लिपसेट, कोजर और बोटोमोर राजनीतिक–समाजशास्त्र को समाजशास्त्र का ही एक भाग मानते हैं। इन सिद्धांतों के अनुसार समाजशास्त्रीय कारक जैसे– समाज, वर्ग, सामाजिक स्थिति आदि स्वतंत्र

कारक हैं जबकि राजनीतिक कारक जैसे राज्य, कानून, राजनीतिक दल आदि उन पर निर्भर हैं। **बेनेडिक्स** के अनुसार राजनीतिक समाजशास्त्र समाज से प्रारंभ होता है और इस बात की जाँच करता है कि यह राज्य को कैसे प्रभावित करता है; जबकि राजनीति विज्ञान राज्य से प्रारंभ होता है और इस बात की जाँच करता है कि समाज को वह कैसे प्रभावित करता है।

बेनेडिक्स तथा लिपसेट ने राजनीतिक समाजशास्त्र के अन्तर्गत निम्नलिखित पहलुओं को सम्मिलित किया है–समुदायों तथा राष्ट्रों में मतदान व्यवहार, आर्थिक शक्ति का केन्द्रीकरण तथा राजनीतिक निर्णय व कार्य, राजनीतिक आंदोलन तथा हित समूहों की विचारधाराएं राजनीतिक दल, ऐच्छिक समुदाय, अल्पतंत्रीय एवं मनौवैज्ञानिक सह–संबंधों की समस्यायें तथा सरकार और नौकरशाही की समस्यायें। लिपसेट का यह मानना है कि राजनीतिक समाजशास्त्र को समाज एवं राजनीतिक व्यवस्था के तथा सामाजिक संरचनाओं एवं राजनीतिक संस्थाओं के पारस्परिक अन्तः संबंधों के अध्ययन के रूप में परिभाषित किया जा सकता है।

लिपसेट के अनुसार यदि समाज–व्यवस्था का स्थायित्व ही समाजशास्त्र की केन्द्रीय समस्या है तो राजनीतिक व्यवस्था का स्थायित्त्व अथवा जनतंत्र की परिस्थिति राजनीति की मुख्य चिन्ता है। राजनीतिक समाजशास्त्र सामाजिक प्रक्रिया और राजनीतिक प्रक्रिया में तादात्म्य पाता है और इस प्रकार यह राजनीति की एक नई परिभाषा प्रस्तुत करता है।

कार्ल मार्क्स समाजशास्त्र की राजनीति (Politics of Sociology) के प्रमुख प्रवक्ता थे। उन्होंने राजनीति को एक आश्रित कारक के रूप में बखूबी दिखलाया भी एवं अन्य विद्वानों ने भी आर्थिक कारक को महत्त्व दिया था लेकिन कार्ल मार्क्स ने विश्लेषित एवं स्थापित किया। एक समाजशास्त्री सामाजिक कारकों को प्राथमिकता देते हैं तथा राजनीतिक शास्त्री राजनीतिक कारकों को। आज भी यह मुद्दा विद्वानों के बीच विवाद का कारण है। राजनीति की स्वायत्तता का मुद्दा निश्चित रूप से अपना महत्त्व रखता है क्योंकि सामाजिक कारक राजनीतिक व्यवहार को तय करते हैं।

निष्कर्ष स्वरूपः– राजनीतिक कर्त्ता के व्यक्तित्त्व पर प्रकाश डालता है लेकिन राजनीति की प्रक्रिया के साथ वह न्याय नहीं कर पाता। यहाँ राजनीति के समाजशास्त्र (Sociology of Politics) की आलोचना एक प्रस्ताव के रूप में हुई है। राजनीतिक समाजशास्त्र का यह विश्वास हैं कि.यह जानना समानांतर महत्त्व का है, कि कैसे और किन–किन परिस्थितियों में राजनीतिक कारक सामाजिक तथा नागरिक जीवन के व्यक्तिगत पहलुओं को प्रभावित करता है।

राजनीतिक समाजशास्त्र सरकार एवं समाज के बीच अन्तःक्रियाओं को समझने का प्रयास करता है, नीति–निर्माणकारी सत्ता और संर्घारत सामाजिक शक्ति और हितों के बीच अन्तःक्रियाओं का अध्ययन करता

है। यह सामाजिक जीवन में राजनीतिक एवं सामाजिक पहलुओं के बीच होने वाली अन्तःक्रियाओं का विश्लेषण करता है। अर्थात् राजनीतिक समाजशास्त्र के अन्तर्गत राजनीतिक कारकों तथा सामाजिक कारकों के पारस्परिक संबंधों तथा इनके एक दूसरे पर प्रभाव एवं प्रतिच्छेदन का अध्ययन करते हैं। राजनीतिक समाजशास्त्र के दृटिकोण से राजनीतिक जीवन को किसी एक शक्ति के कारण नहीं मानना चाहिये–जैसे वर्ग या कोई खास समूह सिर्फ राजनीतिक ही नहीं, कई शक्तियों का समावेश किये रहता है। एक राजनीतिशास्त्री को राजनीतिक व्यवहार का अध्ययन समाजशास्त्रीय परिवेश में करना चाहिये। लेकिन ऐसा करते समय राजनीतिक प्रश्नों तथा राजनीतिक श्रेष्ठताओं पर भी उचित ध्यान देना आवश्यक है।

2.5 राजनैतिक समाजशास्त्र की प्रमुख विशेषताएँ

- राजनैतिक समाजशास्त्र की राजनीतिशास्त्र से प्रथकता राजनैतिक समाजशास्त्र राजनीतिशास्त्र से पृथक विज्ञान है। क्योकि राजनीति शास्त्र के अर्न्तगत अधिकार प्रभावों का अध्ययन करते है। जब कि राजनैतिक समाजशास्त्र में घटनाओं संस्थाओं समाजिक क्रियाओं का अध्ययन राजनैतिक सामाजिक अधिकारों एवं प्रभावों का अध्ययन करते है।

- राजनैतिक समाजशास्त्र की समाज विज्ञान से भिन्नता राजनैतिक समाजशास्त्र में समाज में होने वाली घटनाओं क्रियाओं अन्तः क्रियाओं व्यवस्थाओं की अपेक्षा राजनैतिक सन्दर्भ में राजनैतिक सामाजिक घटनाओं एवं व्यवस्थाओं का अध्ययन करते है। अतः यह समाज विज्ञान से पृथक है।

- राजनैतिक समाजशास्त्र की विशिष्टता वर्तमान समय में इस विज्ञान का विशेष स्थान है, यह विज्ञान राजनैतिक तथा समाज दोनो का संयुक्त है लेकिन राजनैतिक सामाजिक व्यवस्थाओं तथा उनके अध्ययन में वह अपनी विशिट पहचान बनाता है। इस विज्ञान की विषय वस्तु एवं क्षेत्र में विशिष्ट स्थिति तक लाने में सफल है।

- राजनैतिक समाजशास्त्र की अन्य विज्ञानों से समानता राजनैतिक समाजशास्त्र एक विशिष्ट एवं प्रभावपूर्ण विज्ञान दोनो के साथ–साथ यह एक नवीन विज्ञान है।

2.6 राजनीतिक समाजशास्त्र का क्षेत्र

किसी भी समाज विज्ञान के क्षेत्र को परिभाषित करना आसान नहीं है। खास कर तब जब वह अपनी शैशव अवस्था में ही हो, जैसा कि राजनीतिक समाजशास्त्र के कुछ चिंतकों के अनुसार राजनीति आधारित होती है राज्य द्वारा निर्मित कुछ नियमों पर। अतः राज्य नहीं वरन समूहों की राजनीति को ही

राजनीतिक समाजशास्त्र की विषय–वस्तु मानना चाहिये। बरनार्ड किर्क के अनुसार छोटे समूह राज्य द्वारा बनाई गई व्यवस्था का एक अंग होते हैं। वे राजनीति निर्माण में सहायता करते हैं। लेकिन उनके आंतरिक व्यवहार राजनीतिक नहीं होते क्योंकि उनके क्रियाकलाप राज्य के क्रिया–कलापों से भिन्न होते हैं। किर्क की परिभाषा छोटे समूहों तथा उसके यांत्रिक तक सीमित है, लेकिन कई ऐसे विद्वान भी हैं जिन्होंने बड़े समूहों के अध्ययन को भी राजनीतिक विश्लेषण से अलग कर देखा है। ये समूह हैं–व्यापार संघ, चर्च, व्यावसायिक संगठन आदि। यह इस बात पर आधारित है कि सही मायने में ये संगठन राजनीतिक नहीं हैं। ग्रीर तथा विश्लेषण औरलियन्स के अनुसार राजनीतिक समाजशास्त्र का मुख्य संबंध राज्य नामक एक विशेष संरचना के विवरण, और सामाजिक व्यवस्था से है।

चिंतकों के एक अन्य समूह का यह मानना है कि सभी सामाजिक संबंधों में राजनीति उपस्थित है। चार्ल्स ई – मरियम एवं हेराल्ड लासवेल सरीखे विद्वानों ने यह देखा कि बल और शक्ति के लिये खासकर समूहों तथा वर्गों के बीच संघर्ष तथा विवाद ही राजनीतिक संबंधों का अन्तर्निहित पहलू है। लासवेल के अनुसार प्रभाव, एवं प्रभावित भी राजनीति के बीच के अन्तर्खेल के रूप में ही किसी समाज का चरित्र चित्रण किया जा सकता है । यह हर समाज में व्याप्त है। शक्ति एवं प्रभाव का हर बिन्दु राजनीति की अभिव्यक्ति है।

चिंतकों के दो विभिन्न समूहों ने राजनीतिक समाजशास्त्र के दो भिन्न–भिन्न क्षेत्रों का वर्णन किया है। ग्रीर तथा आर्लियन्स के अनुसार राजनीतिक समाजशास्त्र के अन्तर्गत किया है।

(i) राज्य की संरचना,

(ii) वैधता की प्रकृति एवं दशायें,

(iii) शक्ति पर एकाधिकार तथा राज्य द्वारा इसका प्रयोग तथा

(iv) उप इकाइयों की प्रकृति एवं इनके राज्य से विवाद को सम्मिलित किया है ।

एण्ड्रयु इफ्रेंट (Andrew Effrate) ने तस्वीर के विस्तृत स्वरूप को शामिल करते हुए सलाह दी कि राजनीतिक समाजशास्त्र का संबंध सभी सामाजिक व्यवस्था में शक्तिसत्ता के बँटवारे की प्रक्रिया के कारण, तरीकों एवं परिस्थितियों से है। (Broom) तथा सैल्जनिक (Selzenick) के अनुसार राजनीतिक–समाजशास्त्र मुख्यत सरकार एवं राजनीति को प्रभावित करने वाली आधारभूत दशाओं में है।

डाउस (Dous) तथा ह्यूज (Huse) के अनुसार राजनीतिक समाजशास्त्र के तात्विक संबंध के क्षेत्र हैं सामाजिक व्यवस्था की समस्या और राजनीतिक आज्ञाकारिता।

इस प्रकार राजनीतिक समाजशास्त्र के विषय के अन्तर्गत निम्नांकित बातें शामिल हैं–

(i) राजनीतिक प्रबंधों का सामाजिक आधार,

(ii) राजनीतिक व्यवहार का सामाजिक आधार,

(iii) राजनीति की प्रक्रिया का सामाजिक पहलू

समाज में राजनीतिक प्रक्रिया सामाजिक परिवर्तन की प्रक्रिया और उसके अधिकारों के दावे का परिणाम है। ऐसी संस्था का निर्माण जो अपने नियमों और आदेशों को लागू करती है, राज्य की व्यवस्था समाज के विभिन्न वर्गों के साथ स्वयं को जोड़ने के लिए बहुलता को बनाए रखती है। इस संदर्भ में, राज्य अक्सर समाज की एक इकाई के कार्य करता है, जिसके पास लोगों के अधिकारों को लागू करने की जिम्मेदारी होती है। बाद में कार्ल मार्क्स ने समाज की राजनीतिक अर्थव्यवस्था तय करने के लिए राज्य की भूमिका पर जोर दिया।

राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीति को राज्य की बंधी सीमाओ से मुक्त कर बाहर निकालता है और इस धारणा का प्रतिपादन करता है कि राजनीति केवल राज्य में नहीं बल्कि समाज के समय क्षेत्र में व्याप्त रहती है। राजनीतिक सगाजशास्त्र के परिप्रेक्ष्य में राजनीति केवल राजनीतिक नहीं रह जाती है, यह गैर राजनीतिक और सामाजिक भी हो जाती है और इस प्रकार राजनीति के गैर राजनीतिक और सामाजिक प्रकृति के प्रकाश में राजनीतिक समाजशास्त्र उस खाई को पाटने का प्रयास है जो समाज और राज्य के बीच काफी समय से चली आ रही थी। इस प्रकार राजनीतिक समाजशास्त्र सामाजिक प्रक्रिया और राजनीतिक प्रक्रिया में तादाम्य स्थापित करने का प्रयास है।

राजनीति समाजशास्त्र शक्ति की दृश्यसता (Phenomenon of Power) को अपना प्रमुख प्रतिपाद्य विषय मानता है और यह स्वीकार नहीं करता कि शक्ति राज्य का एकमात्र एकाधिकार है। इसके बदले यह मानता है कि समाज के प्राथमिक और द्वितीयक समूह सम्बन्धो में शक्ति संक्रियाशील होती है। समाजशास्त्री की दृटि में शक्ति न केवल आवश्यक से सामाजिक है बल्कि सम्बन्धात्गक और परिणामात्मक अथवा मापनीय भी है। इसका अर्थ यह हुआ कि किसी भी शक्ति सम्बन्ध में शक्ति धारक की तुलना में शक्ति कम महत्वपूर्ण नहीं है। समाजशास्त्र तार्किक वैधिक सत्ता (rational legel authority) के लिए अपनी सुस्पट वरीयता व्यक्त करता है। तार्किक वैधिक सत्ता सुविचारित से निर्मित और व्यापक स्तर पर स्वीकृत नियमों से कठोर से बधी होती है ।

2.7 राजनीतिक समाजशास्त्र का विकास

राजनीतिक समाजशास्त्र का विकास तब से शुरू हुआ जब सामाजिक और राजनीति के बीच अंतर स्थापित हुआ। कुछ विद्वानों के योगदान ने इस अनुशासन के उद्भव को जन्म दिया है। वैज्ञानिक प्रौद्योगिकी और औद्योगीकरण में वृद्धि के साथ, राजनीतिक वैज्ञानिकों ने वैज्ञानिक दृटिकोण से या शायद अनुभवजन्य तरीके से राजनीतिक वास्तविकताओं को देखना शुरू कर दिया। इस प्रक्रिया ने उन्हें समाजशास्त्र की ओर आकर्षित किया, जिसने पहले से ही खुद को एक सकारात्मक और वैज्ञानिक अनुशासन के रूप में स्थापित कर लिया था और अपने दृटिकोण में राजनीति विज्ञान को और अधिक वैज्ञानिक बनाने के लिए सिद्धांतों को अपना कर दिया था। इस बढ़ते अहसास के साथ कि विकास की समस्याएं केवल संकीर्ण अर्थों में तकनीकी या नौकरशाही नहीं हैं, बल्कि व्यापक अर्थों में अनिवार्य रूप से सामाजिक राजनीतिक हैं। हालांकि, यह कार्ल मार्क्स ही थे, जिन्होंने राजनीतिक शक्ति की प्रकृति और सामाजिक या आर्थिक संगठन के साथ इसके संबंधों से संबंधित मुद्दों को तेजी से सामने लाया। हिगल के राज्य के दर्शन की आलोचना, इतिहास की उनकी भौतिकवादी व्याख्या और सामाजिक या राजनीतिक व्याख्या के लिए मूल के रूप में वर्ग की उनकी अवधारणा ने राजनीति का समाजशास्त्र शुरू किया। इस बिंदु को ध्यान में रखते हुए, वसीमन ने सही ढंग से 1840 के दशक को उस अवधि के रूप में पहचाना जब इस अनुशासन ने एक आकार प्राप्त किया।

कार्ल मार्क्स के बाद, राजनीतिक समाजशास्त्र में सबसे महत्वपूर्ण योगदान जर्मन समाजशास्त्री मैक्स वेबर द्वारा दिया गया था। उन्होंने अधिकारियों के प्रकार, नौकरशाही के आदर्श प्रकार और वर्ग के पूरक के रूप में स्थिति और पार्टी की अवधारणाओं के बारे में अपने मूल और मौजूदा विचारों द्वारा राजनीतिक समाजशास्त्र की नींव रखी। वेबर ने सामाजिक और राजनीतिक विकास की शक्तियों और दिशाओं में शानदार अंतर्दृटि प्रदान की, और ऐतिहासिक भौतिकवाद के मार्क्सवादी दर्शन का उदार संशोधन भी पेश किया। राजनीतिक समाजशास्त्र के अध्ययन के लिए वेबर द्वारा प्रदान किया गया एक अन्य महत्वपूर्ण इनपुट वैधता की अवधारणा थी जो किसी को शक्ति का प्रयोग करने का अधिकार देती है और व्यापक रूप से स्वीकार की जाती है। अंत में वेबर ने मानव व्यवहार पर भी टिप्पणी की, जिसमें उन्होंने इस बात पर जोर दिया कि गतिविधियों में शामिल लोगों के उद्देश्यों और इरादों को ध्यान में रखा जाना चाहिए। हालाँकि, ऐतिहासिक विश्लेषण की कमी के आधार पर वेबर की आलोचना भी की गई। मार्क्स और वेबर के अलावा, जिन्होंने राजनीतिक समाजशास्त्र के विकास में योगदान दिया, ऐसे अन्य विचारक भी रहे हैं जिनका योगदान, हालांकि मौलिक या प्रेरक नहीं था, फिर भी महत्वपूर्ण था। ऐसे ही एक बुद्धिजीवी थे वाल्टर बेजहोट, जो मार्क्स के समकालीन थे, जिन्होंने संस्कृति और व्यक्तित्व तथा राजनीतिक संस्थाओं और

व्यवहार के बीच संबंधों की जांच की। उन्होंने संवैधानिक सिद्धांत और व्यवहार के बीच भी अंतर किया और दावा किया कि यह दस्तावेज़ सरकार की संसदीय प्रणाली पर एक टिप्पणी है।

एक अन्य फ्रांसीसी समाजशास्त्री, गेब्रियल टार्डे ने इस बात पर जोर दिया कि टेलीग्राफ, टेलीफोन, पुस्तकों और समाचार पत्रों के रूप में आधुनिक संचार का प्रभाव व्यक्ति और मीडिया को जोड़ने का प्रयास करता है। विलफ्रेडो पेरेटो और गेटानो मोस्को जैसे अभिजात वर्ग के समाजशास्त्रियों के इनपुट के साथ राजनीतिक समाजशास्त्र के अनुशासन को और व्यापक बनाया गया, उनका दावा है कि अभिजात वर्ग को आर्थिक शक्तियों पर नियंत्रण रखने की आवश्यकता नहीं है, वास्तव में, यह केवल अभिजात वर्ग के संचलन या आंदोलन के कारण ही राजनीतिक और आर्थिक परिवर्तन हुआ है। बाद में कई विद्वानों ने राजनीतिक दलों और उनके संगठन पर जोर दिया।

2.8 राजनीतिक समाजशास्त्र की प्रकृति और दायरा

राजनीतिक समाजशास्त्र को इसके आरम्भिक स्वरूप में राजनीतिक व्यवहार और संस्थाओं के सामाजिक आधारों के अध्ययन के साथ पहचाना जाने लगा । राजनीतिक कारक को समाजशास्त्रीय चर पर निर्भर माना जाता था। जबकि समाज, वर्ग और स्थिति जैसे समाजशास्त्रीय चर को स्वतंत्र कारक माना जाता था, कानून, राज्य, संविधान और राजनीतिक दलों जैसे राजनीतिक पर निर्भर माना जाता था। हालाँकि हाल के वर्षों में राजनीति की समाजशास्त्रीय व्याख्या से ध्यान हटाकर राजनीतिशास्त्रीय और समाजशास्त्रीय दृटिकोणों पर केंद्रित हो गया है जो एक दूसरे के साथ बातचीत करते हैं। राजनीतिक समाजशास्त्र उन मुद्दों से निकटता से जुड़ा हुआ है जो राजनीतिक दर्शन में उठाए गए है। राजनीतिक दर्शन में राजनीतिक विचारों की एक समृद्ध और लंबी परंपरा है जो प्राचीन भारतीय और यूनानी दार्शनिकों से हुई थी। कार्ल मर्क्स जिन्होंने राजनीतिक शक्ति की प्रकृति और सामाजिक और आर्थिक संगठन के साथ इसके संबंधों से संबंधित मुद्दों को तीव्र ध्यान में लाया। वे ही राजनीति के समाजशास्त्र के संस्थापक के रूप में प्रसिद्ध हैं।

राजनीतिक समाजशास्त्र संघर्षो के स्रोतों और सामाजिक आधारों के साथ–साथ संघर्ष के प्रबंधन की प्रक्रिया को समझने में मदद करता है। संघर्ष मानव स्वभाव और सामाजिक परिस्थितियों में निहित हैं। जब तक अभाव की दुनिया में हितों की विविधता और अतृप्त मांगें बनी रहेंगी, तब तक हितों के टकराव से कोई बच नहीं सकता। राजनीतिक प्रक्रिया एक सतत और गतिशील प्रक्रिया है जो लगातार प्रवाह की स्थिति में रहती है, और संघर्षों की समस्या का कोई अंतिम समाधान नहीं है। राजनीतिक प्रक्रिया सामाजिक संघर्ष को संसोधित करने और नियंत्रित करने का एक तरीका है ताकि व्यवस्था के लक्ष्य को प्राप्त किया जा सके।

लेकिन संघर्षों का पूर्ण उन्मूलन, भले ही यह संभव हो, इसके लिए एक हद तक नियंत्रण की आवश्यकता होती है जो मानव स्वतंत्रता को नष्ट करना। एक व्यवस्थित समाज एक अधिनायकवादी समाज नहीं है जो एकता प्राप्त करता है और विविधता को नकारता है, जो अनुशासन लागू करता है और असहमति को नष्ट करता है, जो अनुपता का आदेश देता है और सहजता को नष्ट करता है। इसके बजाय आपसी हितों की धारणा और आम सहमति के विकास के माध्यम से व्यवस्था प्राप्त की जा सकती है, बिना लोकप्रिय भागीदारी के सिद्धांतों और खेल के नियमों के उचित पालन से समझौता किए।

2.9 सारांश

राजनीतिक समाजशास्त्री आधुनिक समाज में न केवल असीमित शक्ति के प्रयोग को असम्भव मानता है, बल्कि यह भी स्वीकार करता है कि आधुनिक समाज में राजसत्ता कुछ हाथों में सिमटी रहती है। इसकी यह भी मान्यता है कि समाज में राजशक्ति का असमतल बटवारा ठीक उसी तरह होता है जिस तरह से समाज में ससाधनो का बटवारा असमतल होता है और इस असमतल बंटवारे को व्यापक जनादेश के आधार पर प्राप्त सहमति और सर्वसम्मति के माध्यम में वैधिक, औचित्यपूर्ण और स्थायी बनाया जाता है। स्थायित्व प्राप्त और औचित्यपूर्ण शक्ति सम्बन्धों के इसी सामान्य प्रति की पृठभूमि है।

राजनीतिक समाजशास्त्र कुछ नितान्त आवश्यक प्रासंगिक प्रश्नों और समस्याओ पर विचार करता है। उदाहरण के लिए, राजनीतिक समाजशास्त्र नौकरशाही का अध्ययन नीतियों को लागू करने वाले प्रकार्यों को निपादित करने वाले राज्य के एक अपरिहार्य यन्त्र या तन्त्र के रूप में नहीं करता बल्कि एक ऐसे महत्वपूर्ण सामाजिक समूह के रूप में करता है जिसकी आधुनिक समाज की बढ़ती हुई विषमताओ के संदर्भ में एक बहुत बड़ी प्रकार्यात्मक आवश्यकता है। दूसरे शब्दों में राजनीतिक समाजशास्त्र नौकरशाही को इसके विशिट राजनीतिक संदर्भ में नहीं, इसके वृहत्तर सामाजिक सदर्भ में समझना चाहता है।संक्षेप में, राजनीतिक समाजशास्त्र इस बात की परीक्षा करने में अभिरुचि रखता है कि राजनीति सामाजिक संरचनाओ को और सामाजिक संरचनाएं राजनीति को कैसे प्रभावित करती हैं।

2.10 बोध प्रस्न

लघु उत्तरी प्रस्न

1. यह किसकी परिभाषा है ''राजनीतिक समाजशास्त्र वह भाग है जो समाजो मे या समाजों के मध्य दिए गए शक्ति वितरण के कारणां प्रभावों तथा उन सामाजिक व राजनीतिक संघर्षों का अध्ययन करती है। जो इस प्रकार वितरण मे परिर्वन लाती है।''

(अ) लैविस ए0 कॉजर के अनुसार (ब) वेबर (स) कार्ल मार्क्स (द) डाउसे एवं ह्यूज के अनुसार,

2. यह किसकी परिभाषा है ''राजनैतिक समाजशास्त्र मूल में समाजशास्त्र की वह शाखा है। जिसका सम्बन्ध राजनीति एवं समाज में अतः क्रिया का विश्लेाण करना है।''

(अ) लैविस ए0 कॉजर के अनुसार (ब) वेबर (स) कार्ल मार्क्स (द) डाउसे एवं ह्यूज के अनुसार,

3. संक्षिप्त में राजनीतिक समाजशास्त्र का अर्थ बताइये।
4. राजनैतिक समाजशास्त्र की प्रमुख विशेषताएं बताइये।
5. राजनीतिक समाजशास्त्र क्षेत्र पर टिप्पड़ी लिखिए।
6. राजनीतिक समाजशास्त्र के विकास पर टिप्पड़ी लिखिए।

लघु उत्तरी प्रश्न के उत्तर

1 (अ) 2 (द)

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. राजनीतिक समाजशास्त्र का अर्थ एंव परिभाषा लिखिए।
2. राजनीतिक समाजशास्त्र की प्रकृति और दायरा की व्यख्या कीजिये।

2.11 सन्दर्भ सूची

- अशरफ, अली और शर्मा, एल.एन.1983. राजनीतिक समाजशास्त्र– राजनीति का एक नया व्याकरण। मद्रास यूनिवर्सिटी प्रेस (भारत)।
- राल्हन, एस.एस. और लाम्बट, एस.आर. 2006, राजनीतिक समाजशास्त्र। नई दिल्ली कॉमन वेल्थ पब्लिशर्स।
- ए.शर्मा और ए गुप्ता (सं.), 2006. द एंथ्रोपोलॉजी ऑफ द स्टेटः ए रीडर, ऑक्सफोर्ड ब्लैकवेल
- बॉटमोर टी.बी.1971, सोशियोलॉजीः अ गाइड टू प्रॉब्लम एंड लिटरेचर, ब्लैकी, बॉम्बे

- कोठारी. रजनी. 1970. कास्ट इन इन्डियन पॉलिटिक्स. हैदराबादः ओरिएंट लॉन्गमैन.
- एल रुडोल्फ और एस. रुडोल्फ, 1987. इन पर्स्यूट ऑफ लक्ष्मीः दा पोलिटिकल इकॉनमी ऑफ दा इन्डियन स्टेट. शिकागो यूनिवर्सिटी प्रेस
- राठौड़, पी.बी. 2005. राजनीतिक समाजशास्त्र के मूल सिद्धांत। जयपुर एबीडी पब्लिशर्स।
- फॉल्क्स, कीथ। 1999. राजनीतिक समाजशास्त्र एक आलोचनात्मक विश्लेाण। एडिनबर्ग यूनिवर्सिटी प्रेस।
- बिस्वास्क के, दीप्ति। 1978. राजनीतिक समाजशास्त्र एक परिचय। कलकत्ता फ़िरमा केएलएम प्राइवेट लिमिटेड।
- मुखोपाध्याय, ए.के. 1997. राजनीतिक समाजशास्त्र एक परिचय विश्लेषण। कलकत्ता के.पी. बागची एंड कंपनी। विंडोज 1
- रॉय, शेफाली. 2014. भारत में समाज और राजनीति राजनीतिक समाजशास्त्र को समझना। दिल्ली पीएचआई लर्निंग प्राइवेट लिमिटेड।
- ग्रीर, एस. और ऑरलियन्स, पी. 1964, फ़ारिस, आर.एल. (एड) हैंडबुक ऑफ़ मॉडर्न सोशियोलॉजी में राजनीतिक समाजशास्त्र। शिकागो रैंड मैकनली।

इकाई 3 : राजनीतिक समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध

इकाई की रूपरेखा

3.0 उद्देश्य

3.1 प्रस्तावना

3.2 राजनीतिक समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध

- 3.2.1 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान
- 3.2.2 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं समाजशास्त्र
- 3.2.3 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास
- 3.2.4 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र
- 3.2.5 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान
- 3.2.6 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं दर्शनशास्त्र

3.3 सारांश

3.4 शब्दावली

3.5 बोध प्रश्नों

3.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची

3.0 उद्देश्य

इस इकाई में राजनीतिक समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंधों पर विस्तृत चर्चा प्रस्तुत की गई है। साथ ही उनके मध्य विभिन्न समानताओं एवं अन्तरों का भी विश्लेषण करने का प्रयास किया गया है। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप जान सकेगें :

- राजनीतिक समाजशास्त्र एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों में समानताएँ को आप जान सकेंगे।
- राजनीतिक समाजशास्त्र एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों में अन्तर को आप समझ सकेंगे।
- राजनीतिक समाजशास्त्र एवं अन्य सामाजिक विज्ञानों के मध्य पारस्परिक संबंध को समझ सकेंगे।

3.1 प्रस्तावना

समस्त विज्ञानों को मुख्यतः दो श्रेणियों में वर्गीकृत किया गया है– (i) प्राकृतिक विज्ञान (Natural Sciences) एवं (ii) सामाजिक विज्ञान (Social Sciences)। प्राकृतिक विज्ञानों के अंतर्गत प्राकृतिक व भौतिक जगत एवं उससे संबंधित घटनाओं का अध्ययन किया जाता है जबकि सामाजिक विज्ञानों में मानवीय क्रियाओं एवं सामाजिक घटनाओं का। प्रत्येक सामाजिक विज्ञान जीवन के एक भिन्न एवं विशिष्ट पहलू का अध्ययन करता है। अतएव उन सभी के मध्य पारस्परिक संबंध का पाया जाना स्वाभाविक है। जहाँ तक राजनीतिक समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों के साथ संबंध का प्रश्न है, यह कहा जा सकता है कि इन सभी में पारस्परिक आदान–प्रदान का संबंध है। राजनीतिक समाजशास्त्र अन्य सामाजिक विज्ञानों से और अन्य सामाजिक विज्ञान भी राजनीतिक समाजशास्त्र से बहुत सी तथ्य–सामग्री या विषय–सामग्री ग्रहण करते हैं।

3.2 राजनीतिक समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों से संबंध

जैसा कि उपर चर्चा की गई है, प्रत्येक सामाजिक विज्ञान समाज के एक विशिष्ट पहलू का अध्ययन करता है। तात्पर्य यह है कि कोई भी सामाजिक विज्ञान स्वयं में पूर्ण नहीं है। आधुनिक जटिल समाज में सामाजिक जीवन के विविध पक्ष यथा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक, आदि एक दूसरे से इतने अधिक घुले–मिले हैं कि किसी का भी पृथक्करण में अध्ययन नहीं किया जा सकता है। हमे यह अवश्य मानना पड़ेगा कि प्रत्येक सामाजिक विज्ञान सामाजिक घटनाओं व मानवीय क्रियाओं का एक विशेष परिप्रेक्ष्य (Perspective) में अध्ययन करता है, प्रत्येक का अपना एक विशिष्ट ध्यानबिंदु (Focus) होता है। इस दृष्टि से प्रत्येक सामाजिक विज्ञान की अपनी–अपनी विषय–वस्तु या अध्ययन–सामग्री है और

प्रत्येक की अपनी विशेष अध्ययन–पद्धति भी है। आगे हम राजनीतिक समाजशास्त्र का विभिन्न सामाजिक विज्ञानों से संबंधों की चर्चा करेंगे।

3.2.1 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान

वास्तव में इस बात पर अधिक जोर देने की आवश्यकता नहीं है कि राजनीतिक समाजशास्त्र एवं राजनीतिक विज्ञान के मध्य गहरा संबंध है। यह कहना अतिशयोक्ति नहीं होगी कि राजनीति विज्ञान के अभाव में राजनीतिक समाजशास्त्र लगभग असंभव होगा। जहाँ राजनीति विज्ञान राज्य एवं शासन के अध्ययन का विज्ञान है। यह राज्य की उत्पति, विकास एवं समस्त राजनीतिक प्रक्रियाओं, सूचनाओं एवं संरचनाओं का अध्ययन करता है वहीं, राजनीतिक समाजशास्त्र राज्य, शासन एवं राजनीतिक संस्थाओं एवं संरचनाओं पर सामाजिक संरचनाओं, प्रक्रियाओं एवं संस्थाओं के प्रभावों का अध्ययन करता है। इस दृष्टिकोण से यदि हम देखें तो राजनीतिक समाजशास्त्र को राजनीति विज्ञान के एक विशिष्ट दृष्टिकोण के रूप में भी देखा जा सकता है। दूसरे शब्दों में, यह राजनीति विज्ञान की समस्याओं/तथ्यों का समाजशास्त्रीय कारकों, स्थितियों एवं घटनाओं की पृष्ठभूमि में अध्ययन करने का एक नवीन दृष्टिकोण है। उदाहरण के लिए, राजनीति विज्ञान की तरह राजनीतिक समाजशास्त्र भी वर्गों, समूहों, दलों, नेतृत्व, निर्वाचन, आदि का अध्ययन करता है। इसी कारण डवजर, रूसीमैन, क्रिंक, गारे तथा ॲरलियन्स, आदि जैसे विद्वान राजनीति विज्ञान एवं राजनीतिक समाजशास्त्र को समानार्थी (पर्यायवाची) शब्द मानते हैं तथा दोनों में कोई विभेद नहीं करते हैं।

यद्यपि राजनीति विज्ञान एवं राजनीतिक समाजशास्त्र की विषय–वस्तु एवं अध्ययन पद्धति में समानताएँ विद्यमान है, किंतु इसका अर्थ यह नहीं है दोनों में अन्तर नहीं है। दोनों में मुख्य अंतर इस प्रकार हैं–

(i) राजनीति विज्ञान की तुलना में राजनीतिक समाजशास्त्र अपेक्षाकृत नवीन है।

(ii) बेनेडिक्स एवं लिपसेट ने दोनों के मध्य अंतर स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''जहाँ राजनीति विज्ञान राज्य से आरम्भ होकर इस तथ्य की छानबीन करता है कि कैसे राज्य समाज को प्रभावित करता है, राजनीतिक समाजशास्त्र समाज से आरम्भ होकर इस तथ्य की गवेषणा करता है कि कैसे समाज राज्य को प्रभावित करता है।'' इस तरह यह स्पष्ट होता है कि दोनों के दृष्टिकोण में व्यापक भिन्नता है।

(iii) जहाँ राजनीति विज्ञान में राजनीतिक संरचना एवं कारकों जैसे–राज्य, सरकार शक्ति सता, अभिजन आदि को अपने अध्ययन व विश्लेषण हेतु चरों (Variables) माना जाता है वहीं, राजनीतिक समाजशास्त्र में राजनीतिक चरों के साथ–साथ सामाजिक चरों जैसे–जाति एवं राजनीति, धर्म एवं राजनीति, लिंग, शिक्षा, आयु, आदि को समान महत्त्व दिया जाता है।

(iv) राजनीति समाजशास्त्र सिर्फ राज्य का ही नहीं बल्कि राजनीतिक व्यवहारों, क्रियाकलापों एवं सामाजिक व्यवहारों, क्रियाकलापों के मध्य अंतःक्रिया का भी अध्ययन करता है। इस रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र अपने अध्ययन को इस आयाम की ओर ले जाता है जिसे राजनीति वैज्ञानिकों ने अब तक अपने अनुसंधान एवं अन्वेषण का क्षेत्र नहीं माना था।

उपर्युक्त विश्लेषण से यह तथ्य प्रमाणित होता है कि राजनीतिक समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान में स्पष्ट अन्योन्याश्रय संबंध है। राजनीतिक समाजशास्त्र अपनी गहन एवं विशिष्ट जाँचों के माध्यम से राजनीति विज्ञान को समृद्ध करता है, जबकि राजनीति विज्ञान भी राजनीतिक समाजशास्त्र को विशिष्ट व गहन जाँचों का समर्थन करता है। दोनों ही अनुशासन अपने अध्ययन में वैज्ञानिक पद्धतियों को अपनाते हैं। दोनों को ही कमोबेश समान वैज्ञानिक चरित्र वाला विज्ञान कहा जा सकता है। दोनों ही एक तरफ सकारात्मक तो दूसरी तरफ आदर्शात्मक प्रकृति के हैं।

3.2.2 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं समाजशास्त्र

राजनीतिक समाजशास्त्र एवं समाजशास्त्र दोनों प्रमुख सामाजिक विज्ञान है एवं दोनों के मध्य घनिष्ठ संबंध पाया जाता है। डाउसे एवं ह्यूज जैसे विद्वान तो राजनीतिक समाजशास्त्र को समाजशास्त्र की एक उपशाखा ही मानते हैं। इनके अनुसार राजनीतिक समाजशास्त्र, समाजशास्त्र की एक शाखा है जिसका संबंध राजनीति और समाज में अंतःक्रिया का विश्लेषण करना है। राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीतिक संरचनाओं एवं सामाजिक संरचनाओं के मध्य उपस्थित अंतःक्रियाओं एवं अंतःसम्बन्धों की व्याख्या कर उसका राजनीतिक अध्ययन एवं विश्लेषण विभिन्न सामाजिक स्तरों पर करता है। अनेक विद्वानों की यह मान्यता रही है कि राज्य, सरकार, संविधान, राजनीतिक दल, विधि, कानून एवं नीति जैसे राजनीतिक चर समाज, जाति, समूह, वर्ग एवं धर्म, आदि जैसे समाजशास्त्रीय चरों पर ही अधिकांशतः निर्भर हैं। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि राजनीतिक समाजशास्त्र एवं समाजशास्त्र में द्विमुखी संबंध होता है।

राजनीतिक समाजशास्त्र की यह मान्यता है कि राज्य अनेकानेक राजनीतिक संस्थाओं में से एक है और इन सभी (राजनीतिक) संस्थाओं के मध्य के संबंधों का अध्ययन समाजशास्त्र का विषय–क्षेत्र है और राजनीतिक संस्थाओं एवं अन्य संस्थाओं के बीच का अध्ययन राजनीतिक समाजशास्त्र का विशिष्ट

अध्ययन–क्षेत्र है। राजनीतिक समाजशास्त्र समकालीन समाजशास्त्र एवं राजनीतिक विज्ञान के अंतर्गत एक उपक्षेत्र है। संक्षेप में, यह राजनीति का समाजशास्त्रीय मूल्यांकन हैं।

जियोबानी सार्तोरी के अनुसार ''राजनीतिक समाजशास्त्र एक अंतर्विषयक मिश्रण है जो सामाजिक एवं राजनीतिक व्याख्यात्मक घटकों का सम्मिश्रण है।'' यह समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान के बीच का सेतु है।

उपर्युक्त समानताओं के बाद भी दोनों में पर्याप्त अंतर विद्यमान है। दोनों के मध्य मुख्य अंतर अग्रांकित है–

(i) समाजशास्त्र समाज के सभी पक्षों अर्थात, संपूर्ण समाज का समग्र दृष्टिकोण से अध्ययन करता है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीतिक संरचना पर सामाजिक संरचना के प्रभाव का ही अध्ययन करता है।

(ii) समाजशास्त्र एक सामान्य सामाजिक विज्ञान है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र एक विशिष्ट सामाजिक विज्ञान है क्योंकि यह सिर्फ समाज के एक पहलू राजनीति का अध्ययन करता है।

(iii) राजनीतिक समाजशास्त्र की तुलना में समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र अधिक व्यापक है।

(iv) समाजशास्त्र वर्तमान स्थिति का यथार्थ चित्रण करता है अर्थात, क्या है का विवरण प्रस्तुत करता है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र एक आदर्शात्मक विज्ञान के रूप में क्या होना चाहिए पर जोर देता है।

(v) दोनों की अध्ययन–पद्धतियों में भी पर्याप्त अंतर पाया जाता है। समाजशास्त्र में अवलोकन, साक्षात्कर, वैयक्तिक–अध्ययन पद्धति, समाजमिति, आदि का प्रयोग किया जाता है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र में आगमन एवं निगमन पद्धतियों (Inductive and Deductive Method) का प्रयोग किया जाता है। यद्यपि, हाल के वर्षों में राजनीतिक समाजशास्त्र में भी समाजशास्त्रीय पद्धतियों के प्रयोग का प्रचलन बढ़ा है।

बैडिक्स एवं लिपसेट का मानना है कि राजनीतिक को सामाजिक के साथ सम्बद्ध किये बिना राजनीतिक को नही समझा जा सकता। राजनीतिक समाजशास्त्र एवं समाजशास्त्र के मध्य वास्तविक संबंधों को स्पष्ट करते हुए सार्तोरी का अभिमत है कि मनुष्य केवल एक राजनीतिक प्राणी ही नहीं है बल्कि, एक सामाजिक प्राणी भी है। अपने राजनीतिक क्रियाकलापों के अतिरिक्त उसका अपना एक गैर–राजनीतिक

कार्यक्षेत्र भी है और उसके ये दोनों कार्यक्षेत्र एक दूसरे से अलग नहीं है बल्कि, अंतःसम्बद्ध है। राजनीतिक मनुष्य आवश्यक रूप से अपने सामाजिक परिवेशों एवं उसके अपने अनुभवों की उपज होता है।

राजनीति विज्ञान एवं राजनीतिक समाजशास्त्र की विषय–वस्तु एवं अध्ययन पद्धति में समानताएँ विद्यमान है, किंतु इसका अर्थ यह नहीं है दोनों में अन्तर नहीं है। दोनों में मुख्य अंतर इस प्रकार हैं–

(i) राजनीति विज्ञान की तुलना में राजनीतिक समाजशास्त्र अपेक्षाकृत नवीन है।

(ii) बेनेडिक्स एवं लिपसेट ने दोनों के मध्य अंतर स्पष्ट करते हुए लिखा है कि ''जहाँ राजनीति विज्ञान राज्य से आरम्भ होकर इस तथ्य की छानबीन करता है कि कैसे राज्य समाज को प्रभावित करता है, राजनीतिक समाजशास्त्र समाज से आरम्भ होकर इस तथ्य की गवेषणा करता है कि कैसे समाज राज्य को प्रभावित करता है।'' इस तरह यह स्पष्ट होता है कि दोनों के दृष्टिकोण में व्यापक भिन्नता है।

(iii) जहाँ राजनीति विज्ञान में राजनीतिक संरचना एवं कारकों जैसे–राज्य, सरकार शक्ति सता, अभिजन आदि को अपने अध्ययन व विश्लेषण हेतु चरों (Variables) माना जाता है वहीं, राजनीतिक समाजशास्त्र में राजनीतिक चरों के साथ–साथ सामाजिक चरों जैसे–जाति एवं राजनीति, धर्म एवं राजनीति, लिंग, शिक्षा, आयु, आदि को समान महत्त्व दिया जाता है।

(iv) राजनीति समाजशास्त्र सिर्फ राज्य का ही नहीं बल्कि राजनीतिक व्यवहारों, क्रियाकलापों एवं सामाजिक व्यवहारों, क्रियाकलापों के मध्य अंतःक्रिया का भी अध्ययन करता है।

राजनीतिक समाजशास्त्र एवं समाजशास्त्र दोनों प्रमुख सामाजिक विज्ञान है एवं दोनों के मध्य घनिष्ठ संबंध पाया जाता है। डाउसे एवं ह्यूज जैसे विद्वान तो राजनीतिक समाजशास्त्र को समाजशास्त्र की एक उपशाखा ही मानते हैं। राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीतिक संरचनाओं एवं सामाजिक संरचनाओं के मध्य उपस्थित अंतःक्रियाओं एवं अंतःसम्बन्धों की व्याख्या कर उसका राजनीतिक अध्ययन एवं विश्लेषण विभिन्न सामाजिक स्तरों पर करता है। अनेक विद्वानों की यह मान्यता रही है कि राज्य, सरकार, संविधान, राजनीतिक दल, विधि, कानून एवं नीति जैसे राजनीतिक चर समाज, जाति, समूह, वर्ग एवं धर्म, आदि जैसे समाजशास्त्रीय चरों पर ही अधिकांशतः निर्भर हैं।

उपर्युक्त समानताओं के बाद भी दोनों में पर्याप्त अंतर विद्यमान है। समाजशास्त्र समाज के सभी पक्षों अर्थात, संपूर्ण समाज का समग्र दृष्टिकोण से अध्ययन करता है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीतिक संरचना पर सामाजिक संरचना के प्रभाव का ही अध्ययन करता है। समाजशास्त्र एक सामान्य

सामाजिक विज्ञान है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र एक विशिष्ट सामाजिक विज्ञान है क्योंकि यह सिर्फ समाज के एक पहलू राजनीति का अध्ययन करता है। राजनीतिक समाजशास्त्र की तुलना में समाजशास्त्र का अध्ययन क्षेत्र अधिक व्यापक है।

बैडिक्स एवं लिपसेट का मानना है कि राजनीतिक को सामाजिक के साथ सम्बद्ध किये बिना राजनीतिक को नही समझा जा सकता। सार्तोरी का अभिमत है कि मनुष्य केवल एक राजनीतिक प्राणी ही नहीं है बल्कि, एक सामाजिक प्राणी भी है। इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि राजनीतिक समाजशास्त्र एवं समाजशास्त्र में द्विमुखी संबंध होता है। संक्षेप में, यह राजनीति का समाजशास्त्रीय मूल्यांकन हैं।

3.2.3 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास

अनेक अन्य सामाजिक विज्ञानों की भाँति इतिहास भी राजनीतिक समाजशास्त्र से घनिष्ट रूप से सम्बन्धित है। इन दोनों के पारस्परिक सम्बन्धों के विषय में हम कह सकते हैं कि राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास दोनों ही अध्ययन में समान दृष्टिकोण एवं उपागमों का प्रयोग करते हैं। ऐसे अनेक अध्ययन विषय हैं जैसे कि, शक्ति की राजनीति, सामाजिक एवं राजनीतिक प्रणालियों का उत्थान एवं पतन, धर्म एवं धार्मिक संस्थाओं की उत्पत्ति एवं पराभव, संस्कृतियों का विकास एवं क्षय तथा नेतृत्व का उदय एवं पराभव आदि, जो राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास दोनों में समान रूप से उपयोगी एवं प्रासंगिक हैं। इस अर्थ में, दोनों अनुशासनों को समान कहा जा सकता है क्योंकि, दोनों ही ज्ञान के सामान्य सिद्धांतों अथवा सामान्यीकरणों का एक समान प्रयोग करते हैं।

जहाँ तक वैज्ञानिक प्रकृति का प्रश्न है, राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास दोनों ही प्रत्यक्षवादी, आदर्शात्मक अथवा दोनों हैं, विभिन्न इतिहासकारों एवं राजनीतिक समाजशास्त्रियों द्वारा अपनाये गये दृष्टिकोण के आधार पर दोनों को प्रत्यक्षवादी, आदर्शात्मक अथवा दोनों ही कहा जा सकता है। इतिहास को इस अर्थ में आदर्शवादी कहा जा सकता है कि यह हमें अपनी दूरदृष्टि से पीछे के कार्यों से सबक सिखाता है।

दोनों में एक ओर समानता यह है कि राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास द्वारा अध्ययन हेतु अनेक समान विधियों एवं तकनीकों का उपयोग किया जाता है। जैसे कि आगमन, अवलोकन, प्रयोग, साक्षात्कार, वैयक्तिक एवं जीवन इतिहास, आदि। हालाँकि, इतिहास की तुलना में राजनीतिक समाजशास्त्र क्षेत्र–कार्य पर आधारित सर्वेक्षण एवं सहभागी अवलोकन जैसी पद्धतियो पर अधिक विश्वास करता है। दूसरी ओर, यह तर्क भी दिया जा सकता है कि राजनीतिक समाजशास्त्र की तुलना में, इतिहास पुस्तकालय एवं दस्तावेजीकरण कार्य पर अधिक भरोसा करता है। लेकिन, हम इन दोनों अनुशासनों द्वारा उपयोग की जाने

वाली पद्धतियों एवं तकनीकों के संबंध में कोई कठोर नियम नहीं बना सकते हैं क्योंकि, विभिन्न पद्धतियों एवं प्रविधियों का प्रयोग अध्ययन के उद्देश्यों एवं स्थितियों, प्राथमिकता अथवा उपयुक्ता से अधिक सम्बन्धित है।

जहाँ तक राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास में अंतर का प्रश्न है, दोनों में एक सीमा तक पर्याप्त अंतर भी है। जैसा कि, हम जानते हैं इतिहास राजनीतिक समाजशास्त्र की तुलना में प्राचीन अनुशासन है। राजनीतिक समाजशास्त्र की उत्पत्ति मूलतः प्रथम विश्वयुद्ध के पश्चात हुई है जबकि इतिहास मानव हितों एवं उसके अध्ययन के रूप में अत्यंत पुराना है।

राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास में अंतर का एक बिंदु यह भी है कि इतिहास की तुलना में राजनीतिक समाजशास्त्र की विषय–वस्तु एवं अध्ययन–क्षेत्र का दायरा अधिक सीमित है। इतिहास का अध्ययन–क्षेत्र कहीं अधिक गहन एवं व्यापक है। इतिहास में व्यावहारिक रूप से मानव ज्ञान की सभी शाखाओं का इतिहास सम्मिलित है। इसमें गणित, अर्थशास्त्र, राजनीति विज्ञान एवं अन्य विषयों का भी इतिहास शामिल हैं। इस अर्थ में, इसमें स्वयं राजनीतिक समाजशास्त्र का इतिहास भी समाहित है।

उपर्युक्त चर्चाओं के आधार पर पारस्परिकता एवं अन्योन्याश्रयता को राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास के मध्य संबंधों की विशेषता कहा जा सकता है। अध्ययन के विविध क्षेत्रों, पद्धतियों एवं तकनीकों के प्रयोग एवं कुछ सिद्धांतों या सामान्यीकरणों, आदि मामलों में राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास पारस्परिक योगदान करते हैं। जब एक राजनीतिक समाजशास्त्री किसी विशेष कालखंड की संस्कृति या नेतृत्व का अध्ययन करता है तो वह निश्चित रूप से इतिहास के क्षेत्र में भी विशिष्ट योगदान करता है। इसी प्रकार, एक इतिहासकार भी जब किसी युग, राष्ट्र या राजा या प्रशासन का अध्ययन या विवरण प्रस्तुत करता है तो वह राजनीतिक समाजशास्त्र के कार्यों अथवा सिद्धांतों के लिए एक मूल्यवान आधार या सामग्री प्रदान करता है।

3.2.4 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र

राजनीतिक समाजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र में भी पारस्परिक एवं घनिष्ठ संबंध है। दोनों ही मानव और उसकी क्रियाओं का वैज्ञानिक अध्ययन करते हैं। इतना अवश्य है कि अर्थशास्त्र में मानव की आर्थिक क्रियाओं का जबकि, राजनीतिक समाजशास्त्र में राजनीतिक क्रियाओं एवं उन पर सामाजिक संरचना के प्रभावों का अध्ययन किया जाता है। कॉम्ट, मिल, परेटो, कार्ल मार्क्स एवं मैक्स वेबर जैसे विद्वानों ने अपनी रचनाओं के माध्यम से यह स्पष्टतः सिद्ध कर दिया है कि ये दोनों विज्ञान एक–दूसरे के पूरक हैं। व्यक्ति की आर्थिक क्रियाओं एवं व्यवहारों पर राजनीतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों का एवं उसकी

राजनीतिक–सामाजिक क्रियाओं एवं व्यवहार पर आर्थिक परिस्थितियों का निश्चित रूप से प्रभाव पड़ता है। ये दोनों शास्त्र एक–दूसरे के अध्ययन को व्यापकता एवं साथ ही निश्चितता प्रदान करने में भी सहायता करते हैं। दोनों के अंतर्गत अध्ययन की जाने वाली अवधारणाएँ, विचार, प्रस्ताव एवं सिद्धांत के साथ ही उन विषयों के संदर्भ में यदि एक समानता नहीं है किंतु परस्पर अंतःसंबंधित अवश्य हैं। उदाहरण के लिए, राजनीतिक समाजशास्त्र वर्गों, समूहों, उनके लक्ष्यों एवं आकांक्षाओं, समितियों एवं संस्थाओं, धर्मों एवं अर्थव्यवस्थाओं का अध्ययन करता है। इन सभी का प्रभाव लोगों के आर्थिक कल्याण का अध्ययन करने वाले अर्थशास्त्री के कार्यों पर भी पड़ता है। राजनीतिक समाजशास्त्र इस तथ्य का अध्ययन करता है कि शक्ति को कैसे उत्पन्न किया जाता है तथा साथ ही राजनीति में इसका उपयोग किस प्रकार किया जाता है। इसका असर अर्थव्यवस्था का अध्ययन करने वाले अर्थशास्त्री के कार्यों पर भी पड़ता है क्योंकि आर्थिक व्यवहार भी राजनीति से प्रभावित होता है।

दोनों सामाजिक विज्ञानों के मध्य संपर्क का दूसरा बिंदु दोनों की पारस्परिक अंतर्निभरता है। राजनीतिक समाजशास्त्री अपने कार्यों में तब तक सफल नहीं हो सकता है जबतक वह उन आर्थिक सिद्धांतों, प्रेरकों, संस्थाओं, प्रक्रियाओ एवं परिणामों को ध्यान में नहीं रखता जो लोगों के व्यवहार एवं क्रियाओं को प्रभावित करते हैं। उदाहरण के लिए, राजनीतिक समाजशास्त्री निर्वाचन का समुचित अध्ययन तबतक नहीं कर सकता जबतक कि वह निर्वाचन में धन की भूमिका को भलीभाँति नहीं समझेगा। ठीक इसी प्रकार, एक अर्थशास्त्री भी विभिन्न अर्थव्यवस्थाओं में विभिन्न वस्तुओं एवं सेवाओं के उत्पादन, वितरण एवं उपभोग का समुचित अध्ययन तबतक नहीं कर सकता जबतक कि वह राजनीतिक समाजशास्त्री द्वारा अध्ययन किये जाने वाले सापेक्ष सिद्धांतों, प्रेरणों, संस्थाओं एवं प्रक्रियाओं, आदि को ध्यान में नही रखता।

पद्धतिशास्त्रीय दृष्टिकोण से भी राजनीतिक समाजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र आगमन, अवलोकन, प्रयोग, साक्षात्कार, आदि जैसी पद्धतियों एवं तकनीकों का अपने अध्ययन में समान रूप से प्रयोग करते हैं। दोनों की ही प्रकृति वैज्ञानिक है।

उपर्युक्त विवरण से हमें यह नहीं समझ लेना चाहिए कि राजनीतिक समाजशास्त्र एवं अर्थशास्त्र में कोई अंतर नहीं है। दोनों के मध्य विषय–वस्तु, क्षेत्र, अध्ययन–पद्धति एवं दृष्टिकोण के आधार पर अंतर भी व्याप्त है। राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीतिक संरचनाओं का समाजशास्त्रीय मूल्यांकन करता है जबकि अर्थशास्त्र मानव के आर्थिक व्यवहार एवं क्रियाओं का अध्ययन करता है। राजनीतिक समाजशास्त्र आगमन, निरीक्षण, साक्षात्कार, वैयक्तिक इतिहास आदि पद्धतियों का प्रयोग करता है जबकि अर्थशास्त्र में गणितीय एवं सांख्यिकीय तकनीकों एवं पद्धतियों का अधिक प्रयोग किया जाता है। अर्थशास्त्र की तुलना में राजनीतिक समाजशास्त्र नवीन अनुशासन है।

3.2.5 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान

राजनीतिक समाजशास्त्र मनोविज्ञान से भी घनिष्ठ रूप से सम्बन्धित है। दोनों परस्पर अनुपूरक व सहयोगी हैं। मनोविज्ञान सामान्यतः व्यक्ति की मानसिक प्रक्रियाओं एवं बाह्य व्यवहार का अध्ययन करता है। स्काउट के अनुसार, मनोविज्ञान व्यक्ति की उन आन्तरिक शक्तियों का अध्ययन करता है जो मनुष्य को अपने जीवन में अनुभव करने, विचार करने तथा इच्छा करने की योग्यता प्रदान करती हैं। दोनों विज्ञानों के मध्य के संबंधों की घनिष्ठता को इस रूप मे सरलता से समझा जा सकता है कि मनोविज्ञान विभिन्न परिस्थितियों में मनुष्य के व्यवहार का अध्ययन है और मानवीय व्यवहार एवं उसको प्रकृति को समझे बना राजनीतिक समाजशास्त्र का अध्ययन ठीक प्रकार से नहीं किया जा सकता। इस संबध में गार्नर ने लिखा है कि ''सरकार को स्थिर एवं लोकप्रिय होने के लिए अपने अधीन व्यक्तियों के मानसिक विचारों को अभिव्यक्त करना चाहिए।'' वर्तमान में इन दोनों विषयों की घनिष्ठता को अनेक विद्वान स्वीकार करते हैं। मनोविज्ञान वास्तविक अर्थों में राजनीतिक समाजशास्त्र को आधार प्रदान करता है। इस संबंध में ब्राइस का कथन है''राजनीतिक विज्ञान की जड़ मनोविज्ञान में निहित है।'' राजनीतिक समाजशास्त्र में मनोवैज्ञानिक तथ्यों की उपयोगिता को स्वीकार करते हुए वर्तमान राजनीतिक समाजशास्त्री, मनोवैज्ञानिक अध्ययन पद्धतियों का अधिक प्रयोग कर रहे हैं। इसके द्वारा राजनीतिक व्यवहारों का विश्लेषण कर उसके परिणामों को राजनीतिक समाजशास्त्र में उपयोग किया जाता है। मनोवैज्ञानिक पद्धति तो यह बताती है कि मनुष्य के किसी भी राजनीतिक व्यवहार के पीछे तर्क, बुद्धि एवं विवेक के स्थान पर भावनाओं, प्रवृतियों, अभिप्रेरणों तथा अनुकरण आदि का विशेष प्रभाव एवं महत्त्व होता है। यह विश्वास किया जाता है कि जब सरकार एवं राज्य की नीतियाँ जनमानस के मनोविज्ञान के अनुकूल निर्धारित की जाती हैं तो जन–असंतोष एवं क्रांति की संभावना नगण्य हो जाती है और जब इसके विपरीत नीतियाँ बनती हैं तो क्रांति एवं जन–आन्दोलन जन्म लेते हैं। इतिहास की अनेक क्रांतियाँ इसका प्रमाण हैं।

राजनीतिक समाजशास्त्र भी मनोविज्ञान को प्रभावित करता है। यह मनोविज्ञान को राजनीतिक संरचना एवं राजनीतिक व्यवहारों से संबंधित अध्ययन सामग्री प्रदान करता है जिससे मनोविज्ञान भी समृद्ध होता है। प्रत्येक राष्ट्र की राजनीतिक–सामाजिक व्यवस्था का वहाँ की जनता के विचारों एवं आचरण पर प्रभाव पड़ता है। द्वितीय विश्वयुद्ध से पूर्व जर्मनी, इटली जैसे देशों में अधिनायकतंत्र था जिसने जनता को साम्राज्यवादी एवं युद्धप्रिय बना दिया था। किन्तु, आज इन देशों में लोकतंत्र है और वहाँ की जनता भी शांतिप्रिय एवं मानवतावादी है।

राजनीतिक समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान कई मायने में परस्पर निर्भर भी हैं। दोनों सामाजिक विज्ञानों के मध्य घनिष्ठ संबंधों के बावजूद निम्नलिखित अंतर है–

1. मनोविज्ञान के अध्ययन की इकाई व्यक्ति है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र की सामूहिक व्यवहार एवं क्रियाएं।

2. मनोविज्ञान व्यक्ति की समस्त मानसिक क्रियाओं का अध्ययन करता है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र किसी विशेष परिस्थिति में मनुष्य के सिर्फ राजनीतिक व्यवहार का अध्ययन करता है। इस प्रकार मनोविज्ञान जहाँ मनुष्य के आंतरिक व्यवहार का अध्ययन करता है वहाँ राजनीतिक समाजशास्त्र उसके बाह्य व्यवहार का अध्ययन करता है।

3. मनोविज्ञान एक यथार्थवादी विज्ञान है जबकि राजनीतिक समाजशास्त्र यथार्थवादी होने के साथ हीं आदर्शवादी भी है। अर्थात यह क्या है के साथ–साथ क्या होना चाहिए का भी अध्ययन करता है।

4. दोनों ही विज्ञान कई अध्ययन पद्धतियों का समान रूप से प्रयोग करते हैं, किन्तु राजनीतिक समाजशास्त्र की तुलना में मनोविज्ञान में प्रयोगात्मक पद्धति का अधिक प्रयोग किया जाता है। मनोवैज्ञानिक अध्ययनों में प्रायोगिक कार्यों/अध्ययनों की बहुलता है।

5. मनोविज्ञान मनुष्य को ऐसा प्राणी मानता है जो बुद्धि एवं विवेक की अपेक्षा भावनाओं एवं संवेगों से संचालित होता है। इसके विपरीत, राजनीतिक समाजशास्त्र मनुष्य को मूलतः विवेकशील मानकर चलता है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि राजनीतिक समाजशास्त्र एवं मनोविज्ञान में जहाँ अत्यधिक घनिष्ठ संबंध है वहीं इनमें आधारभूत अंतर भी है।

3.2.6 राजनीतिक समाजशास्त्र एवं दर्शनशास्त्र

दर्शनशास्त्र की तुलना में राजनीतिक समाजशास्त्र ज्ञान की एक नवीन शाखा है। जैसा कि हम जानते हैं, दर्शनशास्त्र मानव इतिहास के सबसे पुरातन विषयों में से एक रहा है। विगत हजारों वर्षों से लोगों ने दर्शनशास्त्र का अध्ययन, अध्यापन एवं अभ्यास किया है। अधिकांश विज्ञानों का उद्‌गम स्रोत या मूल दर्शनशास्त्र ही रहा है। आज जो विज्ञान एक स्वतंत्र अनुशासन के रूप में विद्यमान हैं,वे प्राचीन काल में दर्शनशास्त्र में ही सम्मिलित थे। दर्शनशास्त्र का क्षेत्र अत्यंत व्यापक था। अतएव, दर्शनशास्त्र की तुलना में राजनीतिक समाजशास्त्र न केवल एक नवीन अनुशासन है बल्कि यह ऐसा विषय भी है जो राजनीति विज्ञान, मनोविज्ञान एवं अर्थशास्त्र की तरह दर्शनशास्त्र जैसे व्यापक अनुशासन का ही भाग था।

राजनीतिक समाजशास्त्र एवं दर्शनशास्त्र की पारस्परिकता का एक अन्य बिंदु यह है कि दोनों ही अपने अध्ययनों के द्वारा एक–दूसरे को समृद्ध करते हैं। एक तरफ, जहाँ राजनीतिक समाजशास्त्र अपने गहन एवं विशिष्ट अध्ययन द्वारा दर्शनशास्त्र को लाभान्वित करता है वहीं दूसरी ओर, राजनीतिक समाजशास्त्र स्वयं भी अपने अध्ययनों में दर्शनशास्त्र की पृष्ठभूमि, तकनीक, अंतर्दृष्टि एवं योगदानों से अधिकाधिक लाभ ले सकता है।

ज्ञान की ये दोनों ही शाखाएँ अपने चरित्र में वैज्ञानिक, आदर्शवादी अथवा दोनों हैं। किंतु साधारणतया, राजनीतिक समाजशास्त्र की तुलना में दर्शनशास्त्र आदर्शवादी अधिक है। यद्यपि कुछ दार्शनिक, विशेषकर तार्किक–प्रत्यक्षवादी यह मानते हैं कि सच्चे दर्शन को अवश्य ही विवरणात्मक/वर्णनात्मक अथवा प्रत्यक्षवादी होना चाहिए। दर्शन का आदर्शवादी चरित्र/प्रकृति इस तथ्य से प्रभावित होती है कि आमतौर पर दर्शन को नैतिक एवं चारित्रिक विकास करने वाले प्रस्तावों एवं सिद्धान्तों का निर्माण करने में एक सलाहकार एवं विशेषज्ञ की भूमिका निभाने वाले अनुशासन के रूप में देखा जाता है।

जैसा कि, हम उपर चर्चा कर चुके हैं, दर्शनशास्त्र की प्रकृति आदर्शवादी कही जा सकती है। परम्परागत दर्शनशास्त्र में अनेक ऐसे सिद्धांतों एवं प्रस्तावों का प्रभावशाली समूह रहा है जिनकी प्रकृति आदर्शात्मक रही है और जिन्हें गैर–नैतिक एवं अतिरिक्त तार्किक भी कहा जा सकता है। ऐसा इसलिए क्योंकि इन प्रस्तावों एवं सिद्धांतों को तर्क द्वारा न तो सिद्ध किया जा सकता है और न अस्वीकृत। किंतु वास्तविक एवं व्यावहारिक रूप से इन्हें तर्क से स्वतंत्र या अलग रहकर स्वीकृत या अस्वीकृत किया गया है और यही राजनीतिक समाजशास्त्र के क्षेत्र में बुनियादी अभिधारणाओं या मौलिक प्रभेदों के रूप में दृष्टिगोचर होते हैं। उदाहरणस्वरूप, यह प्रस्ताव कि संसदीय शासन प्रणाली राजशाही शासन से बेहतर है, तर्क द्वारा स्वतंत्र रूप से स्वीकार या अस्वीकार किया जा सकता है। वास्ताव में, तर्क इन प्रस्तावों या सिद्धांतों को उत्पन्न नहीं करते हैं बल्कि, इनको निर्माण करने, समझने एवं व्यवहार में लाने में सिर्फ हमारी सहायता करते हैं। एक बार जब ये प्रस्ताव स्वीकृत हो जाते हैं तो यह लोगों के सामाजिक एवं आर्थिक जीवन के साथ–साथ राजनीतिक समाजशास्त्र के लिए अत्यंत उपयोगी एवं लाभदायक सिद्ध होता है। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि दर्शनशास्त्र राजनीतिक समाजशास्त्र की पृष्ठभूमि एवं कार्यों के लिए विभिन्न सिद्धांतों एवं प्रस्तावों के आपूर्तिकर्ता के रूप में कार्य करता है।

3.3 सारांश

प्राकृतिक विज्ञानों के अंतर्गत प्राकृतिक व भौतिक जगत एवं उससे संबंधित घटनाओं का अध्ययन किया जाता है जबकि सामाजिक विज्ञानों में मानवीय क्रियाओं एवं सामाजिक घटनाओं का। प्रत्येक सामाजिक विज्ञान जीवन के एक भिन्न एवं विशिष्ट पहलू का अध्ययन करता है। अतएव उन सभी के मध्य पारस्परिक संबंध का पाया जाना स्वाभाविक है। राजनीतिक समाजशास्त्र का अन्य सामाजिक विज्ञानों के साथ पारस्परिक संबंध है। राजनीतिक समाजशास्त्र अन्य सामाजिक विज्ञानों से और अन्य सामाजिक विज्ञान भी राजनीतिक समाजशास्त्र से बहुत सी तथ्य–सामग्री या विषय–सामग्री ग्रहण करते हैं।

जैसा कि उपर चर्चा की गई है, प्रत्येक सामाजिक विज्ञान समाज के एक विशिष्ट पहलू का अध्ययन करता है। तात्पर्य यह है कि कोई भी सामाजिक विज्ञान स्वयं में पूर्ण नहीं है। आधुनिक जटिल समाज में सामाजिक जीवन के विविध पक्ष यथा सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक, आदि एक दूसरे से इतने अधिक घुले–मिले हैं कि किसी का भी पृथक्करण में अध्ययन नहीं किया जा सकता है। हमे यह अवश्य मानना पड़ेगा कि प्रत्येक सामाजिक विज्ञान सामाजिक घटनाओं व मानवीय क्रियाओं का एक विशेष परिप्रेक्ष्य (Perspective) में अध्ययन करता है, प्रत्येक का अपना एक विशिष्ट ध्यानबिंदु (Focus) होता है। इस दृष्टि से प्रत्येक सामाजिक विज्ञान की अपनी–अपनी विषय–वस्तु या अध्ययन–सामग्री है और प्रत्येक की अपनी विशेष अध्ययन–पद्धति भी है।

3.4 शब्दावली

परिप्रेक्ष्य (Perspective):– किसी अध्ययन के विष्लेषण की इकाई को एक विशेष दृष्टि से देखना, उक्त इकाई के किसी एक पक्ष पर अधिक बल देना और दूसरे पक्ष या पक्षों का छोड़ देना।

प्रत्यक्षवाद (Positivism):– घटनाओं की व्याख्या के लिए अवलोकन, प्रयोग एवं परीक्षण पर आधारित वैज्ञानिक पद्धति का उपयोग करना।

अंतःशास्त्रीय उपागम (Interdisciplinary approach):– घटनाओं की व्याख्या के लिए विभिन्न विज्ञानों द्वारा उपयोग में लाई गई पद्धतियों का विद्वानों द्वारा पारस्परिक आदान–प्रदान करते हुए अध्ययन करना।

3.5 बोध प्रश्नों

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. राजनीतिक समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान में मुख्य अंतर बतायें। अपना उत्तर पाँच पंक्तियों में दें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. राजनीतिक समाजशास्त्र एवं समाजशास्त्र में अन्योन्याश्रय संबंध है। व्याख्या कीजिए

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. राजनीतिक समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान मे क्या संबन्ध है स्पस्ट कीजिये।
2. राजनीतिक समाजशास्त्र एवं इतिहास के संबन्ध को स्पस्ट कीजिये।
3. राजनीतिक समाजशास्त्र मे अर्थशास्त्र एंव मनोविज्ञान के बीच अन्तर स्पस्ट कीजिये।
4. राजनीतिक समाजशास्त्र एवं दर्शनशास्त्र मे संबन्ध को स्पस्ट कीजिये।

3.6 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- इर्विंग लुईस होरोविट्ज, ''फाउंडेषन ऑफ पॉलिटिकल सोषियोलॉजी'': हार्पर एण्ड रो पब्लिषर्स, न्यूयार्क, 1972।

- जी. सार्तोरी, ''फ्रॉम दि सोषियोलॉजी ऑफ पॉलिटिक्स टू पॉलिटिकल सोषियोलॉजी'' इन एस.एम लिपसेटः पॉलिटिक्स एण्ड दी सोषल साइंसेज, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, न्यूयार्क, 1964।

- डा. धर्मवीर, राजनीतिक समाजशास्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर, 1983।

इकाई 4 : राजनीतिक समाजशास्त्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि, महत्त्व

इकाई की रूपरेखा

4.0 उद्देश्य

4.1 प्रस्तावना

4.2 राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं विकास

4.3 राजनीतिक समाजशास्त्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

4.4 राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव के कारण

4.4.1 राज्य एवं समाज में पारस्परिक घनिष्ठताः

4.4.2 राजनीतिशास्त्र के परम्परागत दृष्टिकोण के प्रति असंतोषः

4.4.3. राजनीतिशास्त्र में समाजशास्त्र का अंतःप्रवेशः

4.4.4 सामाजिक विज्ञानों में अंतःअनुशासनात्मक अध्ययन की बढ़ती प्रवृत्तिः

4.4.5. सरकार एवं सामाजिक–राजनीतिक समस्याओं के अध्ययन का बढ़ता महत्त्वः

4.5 राजनीतिक समाजशास्त्र का महत्त्व

4.6 भारत में राजनीतिक समाजशास्त्र

4.7 सारांश

4.8 शब्दावली

4.9 बोध प्रश्नों

4.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

4.0 उद्देश्य

पिछली इकाई में अन्य सामाजिक विज्ञानों के साथ राजनीतिक समाजशास्त्र के संबंधों की चर्चा की गई है। इस इकाई में हम राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव एवं विकास की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि एवं इसके महत्त्व पर विस्तृत चर्चा करेंगे। इस इकाई के अध्ययन के बाद आप समझ सकेंगे :

- राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव एवं विकास के विषय में आप जान सकेंगे।
- राजनीतिक समाजशास्त्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि को समझ सकेंगे।
- राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव के कारकों को आप जान सकेंगे।
- एक अनुशासन के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र के महत्त्व को आप समझ सकेंगे।

4.1 प्रस्तावना

राजनीतिक समाजशास्त्र, राजनीति विज्ञान एवं समाजशास्त्र के अन्तर्गत एक नवीन उप–अनुशासन है। यह एक व्यापक उपक्षेत्र है जो राजनीति विज्ञान एवं समाजशास्त्र को जोड़ता है। यद्यपि राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीति में रूचि रखता है किंतु, यह इसे सामाजिक दृष्टि से भी देखने का प्रयास करता है। इसकी यह मौलिक मान्यता है कि सामाजिक एवं राजनीतिक प्रक्रियाओं के मध्य आकृति की एकरूपता एवं समरूपता विद्यमान है। राजनीतिक समाजशास्त्र राजनीति एवं समाज के मध्य परस्पर अंतःक्रिया का गहन अध्ययन करता है। यह राजनीतिक एवं सामाजिक संरचनाओं के मध्य सूत्रात्मकता का अध्ययन करता है। यह हमें राजनीति को इसके सामाजिक एवं सांस्कृतिक संदर्भ में देखने का परिप्रेक्ष्य प्रदान करता है। यह समाजशास्त्र एवं राजनीति विज्ञान के मध्य दोतरफा संबंधों पर विश्वास करता है, जिसमें राजनीतिक एवं सामाजिक घटकों पर समान बल दिया जाता है।

4.2 राजनीतिक समजशास्त्र का उद्‌भव एवं विकास

एक स्वतंत्र एवं स्वायत अनुशासन के रूप राजनीतिक समाजशास्त्र का औपचारिक शुभारंभ एक नवीन प्रघटना है। यह संस्थागत एवं औपचारिक विषय के रूप में एक आधुनिक विज्ञान है। यद्यपि इसके उद्‌भव की कोई निश्चित अवधि बताना कठिन है फिर भी, इस शब्द का व्यापक प्रयोग मुख्यतः 20वीं शताब्दी में विशेषकर द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात ही किया जाने लगा। किंतु, इसका आशय यह नहीं लगाया जाना चाहिए कि इससे पूर्व राजनीतिक समाजशास्त्र के अध्ययन हुए ही नहीं। 18वीं एवं 19वीं सदी

में अनेक ऐसे अध्ययन हुए जो राजनीतिक समाजशास्त्र की वास्तविक विषय–वस्तु के अंतर्गत सम्मिलित हैं लेकिन, फर्क सिर्फ इतना है कि तब तक यह विषय विकसित नहीं हुआ था। वास्तव में राजनीतिक एवं सामाजिक घटनाओं एवं उनके पारस्परिक प्रभावों के व्यवस्थित अध्ययनों की एक लम्बी एवं प्राचीन परम्परा रही है। जी.डी. मिचेल के अनुसार, अरस्तु की पुस्तक 'पॉलिटिक्स' को हम राजनीतिक समाजशास्त्र पर प्रथम रचना कह सकते हैं। मॉण्टेस्क्यू, फर्ग्यूसन तथा ताकविल उन सभी तथ्यों का विवेचन करते रहे हैं, जिन्हें आज हम राजनीतिक समाजशास्त्र की विषय–वस्तु मानते हैं। इस दृष्टि से मैक्स वेबर एवं परेटो जैसे समाजशास्त्रियों के अध्ययन भी उल्लेखनीय हैं। कार्ल मार्क्स ने राजनीति की समाजार्थिक व्याख्या देकर इसकी नींव पुख्ता की। इटली में मोस्को एवं इंग्लैण्ड में ग्राहम वालास ने राजनीतिक अभिजनों तथा मतैक्य एवं विरोध की प्रक्रियाओं के बारे में समाजशास्त्रीय सिद्धांतों का प्रतिपादन करके राजनीतिक समाजशास्त्र की बौद्धिक नींव रखी।

लिपसेट एवं रूसीमैन ने राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव 19वीं शताब्दी के मध्य माना है जबकि आधुनिक समाज का उद्‌भव हो रहा था, इस काल में जहाँ एक ओर औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप यूरोप में परम्परागत सामाजिक व्यवस्था आधुनिक व्यवस्था में परिवर्तित हो रही थी, वहीं दूसरी ओर राज्य एवं समाज में भी अंतर स्पष्ट किया जाने लगा था। इस नयी प्रवृत्ति ने भी इस विषय के विकास में योगदान दिया। फिर भी, यह सच है कि राजनीतिक समाजशास्त्र की नींव 19वीं शताब्दी के मध्य में रखी गई। 20वीं सदी के प्रारंभ में मैक्स वेबर, रॉबर्ट मिचेल्स, मोस्को, परेटो तथा दुर्खीम जैसे विद्वानों ने इसकी नींव रखी और द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात इसे एक स्वतंत्र एवं स्वायत विषय का दर्जा प्रदान किया गया। वविस्कर के अनुसार, राजनीतिक समाजशास्त्र शब्द का सामान्य प्रचलन 1930–40 के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में हुआ, जबकि मिचेल के विचार में इसका सामान्य प्रचलन द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात ही शुरू हुआ।

4.3 राजनीतिक समाजशास्त्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

आधुनिक राजनीतिक समाजशास्त्र एक शताब्दी से भी अधिक समय से अस्तित्व में है। रोनाल्ड एच. चिलकोटे के अनुसार, प्रारंभिक समाजशास्त्रियों की रूचि अनुभवजन्य अनुसंधान एवं परीक्षण के आधार पर सामाजिक एवं राजनीतिक जीवन का तथ्यात्मक अध्ययन करने में थी। उनके अध्ययन–विषय अनौपचारिक संस्थाएँ एवं प्रक्रियाएँ (सामाजिक एवं राजनीतिक) थीं।

आइए, अब हम उस ऐतिहासिक संदर्भ पर नजर डालें जिसमें राजनीतिक समाजशास्त्र एक अन्तरानुशासनात्मक विषय के रूप में विकसित हुआ।

पोटर बैगनर ने आधुनिकता की वृद्ध प्रक्रिया के भीतर राजनीतिक समाजशास्त्र के इतिहास का रेखांकन किया है। उनका यह रेखांकन इस रूप में प्रासंगिक है कि यह हमें बौद्धिक एवं राजनीतिक संदर्भों में राजनीतिक समाजशास्त्रियों के कार्यों का पता लगाने की अनुमति प्रदान करता है। बैगनर ने इसके इतिहास के तीन चरणों का उल्लेख किया है जो निम्नांकित हैं :–

1. शास्त्रीय समाजशास्त्र एवं आधुनिकता का पहला संकट,
2. संगठित आधुनिकता एवं समाजशास्त्र का सुदृढ़ीकरण एवं
3. आधुनिकता का इसका संकट एवं समाजशास्त्र की संभावना पर नये सिरे से बहस।

पहला चरण उन लेखनों को राजनीतिक संदर्भों में रेखांकित करता है जिन्हें अब शास्त्रीय समाजशास्त्र के रूप में जाना जाता है। अमेरिकी एवं फ्रासीसी क्रांतियों के तुरंत बाद उदारवाद का दर्शन बौद्धिक बहसों पर हावी हो गया फिर भी, 19वीं शताब्दी के अंत तक उदारवाद का पतन होने लगा। इसने आधुनिकता का पहला संकट उत्पन्न किया। बैगनर के अनुसार, दूसरा चरण उदारवाद के पतन से प्रारंभ होता है जब समावेशी समाज का गठन करने वाले तत्वों का धीरे–धीरे क्षरण होने लगा।

तीसरा चरण 20 वीं सदी से प्रारंभ होता है जब मताधिकार के लिए संघर्ष एवं श्रमिक आंदोलनों की बढ़ती ताकत ने सामाजिक संरचना एवं पारंपरिक सामाजिक पहचान तक को बदल दिया। समाजशास्त्र, श्रम संघों एवं श्रमिक दलों की विचारधारा ने श्रमिक वर्ग की नई सामूहिक पहचान की धारणा को मजबूत किया। दुर्खीम, वेबर एवं परेटो की रचनाएँ बदलती सामाजिक पहचान एवं राजनीति के इसी नवीन संदर्भ में प्रस्तुत की गई।

व्यापक रूप से, राजनीतिक समाजशास्त्र के इतिहास एवं विकास को चार भागों में बांटा जा सकता है। पहला शास्त्रीय काल है। इसका अस्तित्व ग्रीक एवं रोमन काल के दौरान था जब मनुष्य को मुख्यतः एक राजनीतिक पशु समझा जाता था। बाद में पवित्र रोमन साम्राज्य के दौरान उन्हें धार्मिक भाषा में पुनर्परिभाषित किया गया और ईश्वर का अंश माना गया। प्लेटो, अरस्तु, सिसरो, सेंट ऑगस्ताइन और सेंट थॉमस एक्विनास जैसे राजनीतिक दार्शनिक शास्त्रीय काल के प्रतिनिधि हैं। प्लेटो ने अपनी प्रसिद्ध रचना 'रिपब्लिक' में यह विचार प्रस्तुत किया कि एक अच्छे शासक को अपनी सामाजिक परिस्थितियों से विमुख होकर एकान्तवाद ग्रहण करना चाहिए ताकि उसके उपर सामाजिक परिस्थितियों का प्रभाव नहीं पड़ सके। अरस्तु ने 'पॉलिटिक्स' में मनुष्य को एक राजनीतिक पशु बताया। प्लेटो एवं अरस्तु दोनों ने राज्य के सामाजिक आधारों को मान्यता प्रदान की थी किन्तु उन्होंने समाज एवं राज्य में कोई स्पष्ट विभेद नहीं किया तथा इनके अलग–अलग विशिष्ट अस्तित्व को भी स्वीकार नहीं किया।

दूसरा, पुनर्जागरण काल की अवधि है जिसमें पुनर्जागरण, धर्म सुधार एवं औद्योगिक क्रांति के परिणामस्वरूप राज्य एवं समाज के संबंध में दो विरोधी मान्यताएँ विद्यमान थी। पहली मान्यता के अनुसार समाज एवं राज्य में महत्त्वपूर्ण अंतर है। इसमें लॉक, माण्टेस्क्यू, रूसो थे और बाद में सेंट–साइमन, कॉम्टे और कार्ल मार्क्स शामिल थे। दूसरी मान्यता वाले समाज एवं राजनीति में भेद नहीं करते थे एवं पारंपरिक राजतंत्र एवं चर्च के आधिपत्य एवं वैधता के पक्षधर थे। इसमें मैकियावली, हॉब्स, बर्क, हीगल, बोनाल्ड, आदि दार्शनिक शामिल थे।

प्लेटो एवं अरस्तु के विचार मध्य काल तक लुप्त हो गये। मैकियावली ने आगे चलकर राजनीतिक चरों को अधिक महत्त्व दिया तथा समाज के राजनीतिक एवं आर्थिक कार्यों के मध्य पृथक्करण पर जोर दिया एवं राजनीतिक सता के नियंत्रण से आर्थिक सत्ता को मुक्ति दिलाने का प्रयास किया। मॉण्टेस्क्यू प्रथम राजनीतिक चिंतक था जिसने राजनीतिक समस्याओं का समाजशास्त्रीय ढंग से अध्ययन किया एवं बताया कि सामाजिक परिस्थितियों के आधार पर राजनीतिशास्त्र के नियमों का निर्धारण होना चाहिए। मार्क्स के आर्थिक निर्धारणवाद, वर्ग–संघर्ष, द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद, सामाजिक वर्ग एवं अलगाव के सिद्धांतों से राजनैतिक सिद्धातों का विकास हुआ।

तीसरा काल, आधुनिक काल से संबंधित है, जो 19वीं शताब्दी से प्रारंभ होता है। इस काल में समाज में एक नये वर्ग अभिजात वर्ग का विकसित रूप देखने को मिलता है। इसका व्यापक प्रयोग इटली के समाजविदों मोस्को एवं परेटो द्वारा विशेष रूप से किया गया। इनका मानना है कि सम्पूर्ण इतिहास में समाज में हमेशा अल्पसंख्यक शासकों का एक अलग स्थान रहा है और महत्त्वपूर्ण संसाधनों पर एकाधिकार के कारण यह वर्ग प्रभावी संगठन और नियंत्रण रखने में सक्षम थे। ये संसाधन सैन्य बल, धार्मिक शासन, आर्थिक वर्चस्व या राजनीतिक शक्ति थे। अगस्त कॉम्टे ने सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक चरों को घनिष्ठ बताया एवं सम्पूर्ण समाज के समग्र अध्ययन पर जोर दिया। मैक्स वेबर ने स्तरीकरण, नौकरशाही, सत्ता, धर्म, आदि का अध्ययन किया। टॉलकट पारसन्स ने व्यवस्था विश्लेषण का मॉडल प्रस्तुत किया।

चौथा, समकालीन काल है। यह काल अधिक वस्तुनिष्ठ एवं विश्लेषणात्मक है। विकास के प्रमुख सिद्धांतों के निर्माण के साथ–साथ यह समाज एवं राजनीति से संबंधित वस्तुनिष्ठ प्रामाणिक सामान्यीकरण पर बल देता है। इसके प्रमुख विचारकों में लिपसेट, ग्रीर, इंकल्स, मूर, मिल्स, हंटर, जानो विट्ज, लेजरफील्ड, गुसफील्ड एवं मैक्रे जैसे प्रमुख राजनीतिक समाजशास्त्री हैं। इन्होने इसे एक परिपक्व अनुशासन के रूप में आगे बढ़ाया है। 1950 एवं 1970 के दशक के कई ऐतिहासिक कार्य वर्ग, धर्म, नस्ल/जातीयता के प्रभाव जैसे, व्यक्ति एवं समूह आधारित राजनीतिक व्यवहार पर शिक्षा के प्रभाव जैसे

सूक्ष्म प्रश्नों पर केंद्रित थे। 1970 के दशक में राज्य के विकास में व्यापक स्तर पर तुलनात्मक ऐतिहासिक अध्ययनों जैसे बृहत विषयों की ओर राजनीतिक समाजशास्त्री उन्मुख हुए।

उपर्युक्त चर्चाओं से यह स्पष्ट होता है कि राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं विकास किन्हीं सैद्धांतिक सूत्रीकरणों के माध्यम से नहीं हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से ही पश्चात्य और विशेषकर अमरीकी विद्वानों में राजनीतिक घटनाओं पर समाजशास्त्रीय ढंग से अनुभवाश्रित शोध करने की प्रवृत्ति बढती गई। युद्ध के पश्चात एशिया एवं अफ्रीका में अनेक नये राष्ट्रों का विकास हुआ। इनके विकास एवं समस्याओं के अध्ययन हेतु एक समन्वयकारी अनुशासन की आवश्यकता महसूस हुई। परिणामस्वरूप राजनीतिक समाजशास्त्र का विकास हुआ।

4.4 राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव के कारण

19वीं शताब्दी में राज्य एवं समाज के पारस्परिक संबंधों पर बौद्धिक बहस प्रारंभ हुई तथा 20वीं शताब्दी में विशेषकर, द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात सामाजिक विज्ञानों में विभिन्नीकरण और विशिष्टीकरण की उदित प्रवृत्ति तथा राजनीतिशास्त्र में व्यवहारवाद एवं अंतःअनुशासनात्मक उपागम के बढते महत्त्व के परिणामस्वरूप पश्चिमी विद्वानों में राजनीतिशास्त्र के समाजोन्मुख अध्ययन की नवीन प्रवृत्ति शुरू हुई। इसके परिणामस्वरूप राजनीतिक समस्याओं की समाजशास्त्रीय खोज एवं जाँच की जाने लगी। ये खोजें एवं जाँच न तो पूर्ण रूप से समाजशास्त्रीय थी और न पूर्णतः राजनीतिक। अतः ऐसे अध्ययनों को राजनीतिक समाजशास्त्र के अंतर्गत रखा जाने लगा।

एक स्वायत्त अनुशासन के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं विकास कोई अप्रत्याशित प्रघटना नहीं है। अपितु अनेकानेक कारकों ने इसके उद्‌भव में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है, जिसमें से कतिपय प्रमुख इस प्रकार हैं :–

4.4.1 राज्य एवं समाज में पारस्परिक घनिष्ठता

लिपसेट, रूसीमैन, मैकी, डाउसे एवं ह्यूज जैसे विद्वान राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव एवं विकास में राज्य एवं समाज के आपसी संबंधों के वाद–विवाद को सर्वपथम कारण मानते हैं। 19वीं शताब्दी तक दोनों के मध्य अंतर और स्पष्ट हो चुका था, किन्तु 20वीं शताब्दी के तृतीय दशक से इस दृष्टिकोण में परिवर्तन आया। अब अधिकांश विद्वान यह स्वीकार करते हैं कि राज्य एवं समाज दोनों में घनिष्ठ संबंध होता है। हॉब्स, लॉक एवं रूसो ने राज्य एवं समाज में अंतर की समस्या को कम करने का प्रयास किया। आज राजनीतिक समाजशास्त्रियों की यह मान्यता है कि राज्य अनेक राजनीतिक संस्थाओं में से एक है और

राजनीतिक संस्थाएँ सामाजिक संस्थाओं के गुच्छे की ही एक कड़ी है। इस संबंध में लिपसेट ने ठीक ही कहा है कि ''गलती राज्य एवं समाज को दो स्वतंत्र सत्ताएँ (जीव) मानने की है तथा यह नहीं पूछा जाना चाहिए कि दोनों में कौन–सा अधिक महत्त्वपूर्ण है अथवा किसे अधिक प्राथमिकता दी जानी चाहिए।''

4.4.2 राजनीतिशास्त्र के परम्परागत दृष्टिकोण के प्रति असंतोषः

राजनीतिक समाजशास्त्र के विकास में राजनीतिशास्त्र के परम्परागत उपागमों के प्रति घोर असंतोष ने भी महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाई है। परम्परागत उपागम सिर्फ राजनीतिक संस्थाओं अर्थात् राज्य एवं सरकार के अध्ययन तक ही स्वयं को सीमित रखते थे। इनका झुकाव आदर्शात्मक या संस्थागत अध्ययनों के प्रति अधिक था, जिनसे वास्तविक राजनीतिक प्रक्रियाओं, स्थितियों व निर्णयन–कार्य प्रक्रिया की जानकारी नहीं मिलती थी। आमण्ड, लासवेल, इस्टन, दहल आदि जैसे विद्वान इससे असंतुष्ट थे और यह मानते थे कि राजनीतिक वास्तविकता को नवीन प्रत्यक्षवादी, आनुभाविक एवं वस्तुनिष्ठ पद्धतियों की सहायता से समझा जा सकता है। व्यवहारवादी आन्दोलन से प्रेरित इन विद्वानों ने मतदान व्यवहार, राजनीतिक दलों, अभिजनों, राजनीतिक मनोवृत्तियों एवं विचारों का समाजशास्त्रीय पद्धति द्वारा अध्ययन प्रारंभ किये। इन सभी अध्ययनों ने, जो न तो पूर्णरूप से राजनीतिशास्त्रीय थे और न ही समाजशास्त्रीय, राजनीतिक समाजशास्त्र के विकास में महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है।

4.4.3 राजनीतिशास्त्र में समाजशास्त्र का अंतःप्रवेशः

20वीं सदी के आरम्भिक वर्षों में कैटलिन जैसे आधुनिक विद्वान ने राजनीतिशास्त्र के क्षेत्र को एक ऐसा व्यापक आयाम देने का प्रयास किया है जिसमें राज्य के साथ–साथ समाज का भी समावेश हो सके। इस काल में राजनीतिशास्त्र पर समाजशास्त्र का प्रभाव इतना अधिक था कि कैटलिन को 1927 ई. में यह चेतावनी देनी पड़ी कि राजनीतिशास्त्र समाजशास्त्र की एक शाखा बनने जा रहा है। सार्तोरी एवं मुखोपाध्याय का मानना है कि राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव तभी होता है जबकि राजनीतिक एवं समाजशास्त्रीय उपागमों को प्रतिच्छेद के बिंदु पर मिला दिया जाता है।

4.4.4 सामाजिक विज्ञानों में अंतःअनुशासनात्मक अध्ययन की बढ़ती प्रवृत्तिः

परम्परागत राजनीतिशास्त्र का क्षेत्र मात्र राज्य, सरकार एवं राजनीतिक क्रियाओं–प्रक्रियाओं के पृथक अध्ययन तक ही सीमित था। परन्तु 20वीं शताब्दी के मध्य में, विशेष रूप से द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद सामाजिक विज्ञानों में विभिन्नीकरण एवं विशिष्टीकरण प्रारंभ हुआ। परिणामस्वरूप, इनमें विभाजन स्पष्ट होने लगा जिससे सामाजिक विज्ञानों का वैज्ञानिक विकास हुआ। विभिन्नीकरण एवं विशिष्टीकरण के परिणामस्वरूप केवल राजनीतिशास्त्र एवं समाजशास्त्र ही एक–दूसरे से पृथक नहीं हुए बल्कि राजनीतिक

समाजशास्त्र जैसे कुछ नवीन विषयों का भी विकास हुआ। परन्तु वर्तमान में, राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव के पश्चात इन दोनों विषयों में विभिन्नीकरण समाप्त होता जा रहा है तथा तमाम अध्ययनों में अंतःशास्त्रीय उपागम भी अपनाया जाने लगा है। वास्तव में, अंतःशास्त्रीय उपागम ने परम्परागत विज्ञानों को एक–दूसरे पर अधिक निर्भर बना दिया है।

4.4.5. सरकार एवं सामाजिक–राजनीतिक समस्याओं के अध्ययन का बढ़ता महत्त्वः

पोपीनों के अनुसार सरकार की बढ़ती हुई महत्ता के कारण ही इस नवीन विषय का विकास हुआ है, जिसमें सामाजिक संरचना एवं राजनीतिक संस्थाओं के पारस्परिक संबंधों पर अधिक ध्यान दिया जाता है। आधुनिक समाजों में सरकार पर समाज को निर्देशित एवं नियंत्रित करने का उत्तदायित्व कहीं अधिक है। अतएव सरकार का महत्त्व भी बढ़ गया है। 20वीं सदी से ही तीव्र औद्योगीकरण एवं नगरीकरण के परिणामस्वरूप अनेक सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक परिवर्तन हुए एवं साथ ही विविध समस्याओं का भी विकास हुआ जिनका वैज्ञानिक एवं वस्तुनिष्ठ अध्ययन करने के लिए राजनीतिक समाजशास्त्र का विकास हुआ है।

4.5 राजनीतिक समाजशास्त्र का महत्त्व

यह सर्वविदित तथ्य है कि आधुनिक समाज में कोई भी सामाजिक विज्ञान राजनीतिक एवं सामाजिक संस्थाओं का पृथक इकाई के रूप में संपूर्ण अध्ययन नहीं कर सकता है। इसलिए मौजूदा सामाजिक–राजनीतिक संस्थाओं को समग्रता में समझना केवल राजनीतिक समाजशास्त्र के माध्यम से हीं संभव है। इस रूप में, राजनीतिक समाजशास्त्र की प्रासंगिकता आज कहीं अधिक बढ़ गई है। समाजशास्त्र के एक उपक्षेत्र के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र का महत्त्व यह है कि यह राजनीति की यांत्रिकी की तुलना में सामाजिक शक्तियों एवं निर्धारकों पर ध्यान केंद्रित करता है। राजनीतिक समाजशास्त्र मुख्य रूप से राजनीतिक का चार स्तरों पर अध्ययन करता हैः राष्ट्रों के मध्य राजनीतिक संघर्ष एवं तनाव अर्थात्, अंतर्राष्ट्रीय संबंधों का समाजशास्त्र, विविध समाजों में राज्य की प्रकृति एवं उसकी भूमिका, राजनीतिक दलों एवं आन्दोलनों की प्रकृति एवं संगठन, एवं राजनीति में जनसहभागिता।

संक्षेप में, एक विज्ञान के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र के महत्त्व को निम्नांकित बिंदुओं में स्पष्ट किया जा सकता हैः

1. एक वैज्ञानिक अनुशासन के रूप में राजनीतिक समाजशास्त्र, ज्ञान की अन्य शाखाओं की तरह ही मूल्यवान है। यह अपने अध्ययन में वैज्ञानिक अनुसंधान का प्रयोग करता है और राजनीतिक समस्याओं के समाधान का प्रयास करता है।

2. विविध सिद्धांतों एवं सामान्यीकरणों को समाहित करने वाले विज्ञान के रूप में भी इसकी महत्ता है। उदाहरणस्वरूप, यह उन स्थितियों की खोज करता है जिसमें राजनीति में शक्ति का उपयोग किया जाता है। यह कई सिद्धांत प्रस्तुत करता है जिससे हम राजनीतिक व्यवहार, मतदान एवं चुनाव प्रक्रिया को वास्तविक रूप में समझ सकते हैं।

3. यह विभिन्न राष्ट्रों के सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक जीवन में एकरूपता एवं मानदण्डों, आदि की खोज करने के लिए सतत सक्रिय प्रयास कर रहा है। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद के वर्षों में भारत सहित एशिया एवं अफ्रीका के अनेक देशों में लोकतांत्रिक राजनीति, विभिन्न समूहों, वर्गों, जातियों आदि के अध्ययन एवं अवलोकन में इसकी भूमिका सराहनीय रही है।

4. राजनीतिक समाजशास्त्र आधुनिक संस्थाओं जैसे–नौकरशाही, राजनीतिक दल, मतदान, प्रचार, आदि का वस्तुनिष्ठ अध्ययन समाजशास्त्रीय परिप्रेक्ष्य में करता है जो आधुनिक जनसामान्य के जीवन के रोजमर्रा के मुद्दे हैं।

5. यह राजनीतिक सहभागिता एवं राजनीतिक व्यवहार के विविध प्रवृत्तियों एवं आयामों, जिसमें असहभागिता भी सम्मिलित है, आदि का अनुभवजन्य अनुसंधान करता है।

6. यह समाज में शक्ति एवं प्रभुत्व, राजनीतिक अभिजनों एवं जनसामान्य के संबंधों के साथ–साथ इस तथ्य का भी अध्ययन करता है कि शासक वर्ग किस प्रकार आधुनिक समाज को नियंत्रित एवं निर्देशित करते हैं। इससे समाज में नेतृत्व एवं शक्ति संरचना व प्रभुत्व परिवर्तन के विश्लेषण में सहायता मिलती है।

7. राजनीतिक समाजशास्त्र सर्वेक्षण विधियों द्वारा तुलनात्मक विश्लेषण करता है जिससे अंतर–राष्ट्रीय, अंतर–सांस्कृतिक एवं अंतर–सामाजिक अनुसंधान को बढ़ावा मिला है।

8. राजनीतिक समाजशास्त्र ने ही राजनीतिक सिद्धांतों के क्षेत्र मे व्यवहारवादी उपागम का विकास किया जो व्यक्ति को ही समस्त राजनीतिक विश्लेषण की आधारभूत इकाई मानकर चलती है, तथ्यों को मूल्यों से अलग कर उनका वस्तुनिष्ठ अवलोकन को महत्त्वपूर्ण मानती है तथा ऐसे सामान्यीकरण की प्रेरणा देती है जिनका परीक्षण किया जा सके।

9. राजनीतिक समाजशास्त्र मनुष्य का सामाजिक–राजनीतिक प्राणी के रूप में अध्ययन करता है। यह राजनीतिक व्यवहार को मानव व्यवहार का सिर्फ एक पहलू मानता है जो सामाजिक व्यवहार, आर्थिक कल्याण, नैतिकता एवं विशेष रूप से सामाजिक संबंधों व अंतःक्रियाओं की प्रणाली से निश्चित रूप से सर्वाधिक प्रभावित होता है। मनुष्य अपने सभी प्रारंभिक मूल्य एवं व्यवहार–प्रतिमान परिवार एवं अन्य प्राथमिक समूहों से ही प्राप्त करता है। यही उसके राजनीतिक व्यवहार एवं संबंधों के लिए जड़ प्रदान करता है। इसलिए, मानव के राजनीतिक व्यवहार का अध्ययन उसके सामाजिक संदर्भ में ही व्यवस्थित रूप से किया जा सकता है। इस आवश्यकता को राजनीतिक समाजशास्त्र ही पूरा करता है।

4.6 भारत में राजनीतिक समाजशास्त्र

भारत में राजनीतिक समाजशास्त्र को अभी तक एक स्वतंत्र एवं स्वायत्त विषय के रूप में स्वीकार नहीं किया गया है। यहाँ आज भी इसे राजनीतिशास्त्र एवं समाजशास्त्र के पाठ्यक्रम में ही पढ़ाया जाता है। भारत में, यद्यपि इसकी शुरूआत के0 राघवन की पुस्तक 'होम रूल एण्ड कास्ट' (1917) से हो गई थी, किन्तु फिर भी समाजवैज्ञानिकों ने 1950 ई0 के बाद ही इस विषय में रूचि दिखायी। भारत में अभी तक इस क्षेत्र में जितने भी कार्य हुए हैं वे अधिकांशतः समाजशास्त्रियों द्वारा ही किये गये हैं। प्रमुख अध्ययनों में आंद्रे बेतेई का जाति, वर्ग एवं शक्ति का अध्ययन, एम.एन. श्रीनिवास, रजनी कोठारी, एफ.जी.बेली, योगेश अटल, आदि द्वारा राजनीति में जाति की भूमिका का अध्ययन, ए.आर. देसाई के भारतीय राष्ट्रवाद का सामाजिक चरित्र संबंधी अध्ययन एवं योगेन्द्र सिंह के राजनीतिक आधुनिकीकरण के अध्ययन को सम्मिलित किया जा सकता है।

4.7 सारांश

एक स्वतंत्र एवं स्वायत अनुशासन के रूप राजनीतिक समाजशास्त्र का औपचारिक शुभारंभ एक नवीन प्रघटना है। यह संस्थागत एवं औपचारिक विषय के रूप में एक आधुनिक विज्ञान है। यद्यपि इसके उद्भव की कोई निश्चित अवधि बताना कठिन है फिर भी, इस शब्द का व्यापक प्रयोग मुख्यतः 20वीं शताब्दी में विशेषकर द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात ही किया जाने लगा। किंतु, इसका आशय यह नहीं लगाया जाना चाहिए कि इससे पूर्व राजनीतिक समाजशास्त्र के अध्ययन हुए ही नहीं। 18वीं एवं 19वीं सदी में अनेक ऐसे अध्ययन हुए जो राजनीतिक समाजशास्त्र की वास्तविक विषय–वस्तु के अंतर्गत सम्मिलित हैं लेकिन, फर्क सिर्फ इतना है कि तबतक यह विषय विकसित नहीं हुआ था। वास्तव में राजनीतिक एवं सामाजिक घटनाओं एवं उनके पारस्परिक प्रभावों के व्यवस्थित अध्ययनों की एक लम्बी एवं प्राचीन परम्परा रही है। जी.डी.

मिचेल के अनुसार, अरस्तु की पुस्तक 'पॉलिटिक्स' को हम राजनीतिक समाजशास्त्र पर प्रथम रचना कह सकते हैं।

20वीं सदी के प्रारंभ में मैक्स वेबर, रॉबर्ट मिचेल्स, मोस्को, परेटो तथा दुर्खीम जैसे विद्वानों ने इसकी नींव रखी और द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात इसे एक स्वतंत्र एवं स्वायत विषय का दर्जा प्रदान किया गया। वविस्कर के अनुसार, राजनीतिक समाजशास्त्र शब्द का सामान्य प्रचलन 1930–40 के दशक के प्रारम्भिक वर्षों में हुआ, जबकि मिचेल के विचार में इसका सामान्य प्रचलन द्वितीय विश्वयुद्ध के पश्चात ही शुरू हुआ।

उपर्युक्त चर्चाओं से यह स्पष्ट होता है कि राजनीतिक समाजशास्त्र का उद्‌भव एवं विकास किन्हीं सैद्धांतिक सूत्रीकरणों के माध्यम से नहीं हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद से ही पश्चात्य और विशेषकर अमरीकी विद्वानों में राजनीतिक घटनाओं पर समाजशास्त्रीय ढंग से अनुभवाश्रित शोध करने की प्रवृत्ति बढती गई। युद्ध के पश्चात एशिया एवं अफ्रीका में अनेक नये राष्ट्रों का विकास हुआ। इनके विकास एवं समस्याओं के अध्ययन हेतु एक समन्वयकारी अनुशासन की आवश्यकता महसूस हुई। परिणामस्वरूप राजनीतिक समाजशास्त्र का विकास हुआ।

4.8 शब्दावली

अभिजन (Elite):– किसी समाज का अत्यंत छोटा–सा, सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त वर्ग जो अपने विषिष्ट सामाजिक, राजनीतिक, षैक्षणिक और आर्थिक कार्यों में विषिष्ट योग्यता के कारण अपने कार्य–क्षेत्र में प्रभावक एवं निर्णायक भूमिका अदा करते हैं।

आनुभाविक अनुसंधान (Empirical Research):– अनुसंधान का वह स्वरूप जिसमें घटनाओं की व्याख्या के लिए इन्द्रियरक अनुभव, क्षेत्र–कार्य, अवलोकन, प्रयोग एवं परीक्षण द्वारा तथ्य–संकलन एवं अनुसंधान किया जाता है।

आधुनिकता (Modernity):– बुद्धिवाद एवं तर्कवाद पर आधारित सोचने–समझने एवं व्यवहार करने के ऐसे तौर–तरीके जिसमें प्रगति की आकांक्षा, विकास की आषा और परिवर्तन के अनुरूप अपने–आप को ढालने का भाव निहित होता है।

समावेषी समाज (Inclusive Society):– एक ऐसा समाज जिसमें जाति, लिंग, प्रजाति, वर्ग, धर्म पर आधारित किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता है एवं सभी को विकास की प्रक्रिया में समान अवसर प्रदान किया जाता है।

4.9 बोध प्रश्नों

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव के कारणों की व्याख्या कीजिए। अपना उत्तर लगभग 10 पंक्तियों में दें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

2. राजनीतिक समाजशास्त्र के महत्व की व्याख्या कीजिए। अपना उत्तर लगभग 5 पंक्तियों में दें।

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

.....

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. राजनीतिक समाजशास्त्र की ऐतिहासिक पृष्ठभूमि की व्याख्या कीजिये।
2. राजनीतिक समाजशास्त्र के उद्‌भव के कारक की व्याख्या कीजिये।
3. राज्य एवं समाज में पारस्परिक घनिष्ठता को स्पस्ट कीजिये।
4. राजनीतिशास्त्र के परम्परागत दृष्टिकोण के प्रति आप का क्या विचार है स्पस्ट कीजिये।
5. सामाजिक विज्ञानों में अंतःअनुशासनात्मक अध्ययन की बढ़ती प्रवृत्तिः का आध्यान कीजिये।
6. सरकार एवं सामाजिक–राजनीतिक समस्याओं के अध्ययन का बढ़ता महत्त्व को स्पस्ट कीजिये।

4.10 संदर्भ ग्रन्थ सूची

- इर्विंग लुईस होरोविट्‌ज, ''फाउंडेषन ऑफ पॉलिटिकल सोसियोलॉजी'': हार्पर एण्ड रो पब्लिषर्स, न्यूयार्क, 1972।
- डब्ल्यू. जी. रूंसीमैन, ''सोशल साइंसेज एण्ड पॉलिटिकल थ्योरी'', कैम्ब्रिज यूनिवर्सिटी प्रेस, कैम्ब्रिज, 1963।
- डॉ. धर्मवीर, राजनीतिक समाजशास्त्र, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी, जयपुर 1983।

इकाई 5 : राजनीतिक व्यवस्था रूपरिभाषा एवं विशेषताएँ

इकाई की रूपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 राजनीतिक व्यवस्था का अर्थ

5.3 राजनीतिक व्यवस्था की परिभाषा

5.4 राजनीतिक व्यवस्था का कार्यात्मक ढांचा

5.5 राजनैतिक व्यवस्था की विशेषताएँ

5.6 राजनीतिक व्यवस्था के आधारभूत लक्षण

5.7 राजनैतिक व्यवस्था व समाज में अंत संबन्ध

5.8 सारांश

5.9 बोध प्रश्न

5.10 सन्दर्भ सूची

5.0 उद्देश्य

इकाई के अध्ययन उपरान्त आप जान सकेंगे।

- राजनीतिक व्यवस्था का अर्थ एंव परिभाषा को आप जानेंगे।
- राजनैतिक व्यवस्था की विशेषताएँ को आप जानेंगे।
- राजनीतिक व्यवस्था के आधारभूत लक्षण को समझेगें।
- राजनैतिक व्यवस्था व समाज में अंत संबन्ध को आप जान सकेंगे।

5.1 प्रस्तावना

राजनीति हमारे सामाजिक जीवन की बुनियादी गतिविधि है। अतः इस प्रक्रिया के अंतर्गत समुदाय के सारे सदस्यों के ऊपर सत्ता का प्रयोग किया जाता है। सबके लिए नियम बनाए जाते हैं, निर्णय किए जाते हैं, सबके अधिकार, कर्तव्य और दायित्व निर्धारित किए जाते हैं। सार्वजनिक जीवन को व्यवस्थित तथा उन्नत करने की युक्तियां निकाली जाती हैं। ये सब नियम और निर्णय हम सबके जीवन को दूर–दूर तक प्रभावित करते हैं। सार्वजनिक निर्णयों तक पहुँचने के लिए कई तरह की संस्थाएं स्थापित की जाती हैं, तरह–तरह के व्यवहार के प्रतिमान सामने आ जाते हैं। जब हम राजनीति की समस्याओं को समझने और सुलझाने के उद्देश्य से इन सब तत्वों की पहचान करते हैं और इनके परस्पर संबंधों का पता लगाते हैं तब हमारे इस प्रयत्न को राजनीतिक विश्लेषण की सज्ञा दी जाती है।

वर्तमान में सबसे अधिक प्रचलित एवं विश्वसनीय लोकतंत्र को माना जाता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था को कार्यपालिका और विधायिका के संबंधों के आधार पर दो प्रकारों में विभाजित किया जाता है प्रथम संसदीय व्यवस्था (Parliamentary System) और द्वितीय अध्यक्षात्मक व्यवस्था (Presidential System)। सरकार की उस व्यवस्था को संसदीय व्यवस्था कहते हैं जिसमें कार्यपालिका अपनी नीतियों एवं कार्यों के लिए विधायिका के प्रति उत्तरदाई होती है। दूसरी ओर, राष्ट्रपति शासन व्यवस्था में कार्यपालिका अपनी नीतियों एवं कार्यों के लिए विधायिका के प्रति उत्तरदाई नहीं होती है। यह विधायिका से स्वतंत्र होती है। इस व्यवस्था को गैर–संसदीय, गैर–उत्तरदायी या निश्चित कार्यकारी व्यवस्था जैसे नामों से भी जाना जाता है। संसदीय सरकार को उत्तरदायी सरकार, कैबिनेट सरकार, सरकार का स्वरूप इत्यादि भी कहा जाता है तथा यह भारत, ब्रिटेन, जापान, कनाडा आदि देशों में प्रचलित है। जेनिंग्स ने संसदीय व्यवस्था को कैबिनेट

व्यवस्था की संज्ञा दी है क्योंकि इस व्यवस्था में शक्ति का केंद्र बिंदु कैबिनेट ही होता है। संसदीय व्यवस्था का जनक ब्रिटेन को माना जाता है।

5.2 राजनीतिक व्यवस्था का अर्थ

राजनीतिक व्यवस्था क्या है? दुनिया भर में अलग–अलग सरकारें और राज्य अपने–अपने लोगों के लिए राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक मामलों का प्रबंधन करती हैं। सरकार अपने क्षेत्रों में कानून और व्यवस्था बनाए रखने के लिए ऐसा करती है। कानून और व्यवस्था के बिना अराजकता और संघर्ष उभरने की संभावना है, जिससे किसी भी सरकार के लिए प्रभावी ढंग से शासन करना बहुत मुश्किल हो जाता है। सरकार प्रभावी और सुचारू रूप से चलने को सुनिश्चित करने के लिए राजनीतिक व्यवस्थाएं स्थापित की जाती हैं। इसलिए, राजनीतिक व्यवस्था की परिभाषा राजनीतिक रूप से स्थापित विभिन्न संस्थानों का एक समूह है, जो किसी दिए गए समाज के भीतर संसाधनों के स्वतंत्र और निष्पक्ष वितरण को सुनिश्चित करता है। राजनीतिक संरचना क्या है? कोई भी सरकार अलग–अलग होकर काम नहीं करती है। सरकारें अपने मामलों के प्रबंधन में सहायता के लिए न्यायपालिका, संसद और अन्य महत्वपूर्ण अंगों जैसी कई संस्थाएँ बनाती हैं। प्रत्येक संस्था की अलग भूमिका होती है। इसलिए, राजनीतिक संरचना की परिभाषा इन विभिन्न संस्थाओं के कार्य संबंध और सरकार के उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए वे किस तरह आपस में मिलते हैं।

राजनीतिक व्यवस्था उपागम, जिसे निवेश–निर्गत विश्लेषण के नाम से जाना जाता है, तुलनात्मक राजीतिक विश्लेषण का एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण है तुलनात्मक राजनीति में, 'राजनीतिक व्यवस्था उपागम' 'राजनीतिक व्यवस्था' की नई अवधारणा या प्रत्यय पर आधारित दृष्टिकोण है। राज्य के परम्परागत संकल्पना के अन्तर्गत केवल राजनीति के औपचारिक एवं संस्थात्मक ढाँचे पर ध्यान केंद्रित किया जाता था। राजनीतिक दल, दबाव समूह, कबीले, जाति समुदायों, संगठनों आदि अनौपचारिक, किन्तु महत्वपूर्ण ऐजेसियों की घोर उपेक्षा पारम्परिक संकल्पना में देखने को मिलते हैं, परन्तु राजनीतिक प्रणाली की संकल्पना राजनीति को एक प्रक्रिया के रूप में समझने का प्रयास है। आज व्यक्तियां के राजनीतिक जीवन को निर्धारित करना ही नहीं, वरन इसके निर्धारण में शासन के अतिरिक्त राजनीतिक क्षेत्रा में सक्रिय कुछ अन्य तत्वों और समुदायों एवं संगठनों के द्वारा भी भाग लिया जाता है और इन सभी को सामूहिक रूप में 'राजनीतिक व्यवस्था' कहा जा सकता है। राजनीतिक व्यवस्था की अवधारणा का अर्थ समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम सर्वप्रथम व्यवस्था' शब्द का अर्थ समझ लें, क्यांकि 'व्यवस्था' की अवधारणा पर ही 'राजनीतिक व्यवस्था' की धारणा आधारित है। व्यवस्था की संकल्पना एक विश्लेषणात्मक संकल्पना है। उल्लेखनीय है कि, 'व्यवस्था' शब्द का सर्वप्रथम प्रयोग प्रसिद्ध जीव विज्ञान शास्त्री लुडविग वॉन बर्टलान्फ़ी

ने किया। अर्थात् मूलतः 'व्यवस्था' शब्द विज्ञान की शब्दावली है जो बाद में विभिन्न समाज विज्ञानों; मर्टन और पारसन्स के द्वारा राजनीति विज्ञान का प्रमुख आधार बन गया।

राजनीतिक व्यवस्थाएँ कुछ उद्देश्यों के साथ बनाई जाती हैं, जैसे यह निर्धारित करना कि नेता कौन होंगे, उनकी भूमिकाएँ और महत्वपूर्ण ज़िम्मेदारियाँ क्या होंगी। राजनीतिक व्यवस्था की एक प्रमुख विशेषता यह है कि इसे अपने नागरिकों को नियंत्रित करने और उनके मामलों को चलाने के लिए वैध बल का उपयोग करने का एकाधिकार प्राप्त है। इसके पास ऐसी नीतियों को प्रस्तावित करने और लागू करने की शक्ति भी है जो इसके लोगों के लिए फायदेमंद हों। समाज के भीतर राजनीतिक व्यवस्थाएँ महत्वपूर्ण हैं, क्योंकि वे स्वास्थ्य और शिक्षा नीतियों जैसी नीतियों को लागू करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। यह सुनिश्चित करना कि समाज सद्भाव और शांति से रहे, और देश को आतंकवादियों जैसे बाहरी खतरों से बचाएं जा सके।

5.3 राजनीतिक व्यवस्था की परिभाषा

यह आधिकारिक सरकारी निर्णय लेने की प्रक्रिया को परिभाषित करता है। इसमें आमतौर पर सरकारी कानूनी और आर्थिक प्रणाली,सामाजिक और सांस्कृतिक प्रणाली, और अन्य राज्य और सरकार विशिष्ट प्रणालियाँ शामिल होती हैं। व्यवस्था' शब्द की परिभाषा विभिन्न प्रकार से की गई है।

लुडविग वॉन बर्टलान्फ़ी Ludwig von Bertalanffy के अनुसार ''व्यवस्था अंतःक्रियाशील तत्वों का समूह है।''

कॉलिन चेरी के शब्दों में ''व्यवस्था एक समग्रता है,जो कई भागों से बनी हुई है। इसे दृष्टिकोण के समग्र प्रभाव के रूप में व्यक्त किया गया है।''

हॉल एवं फैगन के मत में ''व्यवस्था वस्तुओं के परस्पर तथा वस्तुओं और उनके लक्षणों के बीच संबंधों सहित वस्तुओं का समूह है।''

राबर्ट डहल के अनुसार ''राजनीतिक व्यवस्था मानव संबंधों का वह स्थायी स्वरूप है, जिसके अन्तर्गत 'शक्ति', 'नियम' और 'सत्ता' महत्वपूर्ण मात्रा में निहित हो।''

डेविड ईस्टन के अनुसार ''राजनीतिक व्यवस्था किसी समाज के अन्तर्गत उन अंतः क्रियाओं की व्यवस्था को कहते हैं, जिसके माध्यम से अनिवार्य अधिकारिक आबंटन किए जाते हैं, 'चूँकि समाज में सामाजिक संसाधनों की कमी है। अतः राजनीतिक व्यवस्था का संबंध 'सामाजिक मूल्यों के आधिकारिक आवंटन से है।''

इन परिभाषाओं के आधार पर हम कह सकते हैं कि, 'व्यवस्था' एक विशिष्ट संरचानात्मक संबंधों और निश्चित प्रक्रियाओं के आधार पर एक–दूसरे के साथ सब रहती है।

सामान्य अर्थों में, राजनीतिक व्यवस्था का तात्पर्य राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न तत्वो मे या भागों में सुव्यवस्था से लिया जाता है। इस सुव्यवस्था से यह अर्थ लिया जाता है कि, राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न अंगों में प्रतिमानित संबंधों में एक नियमितता विद्यमान रहती है। राजनीतिक व्यवस्था में कोई स्वतंत्रता ईकाई नहीं होती है। समाज व्यवस्था की अनेकों उप–व्यवस्थाओ में एक उप–व्यवस्था, राजनीतिक व्यवस्था की है, जो अन्य सभी उप–व्यवस्थाओं और आर्थिक, सांस्कृतिक और धार्मिक से भिन्न प्रकार की ही नहीं, अपितु उन सबसे इस बात में विचित्रा है कि, यह सब उप–व्यवस्थाओं और सामाजिक व्यवस्था से पारस्परिकता रखते हुए, अन्तः क्रियाशील रहते हुए भी बहुत अधिक मात्रा में स्वायत्तता रखती है । यह उन सब व्यवस्थाओं को आदेश ही नहीं देती वरन्, उनको नियंत्रित करने की बाध्यकारी शक्ति भी रखती है। अतः राजनीतिक व्यवस्था समाज की एक उप–व्यवस्था होते हुए भी, एक विलक्षण प्रकार की उप–व्यवस्था है।

बोध प्रश्न 1

1 राजनीतिक व्यवस्था का अर्थ एंव परिभाषा को आप लिखिए ।

.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....

5.4 राजनीतिक व्यवस्था का कार्यात्मक ढांचा

राजनीतिक व्यवस्था का अपना कार्यात्मक ढांचा भी राजनीतिक विकास की प्रक्रिया को प्रभावित करता है। कुछ राजनीतिक व्यवस्थाएं अन्य राजनीतिक व्यवस्थाओं की अपेक्षाकृत मांग एवं समर्थन के उतार–चढ़ाव से अच्छी प्रकार निपट सकती हैं। ऑमण्ड तथा पॉवेल के अनुसार विकासित तथा पृथक्कृत नौकरशाही वाली व्यवस्था कम पृथक्करण व्यवस्था की अपेक्षा नए संचालनों तथा सेवाओं की मांगों को कहीं

अधिक सरलता से संभाल सकती हैं। यदि सुसंगठित सेना अथवा पुलिस व्यवस्था विद्यमान हो तो कानून एवं व्यवस्था अधिक तत्परता से स्थापित किये जा सकते हैं। कुछ व्यवस्थाएं परिवर्तन एवं रूपांतरण के लिए तैयार रहती हैं जबकि अन्य व्यवस्थाएं नहीं। ऑमण्ड तथा पॉवेल के मतानुसार निवेशों के प्रति उच्च स्तर पर उत्तरदायी व्यवस्था नए समूहों की माँगों तथा पुराने समूहों के समर्थन की हानि का मुकाबला कर सकती हैं। संक्षेप में ऑमण्ड तथा पॉवेल के मतानुसार कुछ व्यवस्थाएं परिवर्तन के लिए तैयार होती हैं, अन्य नहीं होतीं।

5.5 राजनैतिक व्यवस्था की विशेषताएँ

भारत की राजनीति व्यवस्था संविधान के ढाँचे में काम करती हैं। जहाँ पर राष्ट्रपति सरकार का प्रमुख होता हैं और प्रधानमंत्री कार्यपालिका का प्रमुख होता हैं। भारत एक संघीय संसदीय, लोकतांत्रिक गणतंत्र हैं, भारत एक द्वि–राजतन्त्र का अनुसरण करता हैं, अर्थात, केन्द्र में एक केन्द्रीय सत्ता वाली सरकार और परिधि में राज्य सरकारें।

- राजनैतिक व्यवस्था में गतिशीलता पायी जाती है प्रत्येक राजनैतिक व्यवस्थाओं में समय परिवर्तनों के साथ परिवर्तन देखे जा सकते है। इन परिवर्तनों को हम पहले की राजनीति व्यवस्था तथा अब की राजनीतिक व्यवस्था में भिन्नता के रूप में समझ सकते है।

- राजनैतिक संरचनाओं की एकरूपता या समानता राजनीतिक व्यवस्था में समान्ता का गुण पाया जाता है। इसकी एक निश्चित संरचना होती है। राजनैतिक व्यवस्था इन संरचनाओं पर निर्भर रहती है।

- राजनैतिक संरचनाओं का कार्यवादी होना राजनैतिक व्यवस्थाओं के अन्तर्गत विविध कार्य निरन्तर चलते रहते है। यह कार्य एक दूसरे से जुड़े हुए होते है। इनमें अन्तः सम्बन्ध पाया जाता है। अतः यह एक से अधिक कार्य को एक साथ कर सकते है।

- राजनैतिक व्यवस्थाओं का असमान रूप से वितरित होना राजनैतिक व्यवस्थाओं में प्रायः राजनैतिक साधनों का असमान वितरण होता है। जिससे राजनैतिक व्यवस्थाओं में इसका प्रभाव देखा जा सकता है। जिन व्यक्तियों के पास ये साधन व गुण होते है वे राजनीति में अधिक प्रभुत्व वाले तथा लोगों को इनके माध्यम से प्रभावित व नियत्रित कर लेते है। साधनों के समान वितरण से शासन व शक्ति में भेद उत्पन्न होता है।

- राजनैतिक व्यवस्थाएं लोगों को प्रभावित करती है। राजनैतिक व्यवस्थाएं एक दूसरे को कई प्रकार से प्रभावित करते है। आज कोई भी संसार क्षेत्र या लोग नही जो इस व्यस्था से प्रभावित न हो।

- राजनैतिक व्यवस्था में समय व सीमा राजनैतिक व्यवस्था किसी सीमा, स्थान व समय–समय से परे है। अर्थात राजनैतिक व्यवस्था को किसी सीमा, भौगोलिक क्षेत्र या समय में प्रतिबन्धित नही किया जा सकता। राजनैतिक व्यवस्था के अर्न्तगत वे कार्य व कार्यकर्ता आते है जो इन व्यवस्थाओं में अपनी भूमिका अदा करते है।

- राजनैतिक प्रभुत्व बनाए रखने की चेष्टा समाज में ऐसे लोग कम होते है जो राजनैतिक प्रभाव में उच्च स्थान को बनाये रखते है। प्रायः लोग राजनैतिक में सर्वोत्तम स्थान बनाये रखने की चेष्टा रखते है लेकिन वे सफल नही होते है और जो सफल होते है वे राजनैतिक व्यवस्था को अपने अनुकूल बनने तथा सरकार और लोगो को अपने पक्ष में कर लेते है।

बोध प्रश्न 1

2 राजनैतिक व्यवस्था की विशेषताएँ की समझ को आप ठीक ठीक समझाये ।

.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....
.....

5.6 राजनीतिक व्यवस्था के आधारभूत लक्षण

राजनीतिक व्यवस्था एक विचित्रा उप–व्यवस्था है, जिसकी विलक्षणता इस बात में है कि यह अन्य उप व्यवस्थाओं की सीमाओं का आधिकारिक ढंग से निर्धारण कर सकती है तथा साथ ही यह सभी उप–व्यवस्थाओं को आदेश देने की शक्ति भी रखती है। इससे स्पष्ट है कि राजनीतिक व्यवस्था के कुछ आधारभूत लक्षण होते हैं, जिनके आधार पर यह अन्य उप–व्यवस्थाओं में से एक होते हुए भी, भिन्न और विलक्षण बन जाती है। **आमण्ड एवं पावेल** ने इसके कुछ लक्षण इस प्रकार बताए हैं–

- **राजनीतिक व्यवस्था का पर्यावरण–** कोई भी राजनीतिक व्यवस्था अपने आप में पूर्ण नहीं है। ईस्टन के मतानुसार, राजनीतिक व्यवस्था कई प्रकार के पर्यावरणों से घिरी रहती है और उनके द्वारा प्रस्तुत परिवेश के अन्तर्गत ही सक्रिय रहती है। राजनीतिक व्यवस्था में निवेश पर्यावरण से मिलते हैं और अंत काल में ये निवेश निर्गत के रूप में परिवर्तित होकर पर्यावरण में चले जाते हैं।

- **भागों या अंगों की पारस्परिक निर्भरता–** अंगों की पारस्परिक निर्भरता का अर्थ है कि राजनीतिक व्यवस्था के सभी अंग या भाग के बीच एक–दूसरे पर निर्भरता की स्थिति रहती है। इसका निहितार्थ है कि जब व्यवस्था में किसी अंग के लक्षणों में परिवर्तन आता है तो इस परिवर्तन के कारण अन्य सभी अंग और स्वयं सम्पूर्ण व्यवस्था प्रभावित होती है।

- **राजनीतिक व्यवस्था की सीमा–** इसका निहितार्थ है कि एक व्यवस्था कहीं से शुरू होती है और कहीं न कहीं खत्म हो जाती है। अर्थात् राजनीतिक व्यवस्था का एक निश्चित सीमांकन रहता है। इसकी सामान्य व्यवस्था और अन्य उप–व्यवस्थाओं में स्वायत्तता रहती है। यह उसने अन्तः संबंधित होते हुए भी, उनसे स्वायत्त होती है। वस्तुतः राजनीतिक व्यवस्था की सीमा का अर्थ अन्तःक्रियाशील राजनीतिक व्यवस्था के भागों की राजनीतिक भूमिकाओं से लिया जाता है।

5.7 राजनैतिक व्यवस्था व समाज में अंत संबन्ध

समाज मनुष्य की प्रथम पाठ्यशाला है। मनुष्य समाज में ही रहकर अच्छे बुरे जीवन जीने के ढंग को समाजिकता आदि को सीखता है। जैसा की अरस्तु ने कहा है कि मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। समाज में रहना उनकी अनिवार्यता है। जब से इस सृष्टि का जन्म हुआ है। मनुष्य का जन्म हुआ है उसी समय से ही समाज का भी निर्माण हुआ है अतः यह कह सकते है कि एक से अधिक मनुष्यों या समूहो के बीच पाये जाने वाले पारस्परिक सम्बन्धों या व्यवस्था ही समाज कहलाती है। जैसा की मैकाइवर व पेज लिखते है कि समाज सामाजिक सम्बन्धों का जाल है। इस समाज को चलाने के लिए प्रत्येक समाज एक नियम कानून व व्यवस्था होती है। जिस प्रकार समाज को चलाने के लिए सामाजिक व्यवस्थाओं महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है। उसी प्रकार समाज को देश की परिस्थितियों के अनुसार समाजिक व्यवस्था के साथ–साथ राजनैतिक व्यवस्थाओं का भी महत्वपूर्ण स्थान है। प्रत्येंक समाज में सामाजिक, राजनैतिक, आर्थिक, धार्मिक आदि व्यवस्थाये अपना महत्व रखती है। समाज मे ही इन परिस्थितियों का जन्म हुआ है। समाज में व्यवस्था बनाए रखने तथा परिवर्तन लाने के लिए नये नये विचार का आना सामाजिक व्यवस्थाओं में परिवर्तन राजनैतिक व्यवस्था का ही एक भाग है। अतः राजनैतिक व्यवस्था भी समाज का एक अंग है। दोनों के बीच एक अन्तः सम्बन्ध गुण पाया जाता है विभिन्न विद्वानों ने दोनो के सम्बन्धों को अपने–अपने

दृष्टिकोणों से समझने का प्रयास किया है। समाज व राजनैतिक व्यवस्थाओ की अवधारणाओं के परस्पर सम्बन्धों को कैटलिन ने समझाया है कि राजनीति सगठित समाज का अध्ययन है। अतः समाज व राजनैतिक व्यवस्थाओं को अलग–अलग नही किया जा सकता। अनेक विद्वानो ने राजनैतिक क्रियाकलापो व प्रक्रियाओं को समझने के लिए ऐसे समाजशस्त्रीय सिद्धान्तो को पढ़ा व प्रयोग किया जो समाजिक व्यवस्था के साथ–साथ राजनैतिक व्यवस्था से भी सम्बन्धित थे।

5.8 सारांश

भारत की राजनीति पर किसी भी चर्चा में इसके संवैधानिक–संस्थागत ढांचे और इसकी स्थानीय पहचान की गतिशीलता से उभरने वाले कई मन–मुग्ध करने वाले पहलुओं से जूझना पड़ता है। इस प्रकाश में, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था भारत में राजनीतिक व्यवस्था की कई जटिलताओं को स्पष्ट रूप से समझाती है, और इस विषय के भीतर सभी आवश्यक विषयों को ध्यान से आवरण करती है। भारतीय राज्य और सामाजिक एवं संस्थागत सत्ता संरचनाओं के विभिन्न पहलुओं में अंतर्निहित विभिन्न वैचारिक दृष्टिकोणों की व्याख्या करके शुरू होती है। इसके बाद भारतीय संविधान, धर्मनिरपेक्षता और सांप्रदायिकता और विकास की रणनीतियों पर चर्चा की गई है।

5.9 बोध प्रश्न

लघु उत्तरी प्रस्न

1. यह किसकी परिभाषा है ''व्यवस्था एक समग्रता है,जो कई भागों से बनी हुई है।इसे दृष्टिकोण के समग्र प्रभाव के रूप में व्यक्त किया गया है''।

   (अ) राबर्ट डहल **(ब)** कॉलिन चेरी **(स)** कार्ल मार्क्स **(द)** डाउसे एवं ह्यूज के अनुसार,

2. यह किसकी परिभाषा है ''राजनीतिक व्यवस्था मानव संबंधों का वह स्थायी स्वरूप है, जिसके अन्तर्गत 'शक्ति', 'नियम' और 'सत्ता' महत्वपूर्ण मात्रा में निहित हो''।

   (अ) राबर्ट डहल **(ब)** वेबर **(स)** कार्ल मार्क्स **(द)** डाउसे एवं ह्यूज के अनुसार,

3. राजनीतिक व्यवस्था के आधारभूत लक्षण की व्याख्या कीजिये।

4. राजनैतिक व्यवस्था की विशेषताएँ पर टिप्पड़ी लिखिए ।

लघु उत्तरी प्रश्न के उत्तर

1- (ब) 2. (अ)

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. राजनीतिक व्यवस्था का अर्थ एंव परिभाषा बताइये ।
2. राजनीतिक व्यवस्था का कार्यात्मक ढांचा क्या है ? व्याख्या कीजिये।
3. राजनैतिक व्यवस्था व समाज में अंत संबन्ध स्पस्ट कीजिये।
4. राजनीतिक व्यवस्था के आधारभूत लक्षण की विस्तृत व्याख्या कीजिए।

5.10 सन्दर्भ सूची

- सन्त कुमार तिवारी राजनीतिक व्यवस्था का तुलनात्मक अध्ययन, किताब प्रकाशन 2023
- बी सी नरुल, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, कॉमनवेल्थ पब्लिशर्स, 2009
- लक्ष्मीकांत एम. भारत की राज्यव्यवस्था, मेग्राहील एजुकेशन, चेन्नई 2021
- कश्यप सुभाष, हमारी संसद, नेशनल बुक ट्रस्ट इंडिया नई दिल्ली 2011
- महेन्द्र कुमार मिश्रा, भारतीय राजनीतिक व्यवस्था, पैसिफिक पब्लिकेशन 2023
- राजेश मिश्रा, भारतीय राजव्यवस्था, पब्लिशर ओरिएंट ब्लैकसवन प्राइवेट, लिमिटेड, इंडिया 2019

इकाई 6 : राजनीतिक व्यवस्थाओं का वर्गीकरण

इकाई की रूपरेखा

6.0 उद्देश्य

6.1 प्रस्तावना

6.2 लोकतान्त्रिक व्यवस्था

6.3 समग्रवादी व्यवस्था

6.4 राजतांत्रिक व्यवस्था

6.5 सारांश

6.6 शब्दावली

6.7 बोध प्रश्नों के उत्तर

6.0 उद्देश्य

इस इकाई का उद्देश्य राजनीतिक समाजशास्त्र की प्रक्रियाओं और कारकों के ढांचे से विद्यार्थियों को परिचित कराना है। राजनीतिक प्रक्रियाओं, कारकों, और उनके प्रभाव को समझने के लिए राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न स्वरूपों को समझना एक प्राथमिक आवश्यकता है। यदि समाजशास्त्र मुख्यतः समाज की संरचना एवं परिवर्तन को समझने का व्यवस्थित अध्ययन है तो राजनीतिक समाजशास्त्र मूलरूप से राजनीतिक ढांचे के अंतर्गत एक विशिष्ट संस्थागत संरचना के व्यवस्थित अध्ययन से सम्बद्ध है। यह राजनीतिक शासन, इसके मूल्य, कार्य–प्रणाली, विभिन्न स्रोतों, कारकों एवं उनके प्रभाव से संबंधित है। स्पष्ट है कि राजनीतिक प्रक्रियाओं और सामाजिक संबंधों के अंतरर्क्रियात्मक संबंध को राजनीतिक व्यवस्था के बिना समझना संभव नहीं है। राजनीतिक व्यवस्थाओं का वर्गीकरण उतना ही पुराना है जितना कि राजनीति का अध्ययन । प्राचीन काल से, राजनीतिक व्यवस्थाओं के वर्गीकरण के आधार को निर्दिष्ट करने के कई प्रयास किए गए हैं। प्राचीन काल में वर्गीकरण का आधार बहुत सीमित था और यह शासकों की संख्या और शासन की गुणवत्ता केंद्रित था। मध्यकाल में बोडिन, मोंटेस्क्यू,सो, कांट आदि द्वारा प्रयास किए गए थे। बाद में, आधुनिक राष्ट्र–राज्य के उदय के साथ, राजनीतिक व्यवस्था के प्राप और व्यापकप में विकसित हुए। इस पृष्ठभूमि में, राजनीतिक वैज्ञानिकों और समाजशास्त्रियों ने नई उभरती संरचनाओं को समझने के लिए वर्गीकरण के आधुनिक स्वरूपों को जोड़ा। फलस्वरूप राजनीतिक व्यवस्थाओं को समझने के लिए सीमित राजशाही, लोकतांत्रिक गणराज्य, संसदीय, राष्ट्रपति, संघीय जैसे स्वरूपों को जोड़ा गया। किंतु इस क्रम में वर्गीकरण व्यापक होने के साथ–साथ जटिल, पुनरुक्त और अधिव्याप्त हो गया। इस इकाई के अध्ययन से विद्यार्थियों को विदित होगा कि

- समाज में राजनीतिक व्यवस्था की क्या भूमिका है ?
- राजनीतिक व्यवस्थाओं के कौन–कौन से प्रमुख स्वरूप हैं?
- विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं के क्या गुण और दोष हैं?
- राजनीतिक व्यवस्थाओं के वर्गीकरण में एक सार्वभौमिक मान्यता पर पहुंचने में क्या समस्या है ?

6.1 प्रस्तावना

राजनीतिक व्यवस्था के वर्गीकरण का मूल उद्देश्य एक राजनीतिक व्यवस्था के सभी महत्वपूर्ण तत्वों और उनके आपसी संबंध को समझने के प्रयास में निहित है। इस वर्गीकरण के द्वारा एक तुलनात्मक

दृष्टिकोण को विकसित करने का प्रयास किया गया है जिससे सभी स्वरूपों के गुण और दोषों की तुलना करते हुए राजनीतिक समाजशास्त्र के विद्यार्थियों की समझ को विस्तृत बनाया जा सके। राजनीतिक व्यवस्था समाज से दो प्रकार से संबंधित है–

(1) समाज के अंतर्गत सामाजिक आर्थिक संरचना किस प्रकार की है ;

(2) इसके साथ ही समाज के बाहर की सामाजिक आर्थिक संरचना भी एक महत्वपूर्ण कारक है। क्योंकि अलग–अलग राजनीतिक व्यवस्थाओं में एक समान राजनीतिक अभिकरण या एजेंसीज एक दूसरे से सर्वथा विभिन्न प्रदर्शन और प्रभाव दिखा सकते हैं। वर्तमान समय में विश्व भर में विभिन्न प्रकार के राज्य और उनकी सरकारें क्रियान्वित हैं। राजनीतिक समाजशास्त्र के अंतर्गत राज्य को एक राजनीतिक इकाई माना जाता है, जिसमें प्रत्येक राज्य या राष्ट्र को अपने अंतर्गत प्राधिकार और बल प्रयोग करने की शक्ति प्राप्त होती है। यह राज्य एक संपूर्ण राष्ट्र भी हो सकता है और इसके साथ–साथ एक राष्ट्र के भीतर एक उपखंड भी हो सकता है। उदाहरण के लिए भारत संपूर्ण राष्ट्र है और इसके अंतर्गत तमिलनाडु, महाराष्ट्र एवं उत्तर प्रदेश को एक राजनीतिक उपखंड केप में राज्य द्वारा संदर्भित किया जाता है। इसी प्रकार संयुक्त राज्य अमेरिका में न्यूयार्क और कैलिफोर्निया भी राज्यों के रूप में संदर्भित किए जाते हैं। राजनीतिक व्यवस्था का दूसरा महत्त्वपूर्ण तत्व सरकार है।

हेरोडोट्स एवं प्लेटो ने राजनीतिक शासन की व्यवस्थाओं के वर्गीकरण के प्रारंभिक प्रयास किए थे। हेरोडोट्स राजतंत्र, कुलीनतंत्र और लोकतंत्र की बात करते हैं जबकि प्लटो ने अपनी पुस्तक रिपब्लिक में पांच प्रकार के व्यवस्थाओं की बात की है। अपनी पुस्तक पॉलिटिक्स में अरस्तु ने राजनीतिक व्यवस्थाओं को दो महत्वपूर्ण आधारों पर व्यवस्थितरूप से वर्गीकृत करने का कार्य किया। इस वर्गीकरण की पहली विशेषता तथ्य पर आधारित है कि राजनीतिक व्यवस्था का प्रभाव समाज और जनता पर अच्छा है या बुरा। वर्गीकरण के दूसरे आधार में शासक या शासकों की संख्या देखी गई।

राजतंत्र सर्वोच्च गुणों वाले एक व्यक्ति के शासन केप में राजनीतिक व्यवस्था का एक स्वरूप है। इसके अंतर्गत एक ही व्यक्ति में सर्वोच्च सत्ता केंद्रित रहती है। किंतु इसी के विकृतरूप में अरस्तु टाइरेनी अर्थात निरंकुशता को स्पष्ट करते हैं जिसमें छल – बल और अत्याचार का प्रयोग करते हुए सर्वोच्च शासन करने वाला व्यक्ति अत्याचार के माध्यम से शासन करता है। दूसरी वर्गात्मक श्रेणी में कुछ व्यक्तियों (एक से अधिक) के अन्य लोगो पर शासन और प्राधिकार को कुलीनतंत्र का नाम दिया। इसमें अभिजात्य वर्ग के प्रतिनिधत्व की प्रभावी भूमिका होती है। अरस्तू ने इसी के विकृतरूप में अल्पतंत्र को सम्मिलित किया। इसमें धन के लालच के दुर्गुण के कारण व्यवस्था पर बुरा प्रभाव पड़ता है।राजनीतिक व्यवस्था की तीसरी वा

वर्गात्मक श्रेणी केप में अरस्तु तीसरी श्रेणी में राजनीति या पॉलिटी व्यवस्था की बात करते हैं जिसमें मध्यम गुणों का प्रतिनिधित्व करने वाले लोगो का एक बड़ी संख्या का समूह सत्ता में रहता है। इसमें सत्ता अभिजात्य वर्ग के हाथ में ना रहकर मध्यम वर्ग के हाथों में रहती है। इसी के परिवर्तित स्वरूप को अरस्तु ने जनतंत्र या लोकतंत्र कहा है। लोकतंत्र में समानता के मूल्य को सामने रखते हुए, सत्ता असंख्य गरीबों के हाथों में होती है।

राजनीतिक व्यवस्था के वर्गीकरण को समझने के लिए अरस्तु का यह वर्गीकरण इस अर्थ में विशिष्ट है कि एक समाज में राजनीतिक व्यवस्था का कोई भी स्वरूप स्थाई नहीं होता है। समय के साथ–साथ बदलती हुई आवश्यकताओं और चुनौतियों के प्रत्युत्तर के लिए राजनीतिक व्यवस्था अलग–अलग स्वरूप लेती रहती है। अरस्तु के अनुसार यह समझना आवश्यक है कि अंतर्निहित राजनीतिक संघर्ष और विद्रोह या क्रांति के पीछे मूल कारण सामाजिक असमानता ही है। इसीलिए एक बेहतर सामाजिक व्यवस्था केप में अरस्तु ऐसी व्यवस्था की बात करते हैं जिसमें संवैधानिक सरकार के शासन स्वरूप प्रभावी हो जिसमें सभी नागरिकों के पास कम से कम कुछ ऐसे पदों तक पहुंच हो जहां वे शासन को चलाते हैं और साथ ही साथ भी शासित होते हैं। वर्गीकरण के प्राचीन प्रतिमानों से लेकर आधुनिक चरण तक बोडिन, मोंटेस्कयू,सो तथा ब्लंट्सचली के विभिन्न प्रयासों को मूलरूप से तीन प्रमुख श्रेणियों में रखकर समझा जा सकता है।

6.2 लोकतान्त्रिक व्यवस्था

लोकतंत्र या जनतंत्र एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसमें नागरिक स्वयं पर शासन और नियंत्रण करने के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षरूप से स्वयं जिम्मेदार होते हैं। ग्रीक भाषा से आए शब्द लिंकन के शब्दों में लोकतंत्र का अर्थ उस शासन से है जिसमें जनता का शासन, जनता के लिए, जनता के द्वारा किया जाता है। इस राजनीतिक व्यवस्था का मूल उद्देश्य सभी नागरिको और राज्य की सुरक्षा करना है। इसके लिए संविधान को बनाए रखना सर्वोपरि है। लोकतंत्र या जनतंत्र ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसमें नागरिक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षरूप से स्वयं को नियंत्रित करते हैं। प्रत्यक्ष लोकतंत्र में नागरिक उन सभी नीतियों, मुद्दों और संसाधनों के वितरण से जुड़े हुए निर्णय देते हैं जो उन्हें सीधे–सीधे प्रभावित करते हैं। अप्रत्यक्ष लोकतंत्र का तात्पर्य प्रतिनिधि लोकतंत्र है। इसमें बड़ी जनसंख्या को प्रभावित करने वाले सभी मुद्दों में प्रतिभाग करने के लिए जनता अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन करती है। इसे प्रतिनिधि लोकतंत्र भी कहा जाता है। प्रतिनिधियों का निर्वाचन करने के कारण लोकतंत्र में उन व्यक्तियों के निर्वाचन की सुनिश्चितता बढ़ती है जो शासन की नीतियों और शासन के कार्य को संपादित करने के लिए समुचित प्रतिभा, कुशलता और ज्ञान रखते हैं।

डाईसी के अनुसार लोकतंत्र में प्रभुत्व शक्ति समष्टि केप में जनता के हाथों में निहित होती है। जिससे जनता शासन संबंधी मामलों पर अपना अंतिम नियंत्रण रखती है। डाईसी यह भी जोड़ते हैं कि जनता ही यह निर्धारित करती है कि राज्य में किस प्रकार का शासन स्थापित किया जाए । राजनीतिक व्यवस्था के वर्गीकरण में लोकतंत्र शासन की एक एजेंसी या अभिकरण ही नहीं अपितु सरकार की नियुक्ति करने, सरकार पर नियंत्रण रखने से लेकर उसे अपदस्थ करने की विधि भी है। लोकतंत्र की परिभाषित विशेषता चुनावों में मतदान है।

प्रत्येक समाज के कुछ लक्ष्य होते हैं और इन लक्ष्यों या आदर्शो को चिन्हित करने और प्राप्त करने के लिए राजनीतिक व्यवस्था कार्य करती है। लोकतंत्र में इन लक्ष्यों का निर्धारण करते समय मूल में अधिक से अधिक जनता को सम्मिलित करने के आदर्श को स्वीकार किया जाता है। अरस्तू के अनुसार लोकतंत्र में सरकार का चुनाव सब में से, सबके द्वारा और सब का हर एक पर और प्रत्येक का सब पर शासन होता है। लोकतंत्र में निर्णय लेने का आधार विचार – विनिमय और संवाद की एक खुली व्यवस्था केप में स्वीकृत किया जाता है। विचार–विनिमय और वाद– विवाद की आवृत्ति और विस्तार जन–सहभागिता में केंद्रित होता है। सरल भाषा में कहें तो लोकतंत्र में निर्णय किसी भी स्तर पर लिए जाएं उन्हें बलपूर्वक न रखकर विचार –विमर्श, वाद– विवाद और अनुनय केप में सामने रखा जाता है इसीलिए स्वतंत्र प्रचार और संवाद पर आधारित जनमत निर्माण लोकतंत्र में निर्णय प्रक्रिया का एक महत्व आधारभूत स्तंभ माना जाता है।किंतु सभी निर्णयों पर जनता की सहमति लेने का विचार अपने आप में काल्पनिक है क्योंकि व्यवहार में सभी में निर्णयों पर सदैव आम सहमति बनना संभव नहीं है। इसीलिए लोकतंत्र में जब सहमति का अभाव होता है, तब निर्णय बहुमत के आधार पर लिए जाते हैं। बहुमत के आधार पर निर्णय लेना लोकतांत्रिक विधि है। बहुमत के आधार पर निर्णय लेना इस अर्थ में व्यावहारिक भी है कि किसी भी निर्णय को समय से लेने में यह सहायता प्रदान करता है। इसीलिए लोकतांत्रिक व्यवस्था में प्रत्येक स्तर पर बहुमत के आधार पर निर्णय लेना एक प्राथमिक शर्त बन जाती है। इसी प्राथमिक शर्त का दूसरा आयाम है इस विचार पर बल देता है कि वह निर्णय समाज में अल्पसंख्यकों या वंचित वर्गों के आधारभूत हितों और मौलिक अधिकारों का हनन नहीं करता हो।

जनता द्वारा अपने प्रतिनिधि का चयन प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी रूप से किया जा सकता है; किंतु इसके पीछे यह आवश्यक है कि निर्वाचन नियतकालिक होना चाहिए। इस नियतकालिक निर्वाचन में मताधिकार और निर्वाचन के अवसर की समानता व स्वतंत्रता दो आधारभूत शर्ते हैं।

लोकतंत्र की राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूप में निर्णय लेने का कार्य जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधियों द्वारा ही संपादित होता है इसलिए लोकतांत्रिक व्यवस्था में सरकार के गठन के लिए प्रतिनिधित्व

में समानता और समपता के सिद्धांत पर जोर दिया जाता है। जनता द्वारा निर्वाचित यह प्रतिनिधित्व भी एक निश्चित अवधि के लिए ही वैध माना जाता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था में एक पूर्व–नियत अवधि की समाप्ति पर सरकार के गठन के लिए सभी प्रतिनिधियों का प्राधिकार समाप्त हो जाता है। नए प्रतिनिधियों को चुनने का कार्य पुनः निर्वाचन की प्रक्रिया द्वारा अंततः जनता के ही हाथों में होता है।

इस प्रकार नए मुद्दों , नई नीतियों और राजनीतिक नेतृत्व में परिवर्तन लाने का अवसर जनता के हाथों में सदैव रहता है। निर्वाचित प्रतिनिधियों के ऊपर शासन के उत्तरदायित्व को निभाने के लिए जनता के प्रति जवाबदेही बनती है। इस प्रकार विभिन्न राजनीतिक दलों के बीच राजनीतिक प्रतियोगिता होती है। सभी राजनीतिक दल अपनी वैचारिकी, मूल्यों एवम नीतियों द्वारा जनता के निहितार्थ अलग–अलग मुद्दों के विकल्प रखते हैं। लोकतांत्रिक व्यवस्था की दूसरी महत्वपूर्ण पहचान स्वतंत्रता के मूल्य में देखी जा सकती है।

6.3 समग्रवादी व्यवस्था

समग्रवादी व्यवस्था इस राजनीति व्यवस्था में राजनीतिक शक्ति का केंद्रीकरण एक व्यक्ति या शक्तिशाली समूह की इच्छा पर आधारित होता है। इस व्यवस्था में एक समाज की सामाजिक–आर्थिक यहां तक की सांस्कृतिक विभिन्नता को गौण मानते हुए अधिनायक या शक्तिशाली समूह की राज्य और राष्ट्र की संकल्पना को सर्वोपरि माना जाता है। इसे समग्रवादी व्यवस्था इसीलिए माना जाता है क्योंकि इसमें केंद्रीय शक्ति द्वारा की नीतियों और आदेशों की अवहेलना को बलपूर्वक दबा दिया जाता है। शासन में आने वाली प्रत्येक रुकावट और तनाव को वाद विवाद द्वारा न हल करके उसका किसी भी मूल्य पर दमन करना ही अपरिहार्य माना जाता है। विकल्पों की बहुलता से लगाकर विचारों और सांस्कृतिक विभिन्नता को एक सर्वशक्तिशाली राज्य की समग्रवादी व्यवस्था को बनाए रखने के लिए समाप्त कर दिया जाता है। समाज को आगे ले जाने के लिए लक्ष्यों का चयन करना; लक्ष्य प्राप्ति की नीतियों और साधनों को तय करना; महत्वपूर्ण मुद्दों और लाभार्थियों का चयन करना आदि सभी राजनीतिक निर्णय एक ही व्यक्ति या छोटे समूह के हाथों में सीमित रहता है। संपूर्ण संसाधनों, उत्पादन और वितरण पर राज्य और शासक का ही अधिकार होता है। इस प्रकार समग्रवादी व्यवस्था में अधिनायक,राजनीतिक के साथ साथ आर्थिक गतिविधियों पर भी एक ही व्यक्ति या समूह का संपूर्ण नियंत्रण बना रहता है। स्पष्ट है कि समग्रवादी व्यवस्था में संपूर्ण शक्ति के केंद्रीकरण के कारण दबाव और दमन का तत्व प्रभावी बना रहता है।

पीटर मर्केल ने अधिनायक तंत्र के नेतृत्व को असाधारण एवं देव––तुल्य केप में परिभाषित किया है। साथ ही इस तंत्र की विशिष्ट ढंग से संगठित व्यवस्था में भावात्मक समर्पणता एक प्रमुख लक्षण है।

इसमें बल प्रयोग करने और आतंकित करने की परिष्कृत व्यवस्था को लागू किया जाता है। इसके साथ ही शिक्षा, संस्कृति और जनसंपर्क के सभी माध्यमों पर एकाधिकार के द्वारा अपनी विचारधारा को सर्वोचित विचारधारा केप में स्थापित करने के संस्थागत और व्यवस्थित प्रयास भी आते हैं।

अधिनायकतंत्र और साम्यवादीतंत्र दोनों ही इसी समग्रवादी व्यवस्था के स्वरूप हैं –

अधिनायकतंत्र– लोकतांत्रिक व्यवस्था के ठीक विपरीत अधिनायकतंत्र का अर्थ एक व्यक्ति के निरंकुश और स्वेच्छाचारी शासन से है। किसी भी समाज के सामने आकस्मिक परिस्थितियों के उत्पन्न होने के कारण संकटों से निपटने और चुनौतियों का सामना करने के लिए अधिनायकतंत्र को अनुकूल विधि माना गया। प्राचीन काल से ही, शक्ति के केंद्रीकरण के कारण अधिनायकतंत्र शीघ्रता से निर्णय लेने और लागू करने के लिए विशिष्ट विधि माना गया। उदाहरण के लिए रोमन साम्राज्य में राज्य में ऐसे ही संकट से निपटने के लिए प्राधिकारियों को विशिष्ट शक्तियां दी जाती थी। इन्हे अधिनायक कहा जाता था। यद्यपि अधिनायकों को दी गई ये शक्तियां एक निश्चित समय के लिए ही मान्य होती थीं। अर्थात अधिनायकतंत्र समाज में व्यवस्था को बनाए रखने के लिए प्रयुक्त की जाने वाली एक अस्थाई विधि या स्वरूप है। संकट से बाहर निकलने के बाद पुनः पूर्ववत व्यवस्था लागू हो जाती थी। अधिनायक तंत्र भी पूरी तरह से स्वेच्छाचारी ना होकर संवैधानिक विधि द्वारा कार्य करता था। अधिनायक का वैधानिक विधि से चयन करना और उसके अत्याचारी तौर– तरीकों पर रोक लगाने के लिए नियमों की एक व्यवस्था द्वारा अधिनायकों को नियुक्त करने की कार्यवाही संपादित होती थी। स्पष्ट है कि अधिनायकतंत्र में भी शासन का लक्ष्य राज्य और जनता की सुरक्षा एवं कल्याण को सुनिश्चित करना ही है।

किंतु आधुनिक समय में देखें तो अधिनायक तंत्र का रूपांतरण एक व्यक्ति के निरंकुश और अत्याचारी शासन से है। राष्ट्रीय संकट से इधर अपने शासन को किसी भी प्रकार के प्रबंध और रुकावट से दूर करने के लिए आकस्मिक राज्य क्रांति के प्रश्न भी अधिनायक शक्ति प्राप्त करते हुए इस आकस्मिक राज्य क्रांति के लिए कल्याणकारी लक्ष्य न होकर अपनी शक्ति को स्थापित करना होता है इसीलिए अधिनायक तंत्र में एक व्यक्ति की स्वयंभू सत्ता केवल उसी समय तक बनी रहती है जब तक बल प्रयोग करके अपनी शक्ति को बनाए रख सकते हैं। इस अधिनायक तंत्र में एक ही व्यक्ति में शक्ति निहित होती है और वे किसी के लिए भी उत्तरदाई नहीं होते हैं। एलन बॉल के अनुसार आधुनिक अधिनायकतंत्र में सर्वाधिकारी शासन और स्वेच्छाचारी शासन को समझा जा सकता है। सर्वाधिकारी स्वरूप लगभग बीसवीं शताब्दी की आधुनिक प्रौद्योगिकी के विकास के परिणामस्वरूप सामने आए। हिटलर का जर्मनी में शासन और मुसोलिनी का इटली में शासन अधिनायकतंत्र के सर्वाधिकारी शासन के सटीक उदाहरण हैं। ये दोनों ही एक व्यक्ति के नेतृत्व और उसमे समाहित संपूर्ण शक्ति पर आधारित शासन थे। इसके अंतर्गत एक ही

व्यक्ति की शक्ति, राजनीतिक और कानूनी गतिविधि गतिविधियों पर प्रभावित थी जिसमें प्रतियोगिता, विरोध या विकल्प का कोई भी स्थान नहीं है राजनीतिक शक्ति के साथ ही व्यक्तिगत और सामाजिक गतिविधि के भी सभी आयामों पर राजनीतिक शक्ति का नियंत्रण मिलता है। न्यायपालिका और जनसंपर्क के साधनों पर इसी केंद्रित शक्ति का नियंत्रण रहता है। इसी क्रम में सभी प्रकार की नागरिक स्वतंत्रता है एवं अधिकारों को भी गौण मानकर, आज्ञा का पालन न करने की स्थिति में कठोरता पूर्व दमन करने की विधि प्रयुक्त की जाती है। यद्यपि इस व्यवस्था के अंतर्गत भी जनता से समर्थन प्राप्त करने के लिए एक ऐसी विचारधारा को जनमत के निर्माण के लिए व्यापकरूप से फैलाया जाता है जिससे जनता की स्वीकृति और वैधता ली जा सके। एलन बॉल के अनुसार साम्यवादी व्यवस्था के अंर्तगत आने वाली एकदलीय व्यवस्था भी इसी श्रेणी में सम्मिलित है। एकदलीय व्यवस्था एक विशिष्ट विचारधारा से प्रेरित होती है किंतु इसका भी मूल उद्देश्य सत्ता पर एक अधिकार बनाए रखना है ऐसी स्थिति में एक दलीय व्यवस्था में चुने गए दल का सर्वोच्च नेता एक प्रकार से अधिनायक की शक्ति का ही प्रयोग करता है। इस एक दलीय व्यवस्था में, सत्ता में आने के बाद उस दल के लोग और उनका नेतृत्व कई बार निरंकुश ढंग से प्राधिकार का प्रयोग करते देखे जा सकते हैं। इस स्वरूप कोस और चीन की साम्यवादी व्यवस्था में समझा जा सकता है।

साम्यवादी राज्यों की एक दलीय व्यवस्था में अपने नेतृत्व की सर्वोच्चता और प्राधिकार को बनाए रखने के लिए दो विधियों का प्रयोग किया जाता है। पहली विधि के द्वारा अपने दल की विचारधारा और कैडर को बढ़ाने के लिए अधिक से अधिक प्रचार और भर्ती की जाती है। दूसरी विधि केप में अधिनायकतंत्र के विकल्प या इसको चुनौती देने की किसी भी संस्था को जड़ से उखाड़ने और कभी दोबारा अस्तित्व में न आने के लिए कार्यवाही का असीमित अधिकार सत्तापक्ष के पास रहता है। इसमें जनसहभागिता और जन सक्रियता पूर्णरूप से एक दल द्वारा परिभाषित और सुनिश्चित दायरे में ही होती है। जनता के किसी भी विरोध को स्वीकार नहीं किया जाता।

अधिनायक तंत्र के शासन में कुशलता होती है। सत्ता पक्ष अप्रत्यक्षरूप से निर्वाचित ना होकर प्रत्यक्षरूप से सत्ता में सहभागिता करने के लिए स्वयं आगे आता है और अपने राज्य की संप्रभुता को सर्वोपरि मानकर अंत तक कार्य करता है। किसी भी संकट जैसे युद्ध आदि की स्थिति में समय से आवश्यक कदम उठाने में सहायता मिलती है। एक ही व्यक्ति या एक ही दल में ही संचित रहने के कारण निर्णय लेने में लंबी प्रक्रिया की बाधा नहीं आती है। निर्णय और उनका क्रियान्वयन कुशलता के साथ साथ शीघ्रतापूर्वक लिए जाने की संभावना भी बढ़ जाती है। ऐसी व्यवस्था में राज्य का विकास तीव्रता से होता है। संप्रभुता और एकता की सुचारू और परिष्कृत व्यवस्था के कारण बड़े स्तर पर एक ही योजना समानप

से चलने के कारण विकास को प्रक्रिया अबाध्यप से चलती रहती है। राष्ट्रीय भावना को परिपुष्ट करने की व्यवस्था एक दल, एक विचारधारा के माध्यम से सभी को प्रभावित करती हैं।

इन गुणों के बाद भी अन्य राजनीतिक व्यवस्था के समान इस व्यवस्था में भी कई गंभीर दोष प्रकट होते हैं। सर्वप्रथम इस व्यवस्था को बहुत लंबी अवधि तक चलाना संभव नहीं होता। क्योंकि व्यक्तिगत स्वतंत्रता न मिलने से एक घुटन का माहौल बनता जाता है।

मौलिक अधिकारों, व्यक्तिगत विचारों, संस्कृति एवं स्वतंत्रता को प्रत्येक स्तर पर अस्वीकृत कर दिया जाता है। अत्याचार, दमन और आतंक का वातावरण बन जाता है। जनता से खुले संवाद के अवसर न मिलने के कारण कई महत्वपूर्ण मुद्दों पर गलत निर्णय लिए जाने का खतरा बढ़ जाता है। जिससे आगे चलकर राज्य को भारी नुकसान भी उठाने पड़ सकते हैं।

6.4 राजतंत्रिक व्यवस्था

यह एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसमें परंपरागतरूप से सत्ता हस्तांतरित होती है। राजनीतिक व्यवस्था में सत्ता एक ही परिवार में केंद्रित रहती है। स्पष्ट है कि परंपरा के आधार पर जनता इस विशिष्ट परिवार को प्राधिकार प्रदान करती है। कई बार राजा सत्ता को आक्रमण एवं आतंक के माध्यम से यह सम्मान जबरन प्राप्त करते हैं। प्राचीन काल की तुलना में इस राजनीतिक व्यवस्था की लोकप्रियता और प्रचलन में कमी आई है। किंतु इसके बाद भी राजतंत्र की व्यवस्था को समझना इसीलिए आवश्यक है क्योंकि यह राजनीतिक व्यवस्था सत्ता, शासक, राज्य और जनता के पारस्परिक संबंध में ऐतिहासिक परिवर्तन की प्रक्रिया को दर्शाती है। पूर्ण राजतंत्र वाली व्यवस्था में राज–परिवार देवीय अधिकार का दावा करते थे। और इसी आधार पर उन्हें ईश्वर के तुल्य या देवताओं के लिए सम्मान प्राप्त होता था। उनकी आज्ञा को ईश्वर की वाणी और आज्ञा मानकर उसका पालन धर्म के पालन की भांति करना आवश्यक होता था। यद्यपि इस राजतंत्र की व्यवस्था में कई बार राजा की शक्ति और संपूर्ण सत्ता पूरी तरह से निरपेक्ष नहीं थी क्योंकि उसमें उनके सहयोगी परामर्शदाता, सेनापति व धर्माधिकारियों का भी महत्व होता था। इस राजनीतिक व्यवस्था में राज परिवार भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाता था किंतु धीरे–धीरे इसकी शक्ति में परिवर्तन आता गया। उदाहरण के लिए आज भी इंग्लैंड में राज परिवार की औपचारिक स्थिति है और सम्मान है। आज राज– परिवार को प्रतीकात्मक भूमिका निभाते हुए स्पष्टरूप से देखा जा सकता है। जबकि अब पुरानी सत्ता उनके हाथों में नहीं है। वर्तमान में इंग्लैंड की सरकार, इसकी विधायिका और न्यायपालिका राज परिवार के नियंत्रण से बाहर है। इसी प्रकार डेनमार्क, नॉर्वे और स्वीडन में भी संवैधानिक राजतंत्र के स्वरूप को देखा जा सकता है।

6.5 सारांश

किंतु समस्या यह है कि जब राजनीतिक व्यवस्था की विश्लेषणात्मक श्रेणी के बाहर निकालकर समकालीन समाज में इसके व्यावहारिक पक्ष को देखें तो एक व्यवस्था में दूसरी व्यवस्था के लक्षण समय के साथ समाहित होते जाते हैं। उदाहरण के लिए सोवियत रूस और चीन के साम्यवादीतंत्र की एक दलीय व्यवस्था में चुने गए दल के लोग और उनका नेतृत्व कई बार निरंकुश ढंग से प्राधिकार का प्रयोग करते देखे जा सकते हैं। इसी प्रकार लोकतांत्रिक व्यवस्था में भी यह मानकर नहीं चला जा सकता कि इसमें कोई बुराई नहीं है। कई बार चुनी हुई सरकार बहुमत के नाम पर निरंकुश नीतियों का प्रयोग करती हुई देखी जा सकती है। इसीलिए जनतांत्रिक व्यवस्था में भी नई–नई बुराइयां उत्पन्न होती हुई दिखती है जिनके नए समाधान ढूंढने आवश्यक हैं। यह समझना आवश्यक है कि राज्य स्वयं कार्य नहीं कर सकता। यह एक अभिकरण है इसीलिए राज्य को राजनीति के प्रबंधन और शासन के लिए व्यक्तियों के एक समूह की आवश्यकता होती है। सरकार के रूप में यह व्यक्तियों का एक समूह उस राज्य के राजनीतिक मामलों का प्रबंधन और निर्देशन करता है। जिस प्रकार की राजनीतिक व्यवस्था होती है, उसी प्रकार से यह सरकार अर्थात व्यक्तियों का समूह जनता की स्वतंत्रता, उनके कल्याण, अधिकारों और कर्त्तव्यों के निहितार्थ राजनीतिक नीतियों और निर्णयों का प्रबंधन करता है।

राजनीतिक व्यवस्था के वर्गीकरण का अध्ययन करते समय यह अनुभव किया जा सकता है कि अभी तक जितने भी स्वरूपों की पहचान की गई है उसमें कोई आम सहमति नहीं होने के कारण किसी भी एक वर्गीकरण को सार्वभौमिक वर्गीकरण के रूप में स्वीकार नहीं किया जाता है। यह भी समझना आवश्यक है कि कोई भी एक राजनीतिक व्यवस्था सदैव केवल एक ही श्रेणी के खांचे में सटीक रूप से नहीं बैठ सकती क्योंकि प्रत्येक राजनीतिक व्यवस्था अलग–अलग समय में अलग–अलग परिस्थितियों से गुजरती है। बदलती हुई परिस्थितियों के साथ ही व्यवस्था की आवश्यकता है और चुनौतियां भी बदलती हैं। जिसके कारण एक लंबे समय अंतराल तक यह आवश्यक रूप से मानकर नहीं चला जा सकता कि एक विशिष्ट स्वरूप की राजनीतिक व्यवस्था अपने इस रूप को सदैव बनाए रखेगी। तीसरा महत्वपूर्ण बिंदु व्युपनिवेशीकरण की विचारधारा से जुड़ा हुआ है। राजनीतिक व्यवस्था के इस वर्गीकरण पर मूल रूप से यूरोप और अमेरिका की संस्थाओं का प्रभाव होने के कारण विचारधारा और मूल्यों के प्रभाव स्पष्ट दिखता है। जबकि एशिया, अफ्रीका और लैटिन अमेरिका की राजनीतिक व्यवस्थाओं का समावेश देखने को नहीं मिलता है। कुल मिलाकर कहा जा सकता है कि राजनीतिक विश्लेषण के लिए प्रयुक्त की गई राजनीतिक व्यवस्था की वर्गीकरण की योजना अभी भी अपने अंतिम पड़ाव पर नहीं पहुंची है। समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया और विशेष रूप से वैश्वीकरण की प्रक्रिया के कारण कारकों की बहुलता समाज के अंतर्गत और

समाज के बाहर दोनों ही पक्षों पर प्रभाव डालती है। जिसके कारण, इस वर्गीकरण को विश्लेषण की गतिशील इकाइयों के रूप में स्वीकार किया जाना चाहिए न कि स्थिर श्रेणियां के रूप में।

6.6 शब्दावली

अधिनायकतंत्र– लोकतांत्रिक व्यवस्था के ठीक विपरीत अधिनायकतंत्र का अर्थ एक व्यक्ति के निरंकुश और स्वेच्छाचारी शासन से है। किंतु आधुनिक समय में देखें तो अधिनायक तंत्र कापांतरण एक व्यक्ति के निरंकुश और अत्याचारी शासन से है।

राजतंत्रिक व्यवस्था– एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसमें एक ही परिवार में 'परंपरागतरूप' से सत्ता हस्तांतरित होती है। उन्हें ईश्वर के तुल्य सम्मान प्राप्त होता था। जनता इनकी आज्ञा का पालन स्वेच्छा से करती थी।

लोकतंत्र या जनतंत्र– एक ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसमें नागरिक स्वयं पर शासन और नियंत्रण करने के लिए प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षरूप से स्वयं जिम्मेदार होते हैं। इसका मूल उद्देश्य सभी नागरिको और राज्य की सुरक्षा करना है। इसके लिए संविधान को बनाए रखना सर्वोपरि है। लोकतंत्र या जनतंत्र ऐसी राजनीतिक व्यवस्था है जिसमें नागरिक प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्षरूप से स्वयं को नियंत्रित करते हैं। इसमें जनता आज्ञा का पालन स्वेच्छा से करती है।

समग्रवादी व्यवस्था– इस राजनीति व्यवस्था में राजनीतिक शक्ति का केंद्रीकरण एक व्यक्ति या शक्तिशाली समूह की इच्छा पर आधारित होता है। इस व्यवस्था में एक अधिनायक या शक्तिशाली समूह की राज्य और राष्ट्र की संकल्पना को सर्वोपरि माना जाता है।

प्रतिनिधि लोकतंत्र– इसमें जनता अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन करती है। इसे प्रतिनिधि लोकतंत्र भी कहा जाता है। प्रतिनिधियों का निर्वाचन करने के कारण लोकतंत्र में उन व्यक्तियों के निर्वाचन की सुनिश्चितता बढ़ती है जो शासन की नीतियों और शासन के कार्य को संपादित करने के लिए समुचित प्रतिभा, कुशलता और ज्ञान रखते हैं।

एकदलीय व्यवस्था– एकदलीय व्यवस्था का मूल उद्देश्य सत्ता पर एक अधिकार बनाए रखना है । एक दलीय व्यवस्था में चुने गए दल का सर्वोच्च नेता एक प्रकार से अधिनायक की शक्ति का ही प्रयोग करता है। सत्ता में आने के बाद उस दल के लोग और उनका नेतृत्व कई बार निरंकुश ढंग से प्राधिकार का प्रयोग करते देखे जा सकते हैं। इस स्वरूप को रूस और चीन की साम्यवादी व्यवस्था में समझा जा सकता है। किंतु इसकी एक विशिष्ट विचारधारा होती है।

6.7 बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

(1) निम्नलिखित में से कौन–सी लोकतंत्र की विशेषता नहीं है?

(क) जनता द्वारा, जनता के लिए, जनता का शासन

(ख) मौलिक अधिकारों की व्यवस्था

(ग) क्रूरता के साथ जनता का दमन

(घ) सांस्कृतिक बहुलता

(2) निम्नलिखित में से कौन–सी व्यवस्था प्रतिनिधित्व का गुण रखती है?

(क) राजतंत्र

(ख) लोकतंत्र

(ग) अधिनायक तंत्र

(घ) उपरोक्त सभी

(3) निम्नलिखित में से कौन सी संकल्पना लोकतंत्र का आधार होती है

(क) समानता

(ख)स्वायतता

(ग) स्वतंत्रता

(4) समग्रवादी व्यवस्था की परिभाषित विशेषता क्या है?

(क) आज्ञा पालन के लिए बाध्यता

(ख) निरंकुश और स्वेच्छाचारी शासन

(ग) वैचारिक वाद–विवाद

(घ) उपरोक्त में से कोई नहीं

(5) निम्नलिखित में से कौन सा विकल्प अधिनायक तंत्र के लिए सटीक उदाहरण है?

(क) भारतीय संसदीय लोकतंत्र

(ख) ब्रिटेन का राजतंत्र

(ग) मुसोलिनी का इटली में शासन

(घ) उपरोक्त सभी

(6) निम्नलिखित में से कौन सी राजनीतिक व्यवस्था सार्वभौमिकप से स्वीकृत व्यवस्था केप में मान्य है?

(क) अधिनायकवादी व्यवस्था

(ख) लोकतांत्रिक व्यवस्था

(ग) साम्यवादी व्यवस्था

(घ) उपरोक्त कोई नहीं

लघु उत्तरी प्रश्न के उत्तर

1 (ग) 2 (ख) 3 (घ) 4 (ख) 5 (ग) 6 (घ)

लघु उत्तरी प्रश्न

1. लोकतांत्रिक व्यवस्था की क्या मुख्य विशेषताएं हैं?

2. लोकतांत्रिक और समग्रवादी व्यवस्था के बीच अंतर बताइए?

3. समग्रवादी राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न स्वरूपों की उदाहरण के साथ व्याख्या कीजिए?

4. राजनीतिक व्यवस्थाओं के वर्गीकरण की समस्या का विश्लेषण करते हुए अपने विचार प्रकट कीजिए?

6.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- अशरफ अली एवं शर्मा एल. एन. (1983) पॉलिटिकल सोशियोलॉजी ए न्यू ग्रामर ऑफ पॉलिटिक्स, यूनिवर्सिटी प्रेस, हैदराबाद।

- बोटोमोर टॉम(1993) पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, प्लूटो प्रेस, इंग्लैंड।
- डाहल रॉबर्ट (1995) मॉडर्न पॉलिटिकल एनालिसिस, प्रेंटिस हाल, भारत।
- ईस्टन डेविड (1965) ए फ्रेमवर्क फॉर पॉलिटिकल एनालिसिस, प्रेंटिस हाल, इंग्लेवोड क्लिफ्स।
- मेकाईवेली (1950) द डिस्कोर्सेस, न्यूयार्क।
- पी. सी. जैन (2023) राजनीतिक समाजशास्त्र, रावत प्रकाशन, जयपुर।
- वेपर सी एल (1973) पॉलिटिकल थॉट, इंग्लिश यूनिवर्सिटी प्रेस, इंग्लैंड।

इकाई 7 : राजनीतिक व्यवस्था और समाज का अंतर्सम्बन्ध

इकाई की रूपरेखा

7.0 उद्देश्य

7.1 प्रस्तावना

7.2 राजनीतिक व्यवस्था और समाज

7.3 राजनीतिक व्यवस्था और समाज के अंतर–संबंध की प्रकृति

7.4 अंतर–संबंध की गतिशीलता

7.5 सारांश

7.6 शब्दावली

7.7 बोध प्रश्न

7.8 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

7.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन द्वारा विद्यार्थी यह समझ पाएंगे कि–

1. राजनीतिक व्यवस्था और समाज को आप जानेंगे।
2. राजनीतिक व्यवस्था और समाज के अंतर–संबंध की प्रकृति को आप समझ सकेगें।
3. अंतर–संबंध की गतिशीलता के विषय मे जानकारी प्राप्त करेंगे।

7.1 प्रस्तावना

राजनीतिक व्यवस्था के अंतर्गत क्रियाशील राजनीतिक प्रक्रियाओं पर समाज का प्रभाव पड़ता है। एक समाज की राजनीतिक व्यवस्था संवैधानिक ढांचे के अन्तर्गत उन समस्त मुद्दों को स्थान देती है जो एक एक कर सामाजिक आधारों और परिस्थितियों के कारण अस्तित्व में आते हैं। राजनीतिक व्यवस्था का मूल उद्देश्य समाज के किसी एक विशिष्ट समूह का हित न होकर समाज के अंतर्गत सभी समूहों के सामान्य हित और कल्याण से जुड़ा है। समाज के विकास पर केंद्रित नीतियों, निर्णय; और उनको लागू करने का कार्य ही राजनीतिक व्यवस्था के अस्तित्व का मूल है। इस इकाई का उद्देश्य राजनीतिक व्यवस्था और समाज के अंतर संबंध को समझना है।

7.2 राजनीतिक व्यवस्था और समाज

राजनीतिक व्यवस्था और समाज का अंतर्सम्बन्ध द्विपक्षीय है और चक्रीय भी। राजनीतिक व्यवस्था के स्वयं में एक उपव्यवस्था होने के बाद भी प्रथम स्तर पर राजनीतिक समाजशास्त्र में इसका एक कारक के रूप में अध्ययन करने पर ही बल दिया जाता है।

राजनीतिक व्यवस्था एक व्यापक वर्णनात्मक दृष्टिकोण है। इसमें देखा जाता है कि राजनीतिक व्यवस्था के विभिन्न भाग और प्रस्तर एक दूसरे के साथ कैसे कार्य करते हैं। व्यवस्था का विश्लेषण, ऑस्ट्रियाई कनाडाई जीवविज्ञानी लुडविग वॉन बर्टलनफी और अमेरिकी समाजशास्त्री टैल्कॉट पार्सन्स (1902–79) से प्रभावित था। डेविड ईस्टन राजनीतिक व्यवस्था संबंधित अवधारणा के संस्थापक हैं। ईस्टन ने अपनी पुस्तक द पॉलिटिकल सिस्टम में बताया है कि किसी समाज में पारस्परिक क्रियाओं की उस व्यवस्था को राजनीतिक व्यवस्था कहते हैं जिससे उस समाज की आधिकारिक नीति का निर्धारण किया जा सके।

अध्ययन के द्वितीय स्तर पर राजनीतिक व्यवस्था चक्रीय रूप से कार्य करती है। जिसमें यह देखा जाता है कि यह समाज को कैसे प्रभावित करती है। अर्थात विश्लेषण के इस द्वितीय स्तर में राजनीतिक व्यवस्था के समाज पर प्रभाव का अध्ययन किया जाता है। स्पष्ट है कि राजनीतिक समाजशास्त्र में राजनीतिक व्यवस्था प्राथमिक भूमिका में एक कारक और द्वैतीयक भूमिका में एक घटक है। उदाहरण के लिए भारतीय समाज के अंतर्गत समाजशास्त्री और राजनीतिशास्त्री जाति की निरंतर रूपांतरित हो रही भूमिका को एक महत्वपूर्ण कारक के रूप में देखते हैं । अन्द्रे बेते और सुधा पाइ ने अपने अध्ययनों के द्वारा इस धारणा को बदल दिया की जाति का राजनीति में कोई स्थान नहीं है। राजनीतिक प्रतियोगिता और संघर्ष केवल उच्च जातियों तक ही सीमित नहीं है। विभिन्न जातियों में यह राजनीतिक प्रतियोगिता मध्यवर्ती जातियों और दलितों के निरंतर बढ़ने वाले राजनीतिक अभियोजन के कारण समाज के सभी प्रस्तरों में व्याप्त है। रूडोल्फ के अनुसार भारत में अशिक्षित लोगों को राजनीतिक सहभागिता के लिए ऊर्जा जाति ने ही दी। रजनी कोठारी और योगेश अटल ने भी बताया है कि जाति और राजनीति दोनों ने एक दूसरे को प्रभावित किया है।

राजनीतिक व्यवस्था को वर्तमान समय में प्रभावित कर रहे मुद्दे– राजनीतिक व्यवस्था और समाज के अंतर्सम्बन्ध गतिशील होते हैं। संपूर्ण वैश्विक समुदाय के समक्ष समय–समय पर कुछ चुनौतियां आती रहती हैं। इन चुनौतियों का सामना करने के लिए कुछ मुद्दे अंतरराष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण बनकर उभरते हैं। इन उभरते हुए मुद्दों को सभी देशों या राज्यों द्वारा अपनी अपनी नीतियों और निर्णय में सम्मिलित करना आवश्यक हो जाता है। वर्तमान में वैश्विक समुदाय के समक्ष सर्वप्रमुख मुद्दा पृथ्वी के तापमान में वृद्धि और जलवायु परिवर्तन से सुरक्षित रहने का है। दूसरा प्रमुख मुद्दा आतंकवाद से सुरक्षित रहने का है। अन्य राजनीतिक व्यवस्थाओं के साथ–साथ भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में भी इन दोनों प्रमुख मुद्दों को सम्मिलित करके योजनाबद्ध ढंग से कार्य किया जा रहा है। उदाहरण के लिए सतत विकास की नीति को कृषि एवं अन्य क्षेत्रो में सम्मिलित किया जा रहा है।

समाज की संरचना का राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव – निस्संदेह, समाज की संरचना का राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव पड़ता है किंतु इस प्रभाव का विश्लेषण करते समय यह समझना आवश्यक है कि राजनीतिक व्यवस्था का उद्देश्य समाज की नीतियों को योजनाबद्ध रूप से बनाने और लागू करने का होता है। इस स्थिति में समाज का राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव रचनात्मक रूप से पड़ता है। समाज की संरचना से जनित विभिन्न मुद्दों की दिशा और दशा की रूपांतरित करने के लिए राजनीतिक व्यवस्था एक माध्यम का कार्य करती है। इसलिए समाज की संरचना का प्रभाव राजनीतिक व्यवस्था पर पड़ने के बाद भी

इसके एक निश्चित संवैधानिक दायरे में कार्य करने के कारण राजनीतिक व्यवस्था समाज की संरचना को बदलते हुए समय के साथ समायोजित करने में सक्रिय और महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है।

राजनीतिक व्यवस्था के समुचित समायोजन का प्रबंध– राजनीतिक व्यवस्था बदलते हुए समय के साथ समाज का सामञ्जस्य बढाने के लिये उचित वातावरण बनाती है है। समायोजन का अनुकूल वातावरण बनाने के लिए पहली आवश्यकता होती है कि जनता के सामान्य हित के संवर्धन का लक्ष्य सामने रखकर नीति बनाई जाए। इसके साथ ही यह आवश्यक हो जाता है कि इन नीतियो का समय–समय पर समीक्षा कर इनमें परिवर्तन भी किया जाए। सामान्य नीतियों की सफलता के लिए जन सहभागिता की आवश्यकता भी होती है। अंततः नीतियों के सफलतापूर्वक क्रियान्वयन के लिए संप्रभुता और संवैधानिक परिपाटी की भी आवश्यकता होती है।

राजनीतिक व्यवस्था और समाज के बीच द्विपक्षीय संबंध होता है किंतु राजनीतिक व्यवस्था एक समाज के सार्वजनिक हितों से संबंधित नीतियों के प्रबंधन के लिए उत्तरदायी उप–व्यवस्था है। इस संबंध में राजनीतिक व्यवस्था की भूमिका प्राथमिक और समाज की भूमिका गौण है। राजनीतिक व्यवस्था का कार्य समाज को व्यवस्थित करने का है इसीलिए समाज के प्रभाव, अभिकरणों, राजनीतिक और नागरिक व्यवहार के प्रतिमानों को राजनीतिक व्यवस्था नियमित और संतुलित करके समाज के लिए अनुकूल वातावरण बनाती है। आलमंड एवं कोलमैन के अनुसार राजनीतिक व्यवस्था समाज में व्यवस्था को बनाए रखने वाली और उसमें परिवर्तन लाने वाली एक प्रभावशाली पद्धति है। इसीलिए समाज और राजनीतिक व्यवस्था को एक दूसरे से अलग नहीं किया जा सकता। इस अंतर–संबंध के दूसरे पक्ष को देखें तो एक देश की राजनीतिक व्यवस्था सामाजिक परिस्थितियों की ही देन है इसलिए अलग–अलग समय में, राजनीतिक व्यवस्थाओं के भिन्न भिन्न स्वरूप प्रकट होते हैं जिनका विस्तृत अध्ययन पूर्व में दी गई इकाई 6 में किया गया है। स्पष्ट है कि इन दोनों के मध्य संबंध है और राजनीतिक समाजशास्त्र में राजनीतिक व्यवस्था को समाज को एक दिशा विशेष में ले जाने वाले माध्यम के रूप में स्पष्ट किया जाता है।

7.3 राजनीतिक व्यवस्था और समाज के अंतर–संबंध की प्रकृति

राजनीतिक व्यवस्था के समाज पर प्रभाव का अध्ययन करने से पता चलता है कि जाति भारतीय समाज में लोकतंत्रीकरण की प्रक्रिया में आवश्यक रूप से बाधक न होकर उसके अभिकरण का भी एक कार्य करती है। जाति के राजनीति से जुड़ने के कारण दलित मुद्दों एवं अन्य पिछड़ा वर्ग के मुद्दों को राजनीतिक प्रक्रिया में न केवल महत्वपूर्ण स्थान मिला अपितु समय के साथ उनकी राजनीतिक संयोजकता के महत्व को वर्तमान में किसी भी राजनीतिक दल के द्वारा नकारा जाना संभव नहीं है। यह समझ जा

सकता है कि विभिन्न प्रस्तरों की जातियाँ मिलजुल कर गठजोड़ बनाती हैं। उनकी इस गतिविधि के माध्यम से लोकतांत्रिक व्यवस्था की प्रक्रिया धीमे ही सही किंतु निरंतर रूप से आगे बढ़ रही है। निस्संदेह जाति, संकीर्ण राजनीति वाली विचारधारा से बाहर निकल रही है। प्रत्येक राजनीतिक दल के लिए समाज के सभी समूहों और जातियों के लोगों का समर्थन प्राप्त करना उसके अस्तित्व की प्राथमिक आवश्यकता बनकर सामने आया है। समाजशास्त्रियों और राजनीतिशास्त्रियों की एक धारा जाति की राजनीति में इस बढ़ती भूमिका को राष्ट्र निर्माण और एकीकरण के लिए अवरोध भी मानती है। किंतु इस संबध में यह समझना भी आवश्यक है कि व्यवहारिक जीवन में एक बड़ी जनसंख्या को आज भी जिस जातीय असमानता का सामना करना पड़ता है उसके कारण उनके विशिष्ट मुद्दों को निर्वाचन की लोकतांत्रिक प्रक्रिया के माध्यम से ही नीतियों के अंतर्गत स्थान मिलने की संभावना बढ़ती है।

राजनीति और समाज के अंतर संबंध को समझने का दूसरा महत्वपूर्ण आधार क्षेत्रीयता और क्षेत्रवाद का है। प्रत्येक समाज में भौगोलिक और आर्थिक विविधता के कारण विभिन्न क्षेत्रों में अलग–अलग संस्कृतियों के रूप सामने आते हैं। बहुल संस्कृति वाले विकासशील देशों जैसे भारत में ये सामाजिक और सांस्कृतिक विविधता और भी अधिक बढ़ जाती । क्षेत्रीय विषमता के कारण विभिन्न राज्यों के बीच प्राकृतिक संसाधनों जैसे नदी के पानी से लगाकर, खनिजों की खाने एवं जंगलों को लेकर चलने वाला तनाव इस क्षेत्रीयता की उपज है। दिल्ली में बिहारियों और उत्तर–पूर्वी राज्य के लोगों के प्रति, मुंबई में गैर–मराठियों के प्रति जो विरोध सामने आता है उसे समाज के राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव के रूप में देखा जा सकता है। कई बार इनके बीच न्यायालय और संसद को बीच बचाव करना पड़ता है।

7.4 अंतर्सम्बन्ध की गतिशीलता

समाज और राजनीतिक व्यवस्था के अंतर संबंध पर भी समाज की संरचना और परिवर्तन का नियम यथावत लागू होता है किसी भी समय निश्चित की गई संवैधानिक योजनाओं को अंतिम नहीं कहा जा सकता। सामाजिक संवेदनशीलता को संवैधानिक ढांचे के अंदर सुरक्षित रखने के लिए अलग–अलग संस्थाएं कार्य करती है। भारतीय संविधान में जातियों से जुड़े किसी भी मुद्दे की संयोजन के लिए संसद के साथ–साथ स्वतंत्र न्यायपालिका की विशिष्ट भूमिका है। इस संबंध में वर्तमान में, ई. वी. चिन्नैया की बेंच के फैसले (2004) को सर्वोच्च न्यायालय ने एक ऐतिहासिक निर्णय (2024) द्वारा पलट दिया है। अब दलित जातियों का कोई भी उपवर्गीकरण अनुच्छेद 14 का उल्लंघन नहीं होगा। सर्वोच्च न्यायालय ने इस ऐतिहासिक फैसले (2024) में कहा है कि जिस तरह अन्य पिछड़ा वर्ग की सूची में 'पिछड़े' और 'अधिक पिछड़े' में उप–विभाजन किया जा सकता है; वैसे ही दलितों में भी उनके विकास के लिए उप–वर्गीकरण किया जा सकता है। इसीलिए भारत के अंतर्गत राज्यों को (अन्य जातियों को किसी भी लाभ से वंचित किए

बिना) अपने राज्य में सबसे कमजोर अनुसूचित जातियों को अधिमान्य उपचार देने का प्राधिकार है। इस ऐतिहासिक फैसले के द्वारा सर्वोच्च न्यायालय ने किसी वर्ग के भीतर उप–वर्गीकरण को वास्तविक समानता सुनिश्चित करने के लिए एक संवैधानिक आवश्यकता के रूप में पुनर्स्थापित किया है।

समाज में विकास के लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन आवश्यक है। राजनीतिक व्यवस्था और समाज का अंतर्संबंध शक्ति के विकेंद्रीकरण के सिद्धांत पर कार्य करता है। राजनीतिक व्यवस्था में केंद्र से स्थानीय शासन की दिशा में शक्तियों के विकेंद्रीकरण से स्थानीय संसाधनों का प्रभावी प्रबंधन संभव होता है।

जबकि समाज के बाहर क्रियाशील प्रक्रिया में वैश्वीकरण सर्वप्रमुख है जो समकालीन समाज को आमूल चूल रूप से प्रभावित कर रही है। जलवायु परिवर्तन और तापमान वृद्धि दो प्रमुख मुद्दे हैं जो वैश्विक चर्चा में हैं। इसी प्रकार राजनीतिक व्यवस्था और समाज के अंतर संबंध को प्रभावित करने वाले कारक में नागरिक समाज तेजी से बढ़ता हुआ एक महत्वपूर्ण कारक है। नागरिक समाज का तात्पर्य उस समाज से है जहां स्वैच्छिक रूप से संगठित नागरिक, सार्वजनिक क्षेत्र में, अपने सार्वजनिक हितों के लिए स्वयं आगे आते हैं। स्वैच्छिक संगठन के द्वारा क्रियान्वित इस नागरिक समाज में विचारों का आदान–प्रदान, आवश्यक सूचना को साझा करना, सार्वजनिक हितों को चिन्हित करके, सरकार के सामने मांगे रखना और तय करना आता है। इसके सा और समुचित रूप से लागू करने के लिए व्यवस्था की जवाबदेही तय करना आता है।

7.5 सारांश

उपरोक्त के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि राजनीतिक व्यवस्था और समाज के बीच का संबंध द्विमार्गीय और चक्रीय है । निस्संदेह, राजनीतिक व्यवस्था समाज को प्रभावित करती है और समाज भी राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करता है। किंतु राजनीतिक समाजशास्त्र में मुख्य दृष्टिकोण इस अंतर संबंध के प्रथम पक्ष पर केंद्रित है। भाषा, जाति , क्षेत्र जैसे कई सामाजिक आधार समाज के आन्तरिक पक्ष से जबकि पर्यावरण, आतंकवाद, जैसे वैश्विक आधार समाज के बाहर क्रियाशील होते हैं। बहुल कारकों द्वारा द्वारा गतिशील परिस्थितियों में सभी तत्वों को एक ही नीति के अंतर्गत एक समय में सम्मिलित करके आगे नहीं बढ़ा जा सकता। ऐसी स्थिति में राजनीतिक व्यवस्था द्वारा प्राथमिकता के आधार पर सर्वहितकारी प्रतिमानों को चिन्हित, संगठित और सुदृढ़ किया जाता है।

राजनीतिक व्यवस्था का समाज पर प्रभाव उस कंडीशनिंग से जुड़ा हुआ है। जो एक ऐसी व्यावहारिक प्रक्रिया है जिसमें राजनीतिक प्रतिमानों का सुदृढ़ीकरण किया जाता है। इस सुदृढ़ीकरण के परिणामस्वरूप उस समाज में क्रियान्वित शक्तियों की प्रतिक्रिया नियमित की जाती है। इस सुदृढ़ीकरण की

प्रक्रिया द्वारा राजनीतिक व्यवस्था, व्यवहार के उन प्रतिमानों को प्रोत्साहित करती है जो संवैधानिक परिधि के अंतर्गत आते हैं। इसके साथ ही, राजनीतिक व्यवस्था, चिन्हित किए गए लक्ष्यों में रूपांतरण को संभव बनाती है। लक्ष्यों में रूपांतरण से तात्पर्य है कि एक समाज एक ही लक्ष्य लेकर विकास के पथ पर सदैव आगे नहीं बढ़ सकता। समय–समय पर लक्ष्य और साधनों की समीक्षा की जाती है । बदलती हुई परिस्थितियों और आवश्यकताओं को देखते हुए लक्ष्यों और साधनों में परिवर्तन भी किया जाता है। समुचित समायोजन के लिए कई बार नीति और उसे लागू करने की रणनीति भी बदली जाती है। यह कार्य राजनीतिक व्यवस्था के क्षेत्र में आते हैं। इसीलिए राजनीतिक व्यवस्था और समाज के द्विपक्षीय संबंध का विश्लेषण करते समय यह समझना महत्वपूर्ण है कि राजनीतिक व्यवस्था का समाज पर प्रभाव निर्णयात्मक है। जबकि समाज का राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव सीमित और अवश्यंभावी है। राजनीतिक व्यवस्था समाज की ही एक उप–व्यवस्था है। समाज के राजनीतिक व्यवस्था पर प्रभाव को जड़ से समाप्त नहीं किया जा सकता।

स्पष्ट है कि राजनीतिक व्यवस्था कभी भी समाज के प्रभाव से बाहर नहीं हो सकती। जबकि राजनीतिक व्यवस्था का मुख्य कार्य एक समाज के सामाजिक– सांस्कृतिक एवं आर्थिक सम्बन्धों, और व्यवहारों को संवैधानिक कार्य प्रणाली के अंदर लाना है जिससे उनमें आपस में मतभेद, तनाव और संघर्ष को स्थायी या अस्थायी रूप से नियमित किया जा सके।

7.6 शब्दावली

नागरिक समाज– नागरिक समाज का तात्पर्य है उस समाज से है जहां स्वैच्छिक रूप से संगठित नागरिक, सार्वजनिक क्षेत्र में, अपने सार्वजनिक हितों के लिए स्वयं आगे आते हैं।

जलवायु परिवर्तन– जलवायु परिवर्तन का तातपर्य तापमान और मौसम के पैटर्न में दीर्घकालिक बदलाव से है। मानव गतिविधियाँ ग्रीनहाउस गैसों का कारण बन रही हैं जो कम से कम पिछले दो हजार वर्षों में किसी भी समय की तुलना में दुनिया को तेजी से गर्म कर रही हैं। जलवायु परिवर्तन प्रदर्शन सूचकांक (सीसीपीआई), जलवायु परिवर्तन को कम करने के उद्देश्य से चल रहे वैश्विक प्रयासों का अद्यतन संस्करण हर साल संयुक्त राष्ट्र जलवायु परिवर्तन सम्मेलन में प्रस्तुत किया जाता है। सीसीपीआई को पहली बार 2005 में प्रकाशित किया गया था।

वैश्वीकरण– वैश्वीकरण विचारों, वस्तुओं, और व्यक्तियों विश्व में एक राष्ट्र से दूसरे राष्ट्र में प्रवाह है। यह कई स्वरूपों में सभी समाजों को प्रभावित करती है उदाहरण के लिए राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक।

7.7 बोध प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. राजनीतिक व्यवस्था पर टिप्पणी लिखिए।
2. अंतर–संबंध की गतिशीलता को संक्षिप्त मे लिखिए।
3. निम्नलिखित में से कौन सा विकल्प सही है?

   कथन 1 राजनीतिक व्यवस्था समाज को प्रभावित करती है।

   कथन 2 समाज,राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करता है।

   (क) कथन एक सही है।

   (ख) कथन दो सही है।

   (ग) दोनों कथन सही हैं।

   (घ) दोनों में से कोई कथन सही नहीं है।

4. समाज के कौन से आधार राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करते हैं?

   (क) जातीय संकीर्णता

   (ख) क्षेत्रीयता

   (ग) भाषायी संकीर्णता

   (घ) उपरोक्त सभी

5. ई. वी. चिन्नैया का सर्वोच्च न्यायालय का निर्णय (2004) निम्नलिखित में से किससे संबंधित है?

   (क) अनुसूचित जातियों का विकास

   (ख) राष्ट्रीय सुरक्षा

   (ग) महिला विकास

   (घ) उपरोक्त सभी

6. निम्नलिखित में से कौन सा विकल्प सही है?

   कथन 1 राजनीतिक व्यवस्था और समाज के बीच संबंध 'गतिशील' है।

   कारण 2 राजनीतिक व्यवस्था बदलते हुए समय के साथ नई परिस्थितियों के अनुसार समाज में पुनर्वितरण की नीति और निर्णय को आकार देता है।

   (क) कथन सही है किंतु कारण गलत है।

   (ख) कारण सही है।

   (ग) कथन सही है और कारण कथन की सही व्याख्या कर रहा है।

   (घ) कथन सही है किंतु कारण कथन की सही व्याख्या नहीं कर रहा।

7. राजनीतिक व्यवस्था द्वारा निम्नलिखित में से किस एक का प्रबंधन न होने पर राष्ट्र की एकता और अखंडता के लिए बड़ा खतरा बन जाता है?

   (क) जाति संकीर्णता

   (ख) भाषायी संकीर्णता

   (ग) क्षेत्रवाद

   (घ) उपरोक्त सभी

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. क्या समाज की संरचना राजनीतिक व्यवस्था को प्रभावित करती है?
2. राजनीतिक व्यवस्था समाज को किस प्रकार प्रभावित करती है?
3. राजनीतिक व्यवस्था और समाज के अंतर संबंध में किसकी भूमिका प्राथमिक है और क्यों?
4. समाज के बाहर क्रियाशील कौन से प्रमुख मुद्दे राजनीतिक व्यवस्था को वर्तमान समय में प्रभावित कर रहे हैं?

लघु उत्तरीय प्रश्न के उत्तर

3 (ग) 4 (घ) 5 (क) 6 (ग) 7 (घ)

7.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- अशरफ अली एवं शर्मा एल. एन. (1983)रू पॉलिटिकल सोशियोलॉजीरू ए न्यू ग्रामर ऑफ पॉलिटिक्स, यूनिवर्सिटी प्रेस, हैदराबाद।
- बोटोमोर टॉम(1993): पॉलिटिकल सोशियोलॉजी, प्लूटो प्रेस, इंग्लैंड।
- ईस्टन डेविड (1965), फ्रेमवर्क फॉर पॉलिटिकल एनालिसिस,प्रेंटिस हाल,इंग्लेवोड क्लिफ्स।
- पी. सी. जैन (2023): राजनीतिक समाजशास्त्र, रावत प्रकाशन, जयपुर।
- पाई सुधा (2001) सोशल कैपिटल,पंचायत्स एंड ग्रासरूट्स डेमोक्रेसी,पॉलिटिक्स ऑफ दलित असर्शन इन उत्तर प्रदेश,
- इकोनामिक एंड पॉलीटिकल वीकली, वॉल्यूम 36, इश्यू नंबर 08, 24 फरवरी
- दि हिन्दू, 2 अगस्त 2024

  https://ccpi.org

इकाई 8 : प्रजातंत्र : परिभाषा एवं विशेषताएं

इकाई की रूपरेखा

8.0 उद्देश्य

8.1 प्रस्तावना

8.2 प्रजातंत्र का अर्थ एवं परिभाषा

8.3 प्रजातंत्र की अवधारणा

8.4 प्रजातंत्र का इतिहास

8.5 आधुनिक लोकतंत्र का प्रक्रियात्मक विचार

8.6 प्रजातंत्र की विशेषताये

8.7 सारांश

8.8 बोध प्रश्न

8.8.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

8.8.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

8.8.3 बहुविकल्पीय प्रश्न

8.9 सन्दर्भ सूची

8.0 उद्देश्य

इस इकाई मे आप जान सकेंगे –

- प्रजातंत्र का अर्थ एवं परिभाषा को जान सकेंगे।
- प्रजातंत्र की अवधारणा को आप समझ सकेगे।
- प्रजातंत्र के इतिहास को आप जान सकेंगे।
- आधुनिक लोकतंत्र के प्रक्रियात्मक विचार को समझ सकेगे।
- प्रजातंत्र की विशेषताए को समझेगें।

8.1 प्रस्तावना

जनतांत्रिक व्यवस्था निश्चित रूप से बीसवीं सदी की सर्वाधिक लोकप्रिय राजनीतिक अवधारणा हें यह जनस्वतंत्रता, जनकल्याण एवं जनसुरक्षा जैसे मूल्यों में विश्वास करती है तथा इन मूल्यों के मध्य परस्पर समन्वय स्थापित करने की दिशा में प्रयासरत रहती है। इस व्यवसाी की लोकप्रियता इतने चर्मोत्कर्ष पर है कि आज कोई भी देश चाहें वहां लोकतंत्र का स्वरूप जैसा भी हो, लेकिन अपने को लोकतांत्रिक ही कहलाना पंसद करता है।

उदारवादी लोकतांत्रिक व्यवस्था आधुनिक समाज में राजनीतिक व्यवस्था का सर्वाधिक प्रचलित स्वरूप है जिसे दुनिया के अधिकांश देशों द्वारा अपनाया गया है। अब्राहम लिंकन ने इस लोकतांत्रिक व्यवस्था की परिभाषा देते हुए कहा है कि "लोकतंत्र जनता का, जनता के लिए, जनता द्वारा शासन है।" इस तरह लोकतंत्र एक ऐसी शासन व्यवस्था है जिसमें जनता का शासन होता है अर्थात् सरकारी तंत्र का संचालन जनता के चुने हुए प्रतिनिधि करते हैं और जो अपनी नीतियों एवं कार्यों हेतु जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

प्रजातंत्र जनता द्वारा, जनता के लिए, जनता का शासन है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में सरकार सभी समाजों के हितों के लिए काम करती है। यहीं कारण है कि सरकार हर साल विभिन्न योजनाओं की शुरूआत करती है। राजनीतिक दल, समूह जनता की इच्छाओं, आकांक्षाओं को सरकार के सामने रखते हैं, लेकिन अरस्तू ने तो प्रजातंत्र को विकृत रूप मानते हुए इसे अयोग्य शासन माना था। केवल मात्र साधारण

योग्यता के आधार पर शासन व्यवस्था में भर्ती होना ही, अयोग्यता का द्योतक है। प्रजातंत्र में धन, शक्ति के आधार पर अयोग्य व्यक्ति शासन में प्रवेश करते हैं इसलिए प्रजातंत्र में अयोग्य व्यक्तियों की भीड़ पायी जाती है ।

प्रजातंत्र शासन व्यवस्था की एक ऐसी व्यवस्था है जो जनसाधारण के हितों की रक्षा करता है इसलिए विश्व के अधिकांश देशों में प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था अपनाई गई है। यही कारण है कि आधुनिक युग प्रजातांत्रिक युग के नाम से पुकारा जाता है। वास्तव में प्रजातंत्र २०वी. शताब्दी का सबसे लोकप्रिय तथा प्रचलित शासन पद्धति है। प्रजातांत्रिक भावना का इतना तीव्र गति से विकास हुआ है कि यह न केवल अब शासन का स्वरूप ही रह गया है समाज स्वरूप तथा जीवन का दर्शन बन गया है। अतः आधुनिक युग में प्रजातंत्र का स्वरूप विश्वव्यापी हो गया है।

8.2 प्रजातंत्र का अर्थ एवं परिभाषाएं

व्यापक अर्थबोध में लोकतंत्र एक विशेष राजनीतिक स्थिति एक विशेष सामाजिक परिस्थिति है एक नैतिक धारणा है, जो सामाजिक मूल्यों की समुन्नति सामाजिक जीवन के स्तरोन्नयन एवं समाज में मनुष्य के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास का लक्ष्य लेकर व्यवस्था के उन्नयन की दिशा में निरन्तर ठोस कदम उठाने के लिए तत्पर रहता है। इस राजनीतिक व्यवस्था की नीतियां एवं निर्णय प्रक्रिया हमेशा समाज सापेक्ष और जनहित से प्रासंगिक होती है।

जनतांत्रिक व्यवस्थाओं की लोकप्रियता एवं महत्त्व का सार सूत्र है–मनुष्य के व्यक्तित्व के सर्वांगीण विकास से प्रासंगिक दृष्टिकोण। जनतांत्रिक व्यवस्थाओं की सामाजिक–आर्थिक स्थिति, अविर्भाव एवं स्थायित्व का मूल संवाहक तत्व तत्व है – इसकी बुनियादी अवधारणा, जो सामाजिक–राजनीतिक सामनता, कानून के समक्ष समानता एवं सामाजिक न्याय, जैसे व्यापक अर्थबोध के संदर्भों को साथ लेकर चलती है। इस व्यवस्था में समानता के सिद्धान्त के आलोक में तथा समानता की भावना के परिप्रेक्ष्य में प्राकृतिक असमानता के साथ सामंजस्य स्थापित करने का निरन्तर प्रयास जारी रहता है। जनतांत्रिक व्यवस्थाओं की गतिविधियाँ हमेशा जनसरोकारगत दिशा में क्रियाशील रहती है। इसमें सत्ता–सूत्रों के माध्यम से निरन्तर प्रयास किया जाता है कि एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था कायम की जा सकें, जिसमें व्यक्ति के अपने व्यक्तित्व विकास और विचार अभिव्यक्ति के लिए अनुकूल अवसर मिल सकें।

लोकतंत्र के बारे में बहुत–सी अंतर्विरोधी अवधारणाएँ प्रचलित हैं और इसके बहुत से अर्थ बताए जाते हैं। इस अवधारणा को अधिक स्पष्ट और सटीक रूप में प्रस्तुत करने के लिए प्रतिष्ठित अमेरिकी राजनीतिक सिद्धांतकार रॉबर्ट डाहल ने इसे बहुतंत्र की संज्ञा दी है। इस अध्याय में लोकतंत्र के बारे में

प्रचलित विभिन्न अंतर्विरोधी अवधारणाओं को समझने का प्रयास किया गया है। लोकतंत्र की इस परिचर्चा में यद्यपि लोकतंत्र को निर्वाचन क्षेत्र से परे जाकर समझने का प्रयास किया गया है फिर भी राजनीतिक संस्थाओं को इस रूप में शामिल किया गया है कि इनसे नागरिकों की यथास्थितियां प्रभावित होती हैं। साथ ही सामाजिक संदर्भों जिनके अभाव में राजनीतिक स्वतंत्रता और समानता के आधार महज औपचारिकता भर न रह जाएं उसको भी लोकतंत्र की विस्तृत परिभाषा में शामिल किया गया है। अध्याय में निम्न बिंदुओं पर विशेष ध्यान दिया जाएगाः प्रथम खंड में, लोकतंत्र की विभिन्न अवधारणाओं व सिद्धांतों की समीक्षा द्वारा लोकतंत्र के महत्त्व को समझने का प्रयास किया जाएगा। साथ ही लोकतंत्र के इतिहास की संक्षिप्त समीक्षा की जाएगी। दूसरे खंड में मुख्य रूप से चर्चा प्रक्रियात्मक लोकतंत्र और उसकी समालोचना पर केंद्रित होगी। प्रतिनिधित्व एवं भागीदारी तथा विमर्शी लोकतंत्र के मुद्दे पर अंतिम खंड में विस्तृत चर्चा की जाएगी।

प्रजातंत्र (डेमोक्रेसी) शब्द की उत्पत्ति प्राचीन ग्रीक शब्द डेमोक्रेटिया (demokrati), डेमोस (demos) जिसका अर्थ लोग होता है तथा क्रेटोस (kratos) जिसका अर्थ शक्ति अथवा शासन होता है। इस प्रकार इसे एक साथ जोड़ने पर प्रजातंत्र (डेमोक्रेसी) का व्यापक शाब्दिक अर्थ लोगों द्वारा शासन होता है। इस प्रकार प्रजातंत्र की मूल अवधारणा यह है कि लोगों को यह तय करने का अधिकार है कि उन पर किसका शासन होगा? आज संवैधानिक शासन, प्रतिनिधि सरकार, मौलिक अधिकार, स्वतंत्रता, न्याय और समानता के अधिकार जैसी विशेषताएं एक लोकतांत्रिक राज्य को एक अलोकतांत्रिक राज्य से अलग पहचान देती हैं।

लोकतन्त्र से अभिप्राय जनता के शासन से है जिसमें जनता की सहभागिता प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष किसी भी रूप में हो सकती है। लोकतन्त्र के व्यापक अर्थ के सन्दर्भ में विद्वानों में मतभेद हैं। विभिन्न विद्वानों ने लोकतन्त्र को निम्नलिखित रूप में परिभाषित किया गया है :–

अब्राहम लिंकन के अनुसार लोकतन्त्र यह सरकार है जिसमें जनता का शासन, जनता के लिए तथा जनता के द्वारा किया जाता है।

डायसी के मतानुसार– लोकतन्त्र सरकार का वह स्वरूप है जिसमें जनता का एक बड़ा भाग शासन में भाग लेता है।।

अरस्तू के अनुसार– प्रजातन्त्र सरकार राज्य के बहुसंख्यक लोगों की सरकार है।"

हेरोडोटस के शब्दों में–लोकतन्त्र शासन का वह रूप है जिसमें राज्य की सर्वोच्च सत्ता सम्पूर्ण समाज के हाथों में होती है।।

गिडिन्स प्रजातंत्र केवल एक शासन का नाम नहीं है। बरना राज्य का भी एक रूप है तथा समाज के रूप का भी नाम है या फिर तीनो का एक सम्मिश्रण है।

लेविस के अनुसार प्रजातंत्र मुख्य रूप से वह सरकार है जिसमें सम्पूर्ण राष्ट्र की बहुवाख्यक जनता संप्रभु–शक्ति के प्रयोग में भाग लेती है।

8.3 प्रजातंत्र की अवधारणा

प्रजातंत्र, राजनीतिक संस्थाओं और राजनीतिक आदर्शों दोनों का ही समुच्चय है। प्रजातंत्र संज्ञा और विश्लेषण दोनों रूपों में प्रयोग किया जा सकता है। संज्ञा के रूप में प्रयोग किए जाने पर यह एक देश को कैसे संचालित किया जाना चाहिए से संबंधित एक अमूर्त विचार है। इससे भी बढ़कर यह एक अति महत्त्वपूर्ण प्रतीक है, क्योंकि अमूर्त विचार अस्पष्ट होते हैं। इसलिए प्रजातंत्र के विचार को मजबूत बनाने के लिए उसका राजनीतिक संस्थाओं से जुड़ा होना आवश्यक है। तो फिर प्रजातंत्र का मूल सिद्धांत क्या है? इसका मूल सिद्धांत स्व–शासन है यह शब्द जिस ग्रीक शब्द डेमोक्रेटिया से आया है उसका अर्थ ही है लोगों' द्वारा शासन इस प्रकार, अपने शाब्दिक और सबसे समृद्ध अर्थ में प्रजातंत्र सिर्फ जनता द्वारा शासकों का चुनाव नहीं बल्कि दोनों के बीच किसी भी अलगाव को नकारने को संदर्भित करता है। एक आदर्श प्रजातंत्र स्व–शासन का वह प्रत्यक्ष शासन है जिसमें सभी नागरिक समानतापूर्वक एवं खुले विचार–विमर्श से सामूहिक निर्णयों को आकार देने में भागीदार बनते हैं। लेकिन वर्तमान में स्व–शासन नहीं बल्कि चुनी हुई सरकार ही शासन का मुख्य आधार है।

आज इस मत पर व्यापक सहमति है कि चुनावों में भागीदारी सभी वयस्क नागरिकों का हक होना चाहिए। लेकिन क्या हो यदि कानूनी तौर पर वोट देने के हकदार लोग गरीबी अथवा अज्ञानतावश अपने लोकतांत्रिक अधिकारों के ज्ञान से वंचित रह जाने पर वोट न दे पाएं? और उस प्रजातंत्र के बारे में क्या कहा जाए जहाँ कुछ नागरिकों की राजनीतिक भागीदारी केवल कुछ वर्षों में चुनाव में मात्र एक वोट डालने तक ही सीमित है जबकि अन्य का राजनीतिक नेताओं से नियमित संपर्क रहता है? नागरिकों के भागीदारी के प्रश्न पर जोसेफ शुम्पीटर का मानना है कि निचले तबके के नागरिकों का दायित्व प्रतिनिधियों के निर्वाचन तक ही सीमित होता है जो प्रजातंत्र की एक अवधारणा है।

8.4 प्रजातंत्र का इतिहास

प्राचीन यूनानियों को प्रजातंत्र के संस्थापक के रूप में जाना जाता है। प्रजातंत्र की ऐतिहासिक उत्पत्ति की जड़ें 5वीं सदी ईसा पूर्व यूनान के प्राचीन नगर–राज्यों में मिलती हैं. एथेम जिसका एक प्रमुख

उदाहरण है। प्राचीन एथेंस में प्रजातंत्र की उत्पत्ति हुई, एथेंस, प्राचीन यूनान का सबसे बड़ा पोलीस (नगर–राज्य) था। एथेंस को पोलीस का संचालन अरस्तू द्वारा निर्मित लोकतांत्रिक सिद्धांत काम के बदले शासन के आधार पर होता था। यह सिद्धांत नगर–राज्य की सभी सरकारी संस्थाओं पर लागू होता था। सभी नागरिक विधान–सभा की बैठकों, सरकारी परिषदों की सेवाओं और नागरिक पंचायतों में भाग ले सकते थे। प्राचीन यूनानी प्रजातंत्र ने नागरिकों को अपने समुदाय की सामान्य भलाई के लिए सीधे शासन में भाग लेने के लिए समान अधिकार दिए। प्राचीन यूनान के प्रजातंत्र में नागरिकों के व्यक्तिगत और निजी अधिकारों की कोई भावना नहीं थी। नागरिकों द्वारा बहुमत का नियम था, पोलीस के लोग नियम बनाने वाली संस्थाओं की सभाओं में सीधे तौर पर भाग ले सकते थे।

हमारे संविधान को प्रजातंत्र कहा जाता है क्योंकि सत्ता किसी अल्पसंख्यक की नहीं बल्कि सभी लोगों की होती है। निजी विवादों को निपटाते समय कानून के सामने हर कोई समान है; जब सार्वजनिक जिम्मेदारी के पदों पर किसी एक व्यक्ति को दूसरे से पहल रखने का सवाल है, तो किसी एक विशेष वर्ग की सदस्यता नहीं है, बल्कि अमुक व्यक्ति की वास्तविक क्षमता मायने रखती है। इसलिए हमारी राजनीति में ऐसा नहीं है कि कोई गरीबी के कारण राज्य की सेवा से वंचित रह जाए। और, जिस तरह हमारा राजनीतिक जीवन स्वतंत्र और खुला है, उसी प्रकार हमारा दिन–प्रतिदिन का जीवन एक–दूसरे के साथ हमारे संबंधों में है। यहां का प्रत्येक व्यक्ति अपने निजी मामलों के साथ–ही–साथ राज्य के मामलों में भी रुचि रखता है यहां तक कि जो व्यक्ति अपने निजी व्यवसाय में बहुत अधिक व्यस्त भी रहता है उसे भी सामान्य राजनीति की अच्छी–खासी जानकारी होती है। यह हमारी खासियत है हम यह नहीं कहते हैं कि राजनीति में दिलचस्पी नहीं लेने वाला व्यक्ति एक ऐसा व्यक्ति है जो अपने व्यवसाय के बारे में सोचता है; हम कहते हैं कि उसका यहां कोई काम ही नहीं है। हम यूनानी लोग नीतियों के आधार पर हमारे निर्णय लेते हैं या उन्हें उचित चर्चा के लिए प्रस्तुत करते हैं।

पेरिकल एक ऐसे समुदाय का वर्णन करते हैं जिसमें नागरिक सामान्य जीवन के निर्माण और उसके परिकार की क्रियाओं में भाग ले सकते हैं। इस सिद्धांत के अनुसार, परिस्थितियां अथवा धन की कमी सार्वजनिक मामलों में नागरिकों की भागीदारी में कभी भी बाधा नहीं बनती है। सभी नागरिक आपस में मिलकर बहस करते हैं, निर्णय लेते हैं और नियमों का निर्माण करते हैं। सरकार का सिद्धांत प्रत्यक्ष भागीदारी का सिद्धांत है। और सरकार की खुद की प्रक्रिया पेरिकल्स द्वारा अनुशंसित उचित चर्चा पर आधारित है जो कि, स्वतंत्र और अप्रतिबंधित विमर्श है, जिसकी गारंटी संप्रभु विधानसभा (इस्कलेसिया) में बोलने के समान अधिकार द्वारा दी गई है। इसमें मान्यताओं, परंपराओं और नृशंस बल पर आधारित न होकर कानून, राज्य पूर्ण दोषरहित तर्क–वितर्क के आधार पर निर्मित होता है। राज्य के नियम नागरिकों के

नियम हैं। इसीलिए पेरिकल्स कहते हैं, नियम हम बनाते हैं। यदि नियमों को आम जीवन के ढांचे के अनुसार बनाया गया है तो यह वैध रूप से आज्ञाकारिता को स्थापित करता है। इस प्रकार नियम एवं कानून सबंधी विचार, यथोचित प्रक्रियाएं और लोकतांत्रिक वैधता की आरंभिक और स्पष्ट झलक प्राचीन यूनान की राजनीति में मिलती है। एथेंस में राज्य और समाज के बीच कोई भेदभाव नहीं था, यहां शासन भी नागरिक राज्यपालों द्वारा किया जाता था। नागरिक एक ही समय में राजनीतिक प्राधिकरण के एक अंग और सार्वजनिक नियमों और विनियमों के निर्माता भी थे। लोग (डेमोस) विधायी और न्यायिक कार्यों में संलग्न थे। यूनानी प्रजातंत्र को नागरिक सदाचार के सिद्धांत के लिए एक सामान्य प्रतिवद्धता की आवश्यकता थी नगर राज्य के लिए समर्पण और सार्वजनिक एवं निजी मामलों की अधीनता। सार्वजनिक और निजी आपस में संबद्ध थे। इसके अलावा सभी नागरिक खुद की आवश्यकताओं को पूर्ण कर पोलीस के माध्यम से सम्मानपूर्वक जी सकते थे। हालांकि इस प्रजातंत्र में सभी को नागरिकता प्राप्त नहीं थी, जिनमें मुख्य रूप से महिलाएं गैर–प्रवासी और गुलाम शामिल थे।

8.5 आधुनिक लोकतंत्र का प्रक्रियात्मक विचार

लोकतंत्र के अधिवक्ताओं के अनुसार, एथेनियन नगर–राज्य से बड़े और अधिक आबादी बाले राष्ट्रों के विकास ने लोकतांत्रिक प्रतिनिधित्व के सवाल पर नए सवाल उत्पन्न किए। इस बात की अब बहुत कम संभावना थी कि एक निश्चित आकार से बडे देश के सभी लोग स्व–शासन में भाग ले सके। राजनीतिक प्रतिनिधित्व इस समस्या को हल करता है, जिसमें नागरिकों के हितों का फैसला कुछ चुने हुए जन प्रतिनिधि द्वारा होता है। इस प्रकार आधुनिक लोकतंत्र का विचार प्राचीनकाल से आज काफी भिन्न है। अतीत की तरह, लोकतंत्र आज लोगों का लोगों के लिए, लोगों द्वारा शासन है लेकिन आधुनिक लोकतंत्र में जनता अप्रत्यक्ष रूप से अपने निर्वाचित प्रतिनिधियों के माध्यम से सरकार को चुनती है, न कि सरकार सीधे लोगों द्वारा संचालित की जाती है, जैसा कि प्राचीन समय में होता था। प्राचीनकाल में नागरिकता की सीमित परिभाषा के विपरीत, और लोकतंत्र समावेशी है; किसी भी देश के लगभग सभी स्थायी निवासी नागरिक अधिकार और विशेषाधिकारों को प्राप्त कर सकते हैं और इस तरह से राजनीति में अपनी भागीदारी का दावा कर सकते हैं। सबसे महत्त्वपूर्ण, आधुनिक लोकतंत्र बहुमत के शासन के साथ अल्पसंख्यक अधिकारों के संरक्षण का काम पूरी प्रतिबद्धता से करने का दावा करता है। आधुनिक लोकतंत्र में, नागरिक अथवा लोग स्वतंत्र, निष्पक्ष, सविरोध और नियमित रूप से होने वाले चुनावों के माध्यम से सरकार में प्रतिनिधि चुनते हैं। व्यावहारिक रूप से सभी वयस्कों को मतदान करने का अधिकार होता है और वे चुनावी प्रक्रिया में प्रतिनिधि के रूप में भी भाग ले सकते हैं। लोकतंत्र में रहने वाले सभी लोग अपनी सरकार के निर्णय को प्रभावित करने के लिए स्वतंत्र रूप से चुनाव में भाग ले सकते हैं। अल्पमत दलों के सदस्य

सत्तारूढ दल की आलोचना और विरोध करने के साथ अगले चुनावों में जनमत को अपने पक्ष में का शासन में अपना वैध अधिकार बना सकते हैं। अतः लोकतंत्र का तात्पर्य लोकप्रिय संप्रभुता से है जिसमें सरकार लोगों की सहमति और उसकी जवाबदेही से बनती है।

वर्तमान समय का प्रामाणिक लोकतंत्र संविधान द्वारा निर्धारित है। यह सीमित सरकार का वह ढांचा है, जो नागरिकों के बोलने की स्वतंत्रता, प्रेस, याचिका, विधान सभा और संघ के अधिकारों की रक्षा की कानूनी गारंटी देता है। नागरिक सरकार में अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करने और चुनाव के बीच की अवधि के दौरान उन्हें जवाबदेह ठहराने के लिए स्वतंत्र होते हैं। वे नागरिक समाज में अपनी निजता और विविधता को मुक्त रूप से व्यक्त कर सकते हैं। उनका यह निजी अधिकार क्षेत्र, (Private domain) सरकार के नियंत्रण से बाहर होता है। एक विधिसम्मत संविधान लोगों के दैनिक जीवन में प्रभावी ढंग से कार्य करता है ताकि सरकार को मनमाने ढंग से कार्य करने से रोका जा सके।

संवैधानिकता, सरकार में प्रतिनिधित्व और व्यक्तिगत स्वतंत्रता का अधिकार, आधुनिक लोकतंत्र की मुख्य विशेषताएं हैं जो इसे एक गैर–लोकतंत्र से अलग करती हैं। संवैधानिकता, सीमित सरकार तथा संविधान आधारित कानून का शासन प्रदान करती है। लोकतंत्र में संवैधानिकता विशेष रूप से बहुमत के अत्याचार के नुकसान से बचाती है, जिससे अतीत और वर्तमान की लोकप्रिय सरकारें पीड़ित रहीं हैं। बहुसंख्यकों पर कुछ संवैधानिक प्रतिबंध लगाकर अल्पसंख्यकों के अधिकारों की रक्षा और लोकतंत्र में सबकी सहभागिता सुनिश्चित की जा सकती है। आज लोकतंत्र में न्याय के लिए यह एक आवश्यक शर्त है। इस प्रकार, संवैधानिकता और प्रतिनिधि सरकार का महत्त्व चुनावों के माध्यम से राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्तियों चाहे वह अल्पसंख्यक हों या बहुसंख्यक, के लिए समान अधिकारों की गारंटी है। इस प्रकार, एक अप्रत्यक्ष या प्रतिनिधि लोकतंत्र में, स्वतंत्रता संवैधानिकता पर निर्भर करती है, जो किसी भी प्रकार के अत्याचार से रक्षा करने के लिए सरकार की शक्ति को सीमित और नियंत्रित करती है।

8.6 प्रजातंत्र की विशेषताएँ

लोकतान्त्रिक प्रशासन की प्रमुख विशेषताएँ निम्नलिखित है–

I. इस व्यवस्था में सरकार का निर्माण जनता द्वारा जनप्रतिनिधियों द्वारा होता है जो जनता के प्रति उत्तरदायी होते हैं।
II. इसमें एक से अधिक राजनीतिक दलों के बीच खुली प्रतिस्पर्धा होती है अर्थात् यह खुले चुनाव द्वारा संपन्न होता है।
III. इसमें चुनाव वयस्क मताधिकार के आधार पर समय–समय पर संपन्न होते हैं।

IV. इसमें नागरिक स्वतंत्रता के रूप में अभिव्यक्ति, धर्म–पालन, संघ निर्माण आदि की स्वतंत्रता की गारंटी होती है।

V. लोकतन्त्र में प्रशासन जनता के स्वामी के रूप में नहीं बरन् सेवक के रूप में कार्य करता है।

VI. प्रशासन में जन–भागीदारी सुनिश्चित करने के लिए कारगर उपाय किये जाते हैं।

VII. सरकारी कर्मचारी मन्त्रियों की इच्छानुसार कार्य करते हैं। मन्त्री जनता के प्रतिनिधि होते हैं तथा अपनी कार्यवाहियों के लिए संसद के प्रति उत्तरदायी होते हैं। इस प्रकार लोकतान्त्रिक प्रशासन जनता के प्रति उत्तरदायी होता है।

VIII. लोकतन्त्र में प्रशासन द्वारा लिए गए निर्णयों की जानकारी जनता को उपलब्ध करायी जाती है।

IX. लोकतान्त्रिक प्रशासन में जनता को प्रशासन द्वारा निर्मित नीतियों की आलोचना करने का अधिकार प्राप्त होता है।

X. लोकतन्त्र में प्रशासन का जनता से घनिष्ठ सम्बन्ध बना रहता है। प्रशासन जनता की शिकायतें दूर करने का हर सम्भव प्रयास करता है।

XI. लोकतान्त्रिक प्रशासन जनता के एक बड़े भाग का प्रतिनिधित्व करता है अर्थात् समाज के सभी वर्गों को प्रशासन में प्रतिनिधित्व प्रदान किया जाता है।

XII. लोकतान्त्रिक प्रशासन विकेन्द्रित होता है जिससे कि शासन में अधिकाधिक लोग भाग ले सकें तथा शासन की अधिक सक्षम बनाया जा सके।

XIII. लोकतान्त्रिक प्रशासन आदर्शों व मूल्यों पर आधारित होता है।

XIV. प्रशासन में जवाबदेयिता व पारदर्शिता बनाये रखने का प्रयास किया जाता है।

XV. नागरिकों को सूचनाएँ पाने का पूर्ण अधिकार होता है।

8.7 सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत प्रजातन्त्र के अर्थ परिभाषा, प्रजातन्त्र की अवधारणा, प्रजातन्त्र के इतिहास एवं प्रजातन्त्र की विशेषताओं का विस्तृत रूप से विश्लेषण किया गया है। वर्तमान समय का प्रामाणिक लोकतंत्र संविधान द्वारा निर्धारित है। यह सीमित सरकार का वह ढांचा है, जो नागरिकों के बोलन की

स्वतंत्रता, प्रेस, याचिका, विधान सभा और संघ के अधिकारों की रक्षा की कानूनी गारंटी देता है। नागरिक सरकार में अपने प्रतिनिधियों का चुनाव करने और चुनाव के बीच की अवधि के दौरन उन्हें जवाबदेह ठहराने के लिए स्वतंत्र होते है। वे नागरिक समाज में अपनी निजता और विविधता को मुक्त रूप से व्यक्त कर सकते है। उनका यह निजी अधिकार क्षेत्र, सरकार के नियंत्रण से बाहर होता है। एक विधिसम्मत संबिधान लोगों के दैनिक जीवन में प्रभावी ढंग से कार्य करता है ताकि सरकार को मनमाने ढंग से कार्य करने से रोका जा सके।

8.8 बोध प्रश्न

8.8.1 लघु उत्तरी प्रश्न

1. प्रजातंत्र का इतिहास पर टिप्पणी लिखिए।
2. प्रजातंत्र की विशेषताएँ पर संक्षेप लिखिए।

8.8.2 दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. प्रजातंत्र का अर्थ एवं परिमाषा से आप क्या समझते है, विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. प्रजातंत्र की अवधारणा की विस्तृत विवेचना कीजिए।
3. आधुनिक लोकतंत्र का प्रक्रियात्मक विचार व्याख्या कीजिए।

8.8.3 बहुविकल्पीय प्रश्न

1. डेमोक्रेसी (प्रजातंत्र) शब्द की उत्पत्ति किस भाषा से हुई है

   (अ) पाली (ब) ग्रीक (स) हिन्दी (द) उर्दू

2. यह किस समाजशास्त्रीय की परिभाषा है प्रजातन्त्र सरकार राज्य के बहुसंख्यक लोगों की सरकार है।"

   (अ) अरस्तू (ब) हेरोटोडस (स) डायसी (द) अब्राहम

बहुविकल्पीय प्रश्न के उत्तर

1 (ब) 2 (अ)

8.9 सन्दर्भ सूची

- शर्मा, डॉ0 रश्मि (2022) लोकतंत्र एवं शासन, एसबीपीडी प्रकाशन, आगरा
- शर्मा, प्रो०पी०डी० : लोकतांत्रिक भारत में लोक प्रसाशन
- जैन पुखराज : सरकार के सिद्धांत एवं प्रकार
- फडिया, डॉ0 वी० एल० फडिया, डा० कुलदीप राजनीति सिद्धांत का परिचय
- हटिंगटन एस.पी. (1991).द थर्ड वेव डेमोक्रिटाइजेशन इन द लेट ट्वेंटीथ सेंचुरी, नॉर्मन ओके यूनिवर्सिटी ऑफ ओक्लाहोमा प्रेस।
- सदिकी, लार्ब. (2004).द सर्च फॉर अरब डेमोक्रेसी डिस्कोर्सेस एंड काउंटर– डिस्कोर्सस, न्यूयॉर्क कोलंबिया यूनिवर्सिटी प्रेस।
- हेवुड, एंड्रयू, (4वां संस्करण 2015), राजनीतिक सिद्धांत–एक परिचय, पालग्रेव मैकमिलन।
- गावा,ओ.पी.,(8वां संस्करण), (2019), राजनीतिक सिद्धांत का एक परिचय, पालग्रेव मैकमिलन।
- अग्रवाल, आर.सी., (2009), राजनीतिक सिद्धांत –राजनीति विज्ञान के सिद्धांत, सिटीसेंटर अशोक, गोविंद मित्रा रोड, पटना, बिहार
- अरोड़ा, एन.डी., (दूसरा संस्करण), (2018), सिविल सेवा मुख्य परीक्षा के लिए राजनीति विज्ञान, मैकग्रा हिल एजुकेशन, नई दिल्ली

इकाई 9 प्रजातन्त्रः प्रकार, मूल सिद्धान्त, गुण व दोष

इकाई की रूपरेखा

9.0 उद्देश्य

9.1 प्रस्तावना

9.2 प्रजातन्त्र का अर्थ

9.3 प्रजातन्त्त की परिभाषाएँ

9.4 प्रजातन्त्त के प्रकार

9.5 प्रजातन्त्र के मूल सिद्धान्त

9.6 प्रजातन्त्र के गुण

9.7 प्रजातन्त्र के दोष

9.8 सारांश

9.9 बोध प्रश्न

9.10 सन्दर्भ सूची

9.0 उद्देश्य

आप इस इकाई मे जान सकेंगे।

(1) प्रजातन्त्र के अर्थ को आप समझेंगे।

(2) प्रजातन्त्र की परिभाषाओं को आप जानेंगे।

(3) प्रजातन्त्र के प्रकार को आप जानेंगे।

(4) प्रजातन्त्र के मूल सिद्धान्तों को आप समझेंगे।

(5) प्रजातन्त्र के गुण व दोष से आप परिचित होंगे।

9.1 प्रस्तावना

मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है और प्रत्येक प्राणी को जीवन में सुखी रहने की प्रबल इच्छा होती है। व्यक्ति के आधिकार, कर्तव्य उसकी सुरक्षा तथा उसके कल्याण के लिए समाज में संस्थागत व्यवस्थाएँ प्रचलित रही हैं। ये प्रचलित संस्थाएँ चाहे जिस रूप में हों, वे नागरिकों को सामाजिक सुरक्षा एवं सामाजिक, आर्थिक न्याय प्रदान करती हैं। परिणाम स्वरूप नागरिकों का जीवनसुखी एवं सुरक्षित रहता है। प्रजातांत्रिक ब्यवस्था राजनीतिशास्त्र एवं समाजशास्त्र दोनों विषयों की महत्वपूर्ण संस्थाओं व संकल्पनाओं में से प्रमुख है। प्रजातांत्रिक व्यवस्था में नागरिकों की आस्था व सरकार का विश्वास आज के परिवेश में अधिक लोकप्रिय है। प्रजातन्त्र शब्द का प्रयोग राजनीतिक सन्दर्भ में किया जाता है और प्रत्येक व्यक्ति की समान सहभागिता इस व्यवस्था में होती ।

लोकतन्त्र की धारणा समय के साथ काफी विकसित हुई है। पूरे इतिहास में लोकतन्त्र अथवा प्रजातन्त्र के प्रमाण मिल सकते हैं, जिसमें सामुदायिक लोक सभा के माध्यम से निर्णय लिए जाते थे। आज लोकतन्त्र एक व्यापक अवधारणा के रूप में विकसित हो चुका है और इसके आदर्शो की सराहना प्रत्येक व्यक्ति करता है। प्रजातन्त्र ने शासन सत्ताओं का स्वरुप बदला है और बड़े–बड़े साम्राज्यों को ध्वस्त किया है। प्रजातन्त्र का इतिहासअत्यन्त प्राचीन है और वर्तमान समय में सम्पूर्ण जनता ने इसे आत्म सात किया है।

यद्यपि प्रारम्भ में प्रजातन्त्र को राजनीतिक पक्ष से सम्बन्धित अवधारणा माना जाता रहा है किन्तु वर्तमान में इसे राजनीतिक पहल तक ही सीमित नहीं माना जाता है। यह सामाजिक पक्ष से भी उतना ही

सम्बन्धित है जितना की राजनैतिक पक्ष से। प्रजातन्त्र का सामाजिक पक्ष व्यक्तियों की सामाजिक समानता पर बल देता है।इसका अर्थ यह है कि व्यक्तियों में रंग, भाषा, जाति, नस्ल, धर्म आदि किसी भी आधार पर भेदभाव नहीं होना चाहिए। इसी प्रकार आर्थिक पक्ष व्यक्तियों को आर्थिक सुरक्षा का वचन देता है। प्रजातन्त्र सरकार का एक प्रकार ही नहीं बल्कि राज्य का एक रूप तथा समाज की व्यवस्था का एक दूसरा नाम भी है।

9.2 प्रजातन्त्र का अर्थ

विद्वानों ने प्रजातन्त्र को मात्र शासन प्रणाली के रूप में ही स्वीकार नहीं किया है बल्कि इसे जीवन की एक पद्धति के रूप में देखा है। प्रजातन्त्र को अंग्रेजी में 'डेमोक्रेसी' कहते हैं, जो युनानी शब्दो 'डिमोस' तथा 'क्रेटिया' से मिलकर बना है। 'डिमोस' का अर्थ जनता या प्रजा तथा 'क्रेटिया' का अर्थ शासन होता है। इस प्रकार शब्दों के योग के आधार पर प्रजातन्त्र का अर्थ जनता का शासन होता है। हिन्दी में प्रजातन्त्र का अनेक अर्थों में प्रयोग होता है, जैसे– लोकतन्त्र, जनतत्र, बहुतन्त्रः। वर्तमान में प्रजातन्त्र एक महत्वपूर्ण राजनीतिक – सामाजिक आदर्श व मूल्य के रूप में जाना जाता है। इसीलिए आज प्रजातन्त्र को सबसे अच्छी शासन प्रणाली के रूप में स्वीकार किया जाता है। यह नगरिकों के व्यक्तित्व के विकास के लिए कार्य करता है। यह इस विचारपर आधारित है कि सत्ता लोगों के पास होनी चाहिए और नागरिकों को स्वतन्त्र एवं निष्पक्ष चुनावों के माध्यम से निर्णय लेने की प्रक्रिया मेंभाग लेने में सक्षम होना चाहिए। इसका तात्पर्य है कि नागरिकों को वोट देने, अपनी राय व्यक्त करने और प्रतिशोध के डर के बिना राजनीतिक गतिविधियों में सम्मिलित होने का अधिकार है।प्रजातन्त्र स्वतन्त्रता समानता, सहभागिता एवं बंधुत्व की भावनाओं पर आधारित एक शासन व्यवस्था है और शासन की शक्ति जनता के पास होती है और शासन संचालन जनता स्वयं प्रत्यक्ष रूप से या अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से अप्रत्यक्ष रूप से करती है। लिप्सेट का मत है कि प्रजातन्त्र एक ऐसी राजनीतिक प्रणाली है जो पदाधिकारियों को बदल देने के नियमित संवैधानिक अवसर प्रदान करती है एवं एक ऐसे रचनातन्त्र का प्रावधान करती है, जिसके तहत जनसंख्या का एफ विशाल हिस्सा राजनीतिक प्रभार प्राप्त करने के इच्छुक प्रतियोगियों में से मनोनुकूल चयन कर महत्वपूर्ण निर्णयों को प्रभावित करती है। मैक्फर्सन ने प्रजा की अवधारणा को स्पष्ट करते हुए इसे एक रचनात्मक तन्त्र माना है जिससे सरकारों को चयनित तथा प्राधिकृत किया जाता है अथवा किसी अन्य रूप में कानून बनाए और निर्णय लिए जाते हैं। शुप्टर ने बताया कि प्रजातांत्रिक विधि राजनीतिक निर्णय लेने हेतु ऐसी संस्थागत व्यवस्था है जो जनता की सामान्य इच्छा को क्रियान्वित करने हेतु तत्पर लोगों को चयनित कर सामान्य हित को साधने का कार्य करती है। वास्तव में प्रजातन्त्र मूल रूप से नागरिकों की राजनीतिक स्वतन्त्रता के लिए सहभागी राजनीति से सम्बन्धित प्रणाली है अर्थात हितों को किस प्रकार

आभिव्यक्त किया जाए, संसाधनों का कैसे प्रबंधन किया जाए तथा सत्ता का कैसे प्रयोग किया जाए, प्रजातन्त्र इन्हीं प्रश्नों से सम्बन्धित है।

बोध प्रश्न

मैक्फर्सन के अनुसार प्रजातन्त्र का क्या अर्थ है ?

.....

.....

.....

.....

.....

9.3 प्रजातन्त्त की परिभाषाएँ

अरस्तू के अनुसार ''बहुतों का शासन प्रजातन्त्र या लोकतन्त्र कहा जाता है। ''**अब्राहम लिंकन** के अनुसार ''प्रजातन्त्र को जनता का जनता द्वाराऔर जनता के लिए शासन कहा है।**सीले** के अनुसार'' प्रजातन्त्र वह व्यवस्था है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का भाग होता है। ''**डायसी** के अनुसार ''शासन का वह रूप जिसमें शासक वर्ग समूर्ण राष्ट्र के अपेक्षाकृत अधिकांश लोग होते हैं, प्रजातन्त्र कहलाता है। ''**ब्राइस** के अनुसार ''प्रजातन्त्र का प्रयोग ऐसी सरकार के लिए किया जाता रहा है, जिसमें राज्य की शासन शक्ति किसी वर्ग के हाथों में न होकर, समाज के सभी सदस्यों के हाथ में निहित होती है। **''हेरोडोटस** के अनुसार ''प्रजातन्त्र उस शासन का नाम है, जिसमें राज्य की सर्वोच्य शक्ति सम्पूर्ण जनता में निवास करती है। ''**डीबी** के अनुसार ''प्रजातन्त्र का आधार मानव प्रकृति की क्षमता तथा मानव बुद्धि एवं संचित तथा सहकारी अनुभव की शक्ति में विश्वास है। ''**हॉल** के अनुसार ''प्रजातन्त्र राजनीतिक संगठन का वह स्वरूप है, जिसमे जनमत का नियन्त्रण रहता है। ''**सी. एफ. स्ट्रांग** के अनुसार ''प्रजातन्त्र का अभिप्राय ऐसी सरकार से है जो शासितों की सक्रिय स्वीकृति पर आधारित हो। ''**गिडिंग्स** के अनुसार ''प्रजातन्त्र केवल एक शासन का ही नाम नहीं है वरन् राज्य का ही एक रूप है और समाज के रूप का भी एक नाम हैअथवा फिर तीनों का सम्मिश्रण है। ''**आस्टिन** के अनुसार **''**प्रजातन्त्र वह शासन है, जिसमें जनता का अपेक्षाकृत बड़ा भाग शासन करता है। ''**लुईस** के अनुसार ''प्रजातन्त्र मुख्य रूप से वह सरकार है, जिसमें सम्पूर्ण राष्ट्र की बहुसंख्यक जनसंख्या सम्प्रभु शक्ति के प्रयोग में भाग लेती है।''

डॉ० बी. प्रसाद के अनुसार ''लोकतन्त्र जीवन निर्वाह का एक सिद्धान्त है। इस समाज में एक व्यक्ति को दूसरे की तृप्ति के लिए साधन नहीं बनाया जा सकता है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि प्रजातन्त्र को केवल शासन तक ही सीमित न रखकर व्यापक अर्थ में देखा जा सकता है। यह एक राजनीतिक नियम, शासन प्रणाली, या समाज की रूप–रेखा ही नहीं है अपितु इसमें मानवों की स्वतन्त्रता और ऐच्छिक बुद्धि के आधार पर उनमें समानता और एकीकरण लाने का भी मार्ग निहित है। यह नागरिकों के नाम पर, नागरिकों की सहमति से, नागरिकों के प्रतिनिधियों द्वारा संविधान सम्मत रीति से किया जाने वाला शासन है अर्थात सम्पूर्ण प्रभुसत्ता जनता में निहित होती है तथा सम्पूर्ण जनता की शासन में समान भागेदारी होती है जिसमें वह स्वयं ही अपने आधिकारों की पूर्ति भी करने में समर्थ होती है।

9.4 प्रजातन्त्र के प्रकार

मुख्य रूप से प्रजातन्त्र के दो प्रकार हैं.–

1. प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र
2. अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्र

1. **प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र –** प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र उस व्यवस्था को कहते हैं, जहाँ पर लोग स्वयं अपना शासन करते हैं तथा स्वयं अपने लिए नियम–कानूनों का निर्माण करते हैं अर्थात जब किसी राज्य के नागरिक सार्वजनिक विषयों पर प्रत्यक्ष रूप से स्वयं विचार–विमर्श करते हैं और इसके आधार पर विधिनिर्माण होता है तो ऐसे शासन को प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र कहते है। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र कम छोटे आकार वाले राज्यों एवं कम जनसंख्या वाले राज्यों में ही संभव है। वर्तमान में बड़े आकार वाले राज्यों में जहाँ नागरिकों की संख्या अधिक होती है, वहाँ प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र सम्भव नहीं है। भारत में पंचायत राज व्यवस्था के अन्तर्गत ग्राम सभाओं में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की व्यवस्था है। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र का रूप हमें प्राचीनसमय में भारत, चीन, यूनान तथा रोम में देखने को मिलता था। वर्तमान में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र लगभग समाप्त है। भारत में पंचाायत राज व्यवस्था के अन्तर्गत ग्राम सभाओं में एवं स्विट्जरलैण्ड के कुछ क्षेत्रों में प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के उदाहरण देखने को मिलते है। वर्तमान समय में विशाल राज्यों के अस्तित्व में होने के कारण प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र सम्भव नहीं है। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र में सम्पूर्ण जनता स्वयं शासन का संचालन करती है और इनके निर्णय को सरकार को मानना पड़ता है। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्त की विधियों व उसके रूप निम्नलिखित है–

(a) **लोक सभाएँ–** इसके अन्तर्गत जनता प्रत्येक वर्ष आम सभाएं करती है और उसी सभा में शासन कार्यों पर विचार विमर्शकरके कानून का निर्माण करती है। यही आम सभा कानून को लागू करने के लिए कार्यपालिका का चुनाव करती है। न्याय की स्थापना के लिए न्यायपालिका का निर्वाचन भी वह स्वयं ही करती है। यह आम सभा अपने वार्षिक बजट को भी पास करती है।

(b) **जनमत संग्रह**–प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र की दूसरी विधि जनमत संग्रह् है, जिसका तात्पर्य है, 'जनता की राय प्राप्त करना।' विधान मण्डल जब कोई कानून बनाना चाहता है या संविधान में संशोधन लाना चाहता है, तब उस विषय को जनता के समक्ष रखकर जनमत संग्रह के बाद ही वह ऐसा कर सकता है। इस प्रकार जनमत संग्रह के आधार पर जनता प्रत्यक्ष रूप से विधि निर्माण की प्रक्रिया में भाग लेती है। जनता का बहुमत प्राप्त होने के पश्चात ही विधान मण्डल के प्रस्ताव कानूनी रूप ले पाते हैं।

(c) **आरम्भक**– आरम्भक का अभिप्राय यह है कि शासन सम्बन्धी मामलों में पहल करने का आधिकार नागरिकों को प्राप्त होना। आरम्भकवह तरीका है जिसके अनुसार मतदाताओं की एक निश्चित संख्या आरम्भ की जा सकती है। यह जनता का अधिकार है, जिसके द्वारा एक निश्चित जनसंख्या विधान परिषद को किसी विषय पर कानून बनाने के लिएबाध्य कर सकती है। स्विट्जरलैण्ड की केन्द्रीय सरकार के लिए आरम्भक की व्यवस्था केवल संशोधन सम्बन्धी प्रस्तावों तक ही सीमित है जब कि कैंटनों में कानून सम्बन्धित आरम्भक की व्यवस्था की गई है।

(d) **प्रत्यावर्तन–** प्रत्यावर्तन प्रजातन्त्र का चौथा और सर्वाधिक महत्वपूर्ण रूप है। जिसका तात्पर्य है परिवर्तन अर्थात किसी विधायिका के सदस्यों को बदलना प्रत्यावर्तन कहा जाता है। इसके द्वारा जनता को यह अधिकार प्राप्त होता है कि वह अपने द्वारा विधान मण्डल में भेजे गाए प्रतिनिधि को वापस बुला सके या उन्हें पदच्यूत कर सके। जब कभी भी निर्वाचक यह अनुभव करे कि उनके द्वाराव्यवस्थापिका में भेजा गया प्रतिनिधि उनकी इच्छाओं का पर्याप्त प्रतिनिधित्व नहीं कर पा रहा है तो उन निर्वाचकों को अपने प्रतिनिधि को वापस बुलाने के अधिकार को प्रत्यावर्तन कहा जाता है।

2. **अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्र–** वर्तमान में प्राय. सभी देशों में अप्रत्यक्ष लोकतंत्र की व्यवस्था है प्रचलित है। लोकतन्त्र का दूसरा महत्वपूर्ण रुप अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्र है। यह एक प्रकार की लोकतान्तिक सरकार है जिसमें मतदाता अपनी और से प्रतिनिधियों का चुनाव करते हैं और उन्हें शासन में भेजते हैं। ऐसे लोकतन्त को प्रतिनिधि लोकतन्त्र भी कहते हैं। अप्रत्यक्ष लोकतंत्र को आम तौर पर प्रत्यक्ष लोकतन्त्र से अलग माना जाता है। प्रत्यक्ष प्रजातन्त्र में लोग सीधे बोट देते हैं कि कोई कानून पारित किया जायेगा या नहीं लेकिन अप्रत्यक्ष लोकतन्त्र में प्रतिनिधि चुने जाते हैं, जो कानून का निर्माण करते हैं, अर्थात जनता स्वयं से शासन की शक्ति

का प्रयोग नहीं करती है अपितु अपने प्रतिनिधियों के माध्यम से प्रभुत्व शक्ति का प्रयोग करती है अप्रत्यक्ष प्रजातन्त्र के निम्नलिखित रूप होते है।

(a) **संसदीय या मांत्रिमण्डलात्मक–** इस प्रणाली मे वास्तविक शासन सत्ता संसद या मंत्रिमण्डल में निहित होती है जिसमें जनता के चुने हुए प्रतिनिध ही रहते हैं। उदाहरण स्वरूप भारत की संसद या मंत्रिपरिषद।

(b) **अध्यक्षात्मक** – इस प्रणाली में शासन शक्ति राष्ट्राध्यक्ष या राष्ट्रपति में निवास करती है। जो जनता द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुना जाता है। यह एक गणतान्त्रिक शासन प्रणाली होती है।

(c) **संघात्मक** – इस प्रणाली में शासन शक्ति का विभाजन केन्द्र और विभिन्न राज्यों या इकाइयों के मध्य होता है। उदाहरण के लिए भारतीय संघ में 28 राज्य एवं 8 केन्द्र शासित प्रदेश है, जिनके शासनाधिकारों को संघ सूची, राज्य सूची और समवर्ती सूची में विभाजित किया गया है।

(d) **एकात्मक–** यह ऐसी शासन प्रणाली है, जिसमें शासन शक्ति केवल केन्द्र में निवास करती है। यहाँ राज्यों एवं विभिन्न काईयों को अलग से किसी प्रकार का कोई अधिकार प्रदान नहीं किया गया है। उदाहरणार्थ – इंग्लैण्ड की शासन प्रणाली।

9.5 प्रजातन्त्र के मूल सिद्धान्त

प्रजातन्त्र सरकार की प्रणाली ही नहीं है अपितु जीवन का एक आदर्श है। यह जीवन के सतत् विकास का एक समुन्नत मार्ग भी है। प्रजातन्त्त के मूल सिद्धान्त निम्नलिखित हैं–

(1) समानता – यह न केवल महत्वपूर्ण अपितु आवश्यक भी है कि लोकतन्त्र में सभी लोगों के साथ समान व्यवहार किया जाए। इसका तात्पर्य है कि व्यक्ति के साथ उसकी जातीयता, धर्म, लिंग, यौन अभिविन्यास के आधार पर भेद–भाव नहीं किया जाता। एक साधारण व्यक्ति का वोट भी उतना ही महत्वपूर्ण होता है, जितना कि देश के सबसे शक्तिशाली एवं धनी व्यक्ति का। प्रजातन्त्र समानता का पक्षधर होता है। राज्य तथा सरकार समस्त नागरिको को समान सुविधाएँ एवं आधिकार प्रदान करते हैं। समानता के इसी सिद्धान्त के कारण अन्य प्रणालियों की अपेक्षा लोकतन्त्रात्मक व्यवस्था को अधिक सम्मान मिलता है।

(2) स्वतन्त्रता – लोकतन्त्र का दूसरा मूल सिद्वान्त स्वतन्त्रता है। जहाँ अन्य शासन प्रणालियों जैसे राजतन्त्र कुलीन तंत्र या अधिनायक तन्त्र में विचारों की स्वतन्त्रता के स्थान पर विचारों की अभिव्यक्ति पर नियन्त्रण या प्रतिबन्ध रहता है वहीं प्रजातन्त्र में संविधान द्वारा नागरिकों को समान मौलिक अधिकार दिए जाते हैं।

अतः हर व्याक्त को स्वतन्वता (विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास धर्म और उपासना) का आधिकार प्राप्त है। इनका हनन होने की अवस्था में व्याक्त न्यायालय तक जा सकता है।

(3) मूल अधिकार – प्रजातन्त का अगला सिद्धान्त नागरिकों को मौलिक अर्थचर प्रदान करना है। मूल आधकार प्रजातन्त्र के आधार स्तम्भ है। मूल अधिकार व्यक्ति के जीवन के लिए मौलिक तथा अनिवार्य हैं जो संविधान द्वारा नागरिकों को प्रदान किए जाते हैं और इन अधिकारों में राज्य द्वारा भी हस्तक्षेप नहीं किया जाता। प्रत्येक प्रजातांत्रिक सरकार लोगों के अधिकारों की सुरक्षा का पूरा–पूरा ख्याल रखती है। अन्य शासन प्रणालियों में ये अधिकार नहीं प्राप्त होते हैं।

(4) शासन शक्ति लोगों के पास – प्रजातन्त्र जनता का, जनता के द्वारा जनता के लिए शासन है। प्रजातन्त्रात्मक शासन प्रणाली में सम्पूर्ण शाक्त जनता के हाथ में रहती है। प्रजातन्त्र एक ऐसा शासन है, जिसमें सभी व्यक्ति भाग लेते हैं। तथा राज्य की शक्ति राज्य की सामान्य आबादी में निहित होती है। यह शासन शक्ति लोगों से सर्व सम्मति, प्रत्यक्ष जनमत संग्रह द्वारा या लोगों के निर्वाचित प्रतिनिधियों द्वारा प्राप्त की जाती है अर्थात् राज्य के नागरिक ही मतदान के द्वारा एक निश्चित अवधि के लिए अपने प्रतिनिधियों का निर्वाचन करते है। व्यक्ति अपने द्वारा निर्मित सरकार में परिवर्तन ला सकते हैं अर्थात् व्यक्ति ही प्रजातन्त्र का मूल आधार है। ऐसी सुविधाएँ न तो राजतन्त्र में न ही कुलीन तन्त्र में प्राप्त होती हैं।

(5) स्वतन्त्र न्यायालय – लोकतन्त्र के अनेक मूल सिद्धान्तों में स्वतन्त्र न्यायपालिका एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त है। स्वतन्त्र न्यायालय का तात्पर्य यह है कि सभी नागरिकों को निष्पक्ष व समान रूप से न्याय मिले। प्रजातन्त्र में चाहे कोई बड़ा हो या छोटा सबके लिए न्याय की व्यवस्था समान होती है। इसीलिए प्रजातन्त्र में न्यायालय को व्यवस्थापिका व कार्यपालिका से स्वतन्त्र रखा जाता है। स्वतन्त्र न्यायालय के अन्तर्गत बिना किसी डर या पक्षपात के लोगों को न्याय देने का प्रयास किया जाता है।

(6) कानून का शासन – प्रजातन्त्र का एक महत्वपूर्ण सिद्धान्त यह है कि यह कानून का शासन है। यह राज्य की शक्ति के दुरुपयोग को रोकता है। सभी को कानून का पालन करने की आवश्यकता होती है। जवाबदेही, न्यायपूर्ण कानून, सुलभ एवं निष्पक्ष न्याय जैसे सार्वभौमिक सिद्धान्त प्रजातन्त्र से घनिष्ठ रूप से सम्बाधित है। किसी व्यक्ति या समूह की इच्छा सर्वोपरि न होकर कानून सब व्यक्तियों तथा संस्थाओं से सर्वोच्च होता है। कानून की अवहेलना करने पर सभी के लिए कानूनी दण्ड एक समान निर्धारित रहता है।

(7) लोकमत – एक स्थिर समाज का संचालन दोतरफा संचार के साधनों– बातचीत और सुनने के बिना असम्भव है। प्रजातन्त्र में लोकमत के आधार पर ही शासन का संचालन होता है। प्रजातंत्रीय सरकार

लोकमत या जनमत की उपेक्षा नहीं कर सकती है और यही बात लोगों की दृष्टि में प्रजातन्त्र को वैधता प्रदान करती है एवं सरकार और उसकी संस्थाओं में विश्वास उत्पन्न करती है।

(8) राजनैतिक दल – प्रशात्व और राजनैतिक दल एक–दूसरे के पूरक है। राजनैतिक दल जनमत के निर्माण में सहायक है तथा जनता में जागरुकता बढ़ाने में सहायक है। प्रजातन्त्र में नागरिकों को राजनैतिक दल बनाने की स्वतन्त्रता रहती है। ये राजनैतिक दल अपने सिद्धान्तों को जनता के समक्ष रखते हैं। जनता को यदि ये सिद्धान्त अच्छे प्रतीत होते हैं तो उन्हीं दलों के उम्मीदवारों को जनता अपना मत देती है तथा चुने हुए प्रतिनिधि सरकार का निर्माण करते हैं।

(9) भातृ–भाव या बन्धुत्व की भावना – प्रजातन्त्र में सभी व्यक्ति वर्ग, जाति, धर्म, नस्ल व सम्प्रदाय के लोगों की एक समुदाय के सदस्य के रूप में माना गया है। किसी के साथ किसी भी प्रकार का भेद–भाव नहीं किया जाता है। प्रजातन्त्र व्यवस्था में प्रत्येक व्यक्ति की भारत का समान नागरिक माना गया है।

9.6 प्रजातन्त के गुण

(1) उच्च आदर्शों पर आधारित – प्रजातन्त्र का सर्वप्रमुख गुण यह है कि यह जिस आधारभूत मान्यता पर आधारित है, वह है समानता, न्याय एवं भातृत्व की भावना । प्रजातन्त्र इन्हीं उच्च मूल्यों एवं आदर्शो से कार्यरूप में परिवर्तित होता है, जहाँ प्रत्येक व्याक्ति की गरिमा का सम्मान करते हुये सभी को समान माना जाता है। इसके अन्तर्गत जाति, वंश, सम्प्रदाय, धर्म, लिंग आदि का भेद–भाव नहीं किया जाता है। प्रजातन्त्र उच्च आदर्शों पर आधारित है, अतः इसके अन्तर्गत सभी नागरिकों को अपने व्याक्तत्व का विकास करने का अवसर प्राप्त होता है।

(2) व्यक्तिगत स्वतन्त्रता – प्रजातन्त्र का सबसे बड़ा गुण यह है कि वह अपने नागरिकों को विभिन्न प्रकार की स्वतन्त्रता प्रदान करता है। प्रजातन्त्र में प्राप्त व्यक्तिगत स्वल्त्रता व्यक्ति के व्यक्तित्व के विका**ष** का मार्ग प्रशस्त करती है। यहाँ हर व्यक्ति को विचार, विश्वास, राजनीतिक राय रखने एवं एवं अपने चुने हुए धर्म की आवश्यकताओं एवं मान्यताओं को पूरा करने या न करने का आधिकार और स्वतन्त्रता प्राप्त है। ये व्यक्तिगत स्वतन्त्रताएं न तो राज्य के अधीन होंगी और न ही व्यक्तिगत हस्तक्षेप के अधीन । प्रजातन्त्र निश्चित रूप से व्याक्तगत स्वतन्त्रता की रक्षा करता है।

(3) राजनीतिक शिक्षण – प्रजातन्त राजनीतिक शिक्षण का सबसे उपयुक्त साधन है। प्रजातन्त्र में नागरिकों को राजनीतिक, प्रशासनिक एवं सामाजिक सभी प्रकार का शिक्षण प्राप्त होता है। मताधिकार एवं राजनीतिक पद प्राप्त करने की स्वतन्त्रता जब व्यक्ति को प्राप्त होती है. तब व्यक्ति अथवा समाज स्वाभाविक रूप से

राजनीतिक क्षेत्र में रूचि प्रदर्शित करने लगते हैं। सभी राजनीतिक निरन्तर प्रचार के द्वारा जनता को राजनीतिक शिक्षा प्रदान करते रहते हैं। विचारों की अभिव्यक्ति, भाषण, संचार माध्यमों के उपयोग की स्वतन्त्रता जनता में विचारों के आदान–प्रदान करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहित करती है। सशक्त साथ ही उनमें उत्तरदायित्व तथा आत्मनिर्भरता की भावना का विकास करके उन्हें राजनीतिक रूप से सशक्त बनाती है।

(4) लोक कल्याण – प्रजातन्त्र न केवल शासन का एक विशेष प्रकार है, बलि यह जीवन के प्रति एक विशिष्ट दृष्टिकोण भी है। सहभागिता एवं विश्व बंधुत्व की भावना पर आधारित एक ऐसी व्यवस्था जो लोक कल्याण की भावना पर बल देती है। प्रजातन्त्र में सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी होती है और उनके हितों के प्रति पूर्णतया सजग क्यों कि प्रजातन्त्र में जिन जन प्रतिनिधियों के द्वारा शासन किया जाता है उनका चुनाव जनता एक निश्चित समय के लिए करती है और उन्हें यह भय रहता है कि यदि वे जनता की इच्छाओं, भावनाओं एवं आवश्यकताओं के अनुसार कार्य नहीं करेंगे तो जनता उन्हें भविष्य में होने वाले चुनावों में पराजित कर देगी। अतः यह भय उन्हें लोक कल्याण को ध्यान में रखकर कार्य करने के लिए प्रेरित करता है।

(5) देश प्रेम की भावना का विकास – प्रजातन्त्र जनता द्वारा जनता का शासन है जिसका उद्देश्य लोक हित की प्राप्ति है। जब किसी देश की जनता राजनीतिक दृष्टिकोण से सजग हो जाती है तब वह सरकार एवं राज्य एक विशेष प्रकार का लगाव अनुभव करती है और यही भावनात्मक लगाव राष्ट्र के प्रति देश भक्ति एवं प्रेम को भावना को जागृत करता है। जनता को इस बात की अनुभूति रहती है कि मौजूदा शासन व्यवस्था उन्हीं के द्वारा निर्मित है तथा सार्वभौम सत्ता के अधिकारी वे स्वयं हैं।

(6) हिंसात्मक क्रान्ति की न्यूनतम सम्भावना – प्रजातन्त्र की मूल भावना में शान्ति एवं सहिष्णुता के दर्शन होते हैं। इसमें सहमति एवं समझ दोनों का ही समावेश होता है। विपक्ष को भी अपनी बात कहने का पूरा अवसर प्राप्त होता है। विपक्ष द्वारा सरकार की आलोचना और निन्दा भी की जाती है। बहुसंख्यक जनता यदि शासक वर्ग से असन्तुष्ट होती है तो वह उसे संवैधानिक तरीकों से हटा सकती है। अतः हिंसात्मक क्रान्ति की सम्भावना अत्यन्त न्यून होती है।

(7) सामान्य नागरिकों के लिए शासन में भाग लेने की व्यवस्था – प्रजातन्त्र का एक मुख्य गुण यह है कि आम जनता अथवा सामान्य नागरिक शासन के निर्वान्चन और उसे चलाने में अपनी सहभागिता सुनिश्चित करते हैं। निर्णय लेने की प्रक्रिया से लेकर हर उचित नियम का समर्थन एवं अनुचित नियमों का विरोध करने का अधिकार सामान्य नागरिकों को प्राप्त होता है।

(8) सत्ता का शान्तिपूर्ण हस्तान्तरण – सत्ता का शान्तिपूर्ण हस्तान्तरण प्रजातन्त्र की एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जिसमें सरकार का नेतृत्व शान्तिपूर्ण तरीके से नए चुने गए नेतृत्व को सौंप दिया जाता है। निष्पक्ष एवं पारदर्शी चुनाव के जरिए सत्ता का हस्तान्तरण प्रजातन्त्र में सम्भव हो पाता है।

(9) सामान्य चरित्र – चरित्र एक विशिष्ट व्यक्तिगत गुण है जिसका मूल्यांकन किसी व्याक्त के मानवीय एवं सामाजिक मानको और मूल्यों के पालन के आधार पर किया जा सकता है। किसी भी राष्ट्र की गरिमा के लिए इसे विकसित और स्थापित किया जाना आवश्यक होता है। प्रजातन्त्र ऐसी ही एक व्यवस्था है जो व्यक्ति के अन्दर श्रेष्ठ गुण जैसे सद्भाव, परोपकार, साहस, नैतिकता आदिकाल को विकासत करके राष्ट्र के चरित्र निर्माण में सहायक होती है।

9.7 प्रजातन्त्र के दोष

निर्णय लेने में देरी– प्रजातान्त्रिक प्रणाली में निर्णय लेने मे देरी अथवा विलम्ब हो सकता है। ऐसा इसलिए है क्यों कि निर्णय लेने की प्रक्रिया में परामर्श, बात–चीत एवं समझौते सम्मिलित होते है, जिसमें समय आर्धक लग सकता है और निर्णय लेने में देरी हो सकती है।

मतदाताओं की उदासीनता– प्रजातन्त्र प्रभावी ढंग से कार्य करे इसके लिए नागरिकों की सक्रिय भागेदारी आवश्यक है। कई बार यह भी देखने में आता है कि बहुत नागरिक राजनीतिक प्रक्रिया में उदासीन रहते हैं जिससे मतदान में कमी आती है।

राजनीतिक ध्रुवीकरण: राजनीतिक ध्रुवीकरण प्रजातन्त्र का एक मुख्य दोष है, जहाँ राजनीतिक दल आधिक उग्र हो जाते हैं परिणामस्वरुप गतिरोध उत्पन्न होता है और महत्वपूर्ण निर्णय प्रभावित होने की सम्भावना बनी रहती है।

भष्टाचार– प्रजातन्त्र भ्रष्टाचार के प्रति संवेदनशील हो सकता है क्यों कि राजनेता अपनी शक्ति का प्रयोग स्वयं के निजी लाभ के लिए करने हेतु प्रेरित हो सकते है। इसका परिणाम जवाबदेही की कमी एवं सार्वजनिक धन को उनके इच्छित उद्देश्यों से दूर ले जाना हो सकता है।

गुणों की अपेक्षा संख्या को महत्व– प्रजातन्त्र में गुणों की अपेक्षा संख्या को आधिक महत्व दिया जाता है। इसमें मात्र मतों की गणना की जाती है। प्रत्येक मतदाता चाहे वह योग्य हो या अयोग्य, मत का मूल्य एक ही होता है।

अयोग्य व्यक्तियों के शासन की सम्भावना– अरस्तू ने प्रजातन्त्र को विकृत रूप मानते हुए इसे अयोग्य शासन माना था। प्रजातन्त्र में जो व्यक्ति, नेता, राजनीतिज्ञ शामिल होते हैं वे अयोग्य इसलिए माने जाते हैं कि उन्हें राजनीति का सघन प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होता है। केवल मात्र साधारण योग्यता के आधार पर शासन व्यवस्था में भर्ती होना ही अयोग्यता का परिचायक है। प्रजातन्त्र में धन एवं शक्ति के आधार पर अयोग्य व्यक्तियों के शासन में प्रवेश करने की सम्भावनाब नी रहती है।

सार्वजनिक समय एवं धन का अपव्यय– प्रजातन्त्र में नीतियों के निर्धारण में तथा कानूनों के निर्माण में अत्याधिक धन व्यय होता है। समस्त कार्य विभिन्न समितियों के द्वारा तथा व्यवस्थापिका की लम्बी–चौड़ी बहस द्वारा किए जाते हैं। लोकतन्त्र की यह प्रक्रिया समय एवं धन की दृष्टि से अत्यधिक खर्चीली होती है। इसी प्रकार चुनावों की प्रक्रिया में काफी धन खर्च होता है। सांसदों, विधायकों, मंत्रियों एवं व्यवस्थापिका से जुड़े आधिकारियों आदि पर भी बड़ी मात्रा में धन खर्च होता है। अतः प्रजातन्त्र में धन एवं समय दोनों का अपव्यय होता है।

दलीय गुटबन्दी– प्रजातन्त्र के संचालन के लिए राजनीतिक दल परम आवश्यक माने जाते हैं किन्तु राजनीतिक दल प्रणाली में अनेक दोष भी होते हैं जिसके कारण प्रजातन्त्त में विकार आता है। जनता को प्रभावित करने व लोकप्रियता प्राप्त करने के लिए राजनीतिक दल परस्पर एक–दूसरे के प्रति न केवल गलत बातों का दुष्प्रचार करते हैं बल्कि लोगों की भावनाओं को प्रभावित करके स्वयं के स्वार्थसिद्धि के उपाय खोजते रहते हैं। चुनाव के दौरान इनके अमर्यादित प्रचार के कारण सम्पूर्ण देश का वातावरण दूषित हो जाता है। लोक कल्याण के स्थान पर दलीय गुटबन्दी महत्वपूर्ण हो जाती है।

बहुमत की तानाशाही– प्रजातन्त्र का सबसे बड़ा दोष बहुमत की तानाशाही का है। बहुमत दल तानाशाही रूप से सत्ता का प्रयोग कर सकता है। संसदीय उत्तरदायित्व की आड़ में मंत्रिमण्डल का अधिनायकत्व स्थापित हो जाता है।

प्रजातन्त्र के उपर्युक्त गुण–दोषों की विवेचना के आधार पर हम यह कह सकते हैं कि प्रजातन्त्र व्यक्ति को बुद्धि एवं विवेक सम्पन्न मानता है। अतः उसे मताधिकार देता है लेकिन कई बार दलीय गुटबन्दी और राजनीतिक स्वार्थपरता प्रजातन्त्र को भीड़तन्त्र में परिवर्तित कर देती है।

9.8 सारांश

प्रजातन्त्र में सम्प्रभुता जनता में केन्द्रित रहती है अर्थात प्रजातन्त्र लोगों के शासन का प्रतीक है। यह सभी शासन व्यवस्थाओं से बेहतर और औचित्य पूर्ण है। यह जनता के कल्याण से सम्बन्धित है अर्थात प्रत्येक

व्यक्ति को अपने व्याक्तित्व को विकासत करने का अवसर –प्रदान करता है। प्रजातन्त में सभी व्यक्तियों को राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक न्याय पाने का आधिकार समान रूप से प्राप्त होता है। साथ ही विचार प्रकटीकरण की स्वतन्त्रता होती है। प्रजातन्त्र व्यक्ति की प्रतिष्ठा, उसकी गरिमा एवं उसके सम्मान की रक्षा करता है। प्रजातांत्रिक शासन प्रणाली में किसी भी सिद्धान्त में परिवर्तन करने के लिए संविधान का सहारा लिया जाता है और यह परिवर्तन लिखित संविधान के अनुरूप किए जाते हैं। प्रजातन्त्र में लोक कल्याणकारी राज्यों को अधिक गति मिलती है। अतः निश्चित रूप से इसे यह राजनीतिक एवं सामाजिक व्यवस्था की एक आदर्श पद्धति के रूप में स्वीकार किया जाता है।

9.9 बोध प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1. ''प्रजातन्त्र वह शासन व्यवस्था है, जिसमें राष्ट्र का अधिकांश समाज शासक हो। यह किसकी परिभाषा है''?

   (अ) गेटेल (ब) हर्नशा (स) डायसी (द) गिडिंग्स

2. ''प्रजातन्त्र राजनीतिक संगठन का स्वरुप है, जिसमें जनता का नियन्त्रण रहता है।'' यह कथन किसका है?

   (अ) हाल (ब) ऑस्टिन (स) लेविस (द) हिरोडोटस

बोध प्रश्न के उत्तर

(स) डायसी (अ) हाल

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. प्रजातन्त्र से आप क्या समझते हैं? प्रजातन्त्र के प्रकार का वर्णन कीजिए।
2. प्रजातन्त्र के मूल सिद्धान्तों की विवेचना कीजिए। प्रजातन्त्र के गुण एवं दोष को विस्तार पूर्वक समझाइए।

9.10 सन्दर्भ सूची

- Frei, D aniel and Dieter Ruloff 1989, Hand book of Foreign Policy analysis
- Hadenius, Axel 1992, Democracy and Development. London; Cambridge University Press.
- Schedler, Andreas "what is Democratic consolidation?" Journal of Democracy, vol. 9, N. 2, 1998
- Ali Ashraf, Sharma, L.N., Political Sociology" 1983 University Press.
- Baghel, D.S. Singh T.P. "Ragnatik samajshastra Vivek prakashan, New Delhi
- Roy Shefali "Society and Politics in India 2014 PHI Learning Private Limited, New Delhi,
- Giddens Anthony "Politics, Sociology and social Theory, 2017, PO
- Mittal Satish, Saxeng Sushil Kumar. "Political Sociology Arjun Publishing House, New delhi
- Sood, N.M. "Fundamentals of political Sociology" Sumit Enterprises, Delhi
- https://www. Kailash education.com
- https://www.thoughco.com
- https://gyanforever.com

इकाई 10 : भारत में प्रजातंत्र इकाई की रूपरेखा

इकाई की रूपरेखा

10.0 उद्देश्य

10.1 प्रस्तावना

10.2 प्रजातंत्र का अर्थ

10.3 प्रजातंत्र की परिभाषा

10.4 भारत में प्रजातंत्र

10.5 भारत में प्रजातंत्र की कार्यप्रणाली

10.6 भारत में प्रजातंत्र की प्रकृति

10.7 भारतीय प्रजातंत्र की विसंगतियाँ

10.8 भारत में प्रजातंत्र को सफल बनाने के उपाय

10.9 सारांश

10.10 बोध प्रश्न

10.11 संदर्भ सूची

10.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन उपरान्त आप जानेंगे।

1. प्रजातंत्र के अर्थ एवं परिभाषाओं से आप परिचित होंगे।
2. भारत में प्रजातंत्र एवं उसकी कार्यप्रणाली से अवगत होंगे।
3. भारतीय प्रजातंत्र की प्रकृति को समझेंगे।
4. भारतीय प्रजातंत्र की विसंगतियों को जानेंगे।
5. भारत में प्रजातंत्र को सफल बनाने के उपयों को समझेंगे।

10.1 प्रस्तावना

विश्व के राजनैतिक पटल पर देश, काल एवं परिस्थितियों के आधार पर एक निश्चित शासन प्रणाली, अथवा एक व्यवस्था या एक विचारधारा सदैव से ही अस्तित्व में रही है। इन्हीं में से एक व्यवस्था प्रजातांत्रिक व्यवस्था रही है। जिसके पक्षधर आज अनेक देश हैं। प्रजातंत्र की संकल्पना को किसी वैचारिक समूह के एक भाग अथवा संकल्पनाओं के एक परिवार के रूप में वर्णित किया जा सकता है, जिसमें अधिकारों, स्वतंत्रता व समानता की संकल्पनाएँ सबसे प्रमुख है। यही कारण है कि अन्य प्रकार की शासन प्रणालियों की तुलना में प्रजातंत्र को बेहतर माना जाता है। मिल ने अपनी पुस्तक 'कंसीडरेशन ऑफ रिप्रेजेन्टेटिव गवर्नमेंट 1861 में प्रजातांत्रिक निर्णय निर्माण के तीन लाभों के बारे में वर्णन किया था। पहला रणनीति तौर पर प्रजातंत्र नीतिनिर्माताओं को बाध्य करता है कि वे लोगों के अधिकारों, मतों एवं हितों के विषय में उत्तरादायी बने रहें। दूसरा प्रजातंत्र में विभिन्न प्रकार के दृष्टिकोणों की उपस्थिति होती है, जिससे नीतिनिर्माताओं को उनमें से सर्वश्रेष्ठ चयन करने का अवसर प्राप्त होता है और तीसरा यह कि प्रजातंत्र स्वतंत्रता समानता एवं तार्किकता को समाहित करके नागरिकों के व्यक्तित्व एवं चरित्र निर्माण में सहयोग प्रदान करता है। व्यापक अर्थ में प्रजातंत्र का अन्तिम लक्ष्य व्यक्ति की गरिमा तथा मौलिक अधिकारों को संरक्षित करना और बढ़ावा देना है साथ ही निर्णय लेने की गुणवत्ता में सुधार करके सार्वजनिक संप्रभुता का प्रावधान करना है। प्रसिद्ध लेखक एवं विचारक जार्ज बनार्ड शॉ के शब्दों में ''प्रजातंत्र एक सामाजिक व्यवस्था है, जिसका लक्ष्य सभी लोगों का यथा सम्भव अधिक से अधिक कल्याण करना है।'' अर्थात् प्रजातंत्र का अर्थ इस बात में निहित है कि इसके द्वारा सम्पूर्ण समाज का हित होता है।

10.2 प्रजातंत्र का अर्थ

प्रजातंत्र सरकार की एक प्रणाली को सन्दर्भित करता है, जहाँ नागरिक मतदान करके सत्ता का प्रयोग करते है। अर्थात यह जनता द्वारा जनता के लिए जनता का शासन है। इसके अन्तर्गत स्वेच्छा से निर्वाचन में आए हुए किसी भी उम्मीदवार को जनता अपना मत देकर प्रतिनिधि चुन सकती है। अतः यह शासन का एक ऐसा स्वरूप है जिसमें शासक का चयन आम लोग करते है तथा सम्प्रभु शक्ति के प्रयोग में जनता की ही प्रमुख रूप से हिस्सेदारी होती है। प्रजातंत्र में चर्चा एवं विचारविमर्श का प्रथम स्थान है। यह स्वतंत्रता का संस्थागत करण है, जहाँ जनहित सर्वोपरि नहीं है। प्रजातंत्र का अर्थ केवल एक शासन प्रणाली तक ही सीमित नहीं है वरन् यह राज्य एवं समाज का स्वरूप भी है। अतः यह राज्य, समाज एवं शासन का मिश्रण है। राज्य के प्रकार के रूप में प्रजातंत्र में जनता को शासन करने, उसे नियंत्रण करने एवं उसे हटाने की शक्ति है। समाज के रूप में प्रजातंत्र एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था है जिसमें समानता का वितरण एवं व्यवहार प्रबल है। प्रजातंत्र वास्तव में लोक कल्याणकारी राज्य से सम्बन्धित है। इसमें व्यक्ति की महत्ता और उसकी स्वतंत्रता पर बल दिया गया है। मानव जाति के विकास में जो भिन्नभिन्न शासन व्यवस्थाएँ रहीं उनमें प्रजातंत्र को विश्व के प्रमुख शासन प्रणाली के रूप में स्वीकार किया गया है क्यों कि प्रजातंत्र केवल राजनीतिक, सामाजिक एवं आर्थिक व्यवस्था का प्रकार ही नहीं है बल्कि जीवन के प्रति एक विशेष दृष्टिकोण का नाम भी है। सामाजिक आदर्श के रूप में प्रजातंत्र समस्त व्यक्तियों को समान अधिकार प्रदान करता है। प्रजातांत्रिक समाज में नस्ल, रंग, धर्म, वंश, जाति, लिंग के आधार पर किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता है। प्रत्येक व्यक्ति को प्रगति का समान अवसर प्राप्त होता है। यही कारण है कि आज प्रजातंत्र शासन का तथा समाज का सर्वव्यापी स्वरूप बन चुका है।

10.3 प्रजातंत्र की परिभाषा

अरस्तू के अनुसार '' बहुतों का शासन प्रजातंत्र या लोकतंत्र कहा जाता है।''

अब्राहम लिंकन के अनुसार ''प्रजातंत्र को जनता का जनता द्वारा और जनता के लिए शासन कहा है।''

सीले के अनुसार '' प्रजातंत्र वह व्यवस्था है, जिसमें प्रत्येक व्यक्ति का भाग होता है। ''

डायसी के अनुसार '' शासन का वह रूप जिसमें शासन वर्ग सम्पूर्ण राष्ट्र के अपेक्षाकृत अधिकांश लोग होते है, प्रजातंत्र कहलाता है।''

ब्राइस ''प्रजातंत्र का प्रयोग ऐसी सरकार के लिए किया जाता रहा है, जिसमें राज्य की शासन शक्ति किसी वर्ग के हाथों में न होकर समाज के सभी सदस्यों के हाथ में निहित होती है।''

हेरो डोटस ''प्रजातंत्र उस शासन का नाम है, जिसमें राज्य की सर्वोच्च शक्ति सम्पूर्ण जनता में निवास करती है। ''

डीवी ''प्रजातंत्र का आधार मानव प्रकृति की क्षमता तथा मानव बुद्धि एवं संचित तथा सरकारी अनुभव की शक्ति में विश्वास है। ''

हॉल '' प्रजातंत्र राजनीतिक संगठन का वह सवरूप है, जिसमें जनमत का नियंत्रण रहता है।''

सी0एफ0 स्ट्रांग '' प्रजातंत्र का अभिप्राय ऐसी सरकार से है जो शासितों की सक्रिय पर आधारित हो।''

डिम्स ''प्रजातंत्र केवल एक शासन का ही नाम नहीं है वरन् राज्य का ही एक रूप है और समाज के रूप का भी एक नाम है अथवा फिर तीनों का सम्मिश्रण है।''

ऑस्टिन ''प्रजातंत्र वह शासन है, जिसमें जनता का अपेक्षाकृत बड़ा भाग शासन करता है।''

लुईस ''प्रजातंत्र मुख्य रूप से वह सरकार है, जिसमें सम्पूर्ण राष्ट्र की बहुसंख्यक जनसंख्या सम्प्रभु शक्ति के प्रयोग में भाग लेती है।''

डी0बी0 प्रसाद ''लोकतंत्र जीवन निर्वाह का एक सिद्धांत है। इस समाज में एक व्यक्ति को दूसरे की तृप्ति के लिए साधन नहीं बनाया जा सकता है।''

उपयुक्त परिभाषाओं से स्पष्ट होता है कि प्रजातंत्र को केवल शासन तक ही सीमित न रखकर व्यापक अर्थ में देखा जा सकता है। यह एक राजनीतिक नियम, शासन प्रणाली, या समाज की रूप रेखा ही नहीं है अपितु इसमें मानवों की स्वतंत्रता और ऐच्छिक बुद्धि के आधार पर उनमें समानता और एकीकरण लाने का भी मार्ग निहित है। यह नागरिकों के नाम पर नागरिकों की सहमति से नागरिकों के प्रतिनिधियों द्वारा संविधान सम्मत रीति से किया जाने वाला शासन है। अर्थात् सम्पूर्ण प्रभुसत्ता जनता में निहित है तथा स्वयं ही अपने अधिकारों की पूर्ति भी करने में समर्थ होती है।

10.4 भारत में प्रजातंत्र

भारत में प्रजातांत्रिक व्यवस्था की शुरुआत तथा हुई जब 26 जनवरी 1950 को भारत का संविधान लागू हुआ। जिन सिद्धांतों पर भारत की प्रजातांत्रिक सरकार आधारित है, वे है स्वतंत्रता, समानता, बन्धुत्व एवं न्याय। भारत में प्रजातंत्र का एक विशेष स्थान है। भारत निःसंदेह दुनिया का सबसे बड़ा लोकतंत्र है और विकासशील राष्ट्र होने के कारण भारत में प्रजातंत्र अपरिहार्य है। भारत में आर्थिक, सामाजिक,

राजनीतिक असमानताएँ विद्यमान है। व्यक्तित्व के विकास जीवन स्तर में वृद्धि राजनैतिक आर्थिक तथा सामाजिक क्षेत्रों में समान रूप से भागीदारी के लिए भारतीय जनता की प्रजातांत्रिक शासन व्यवस्था में गहरी आस्था है। वर्तमान युग की भारतीय राजनीतिक व्यवस्था में प्रजातंत्र एक आदर्श जीवन के रूप में स्वीकार किया गया है।

भारतीय प्रजातंत्र में शासन सम्बन्धी अन्तिम शक्ति जनता के पास निहित होती है। अतः जनता द्वारा चुनी गई संसद के पास नीतिगत निर्णय का अधिकार रहता है। अर्थात् भारत में जनतंत्रात्मक प्रणाली के आधार पर चुनाव सम्पन्न कराए जाते हैं और शासन संचालन की सभी इकाईयाँ लोकतांत्रिक नियमों द्वारा बनाई जाती है। प्रत्येक स्तर पर चुने गए प्रतिनिधि तथा मंत्री जनता के लिए निश्चित समय तक शासन करते हैं और उसके पश्चात् निर्वाचनों के माध्यम से जनता पुनः अपने शासक को निर्वाचित करती है। भारत में अन्य बातों के सामान्य रहने पर प्रत्येक पाँच वर्षों में लोक सभा व विधान सभाओं के चुनाव सम्पन्न होते है।

स्वतंत्रता के पश्चात् भारतीय संविधान का निर्माण एक दूरदर्शी दस्तावेज था, जिसने राष्ट्र को आकार देने वाले प्रजातांत्रिक सिद्धांतों की नींव रखी। संविधान के मुख्य वास्तुकार डॉ0 बी0 आर0 अम्बेडकर ने एक ऐसे समाज की कल्पना की थी जो न्याय स्वतंत्रता समानता एवं बन्धुत्व के आधार पर निर्मित हो। 1950 में इसे अपनाने के साथ ही भारत ने स्वयं में प्रजातांत्रिक आदर्शों को स्थापित किया। भारत के प्रजातांत्रिक विकास में महत्वपूर्ण मील के पत्थर में 1950 में चुनाव आयोग की स्थापना सम्मिलित है, जिसने स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों का मार्ग प्रशस्त किया। 1952 में हुए पहले आम चुनावों में एक ऐतिहासिक क्षण को चिन्हित किया गया क्योंकि पहली बार लाखों भारतीयों ने अपने मताधिकार का प्रयोग किया। भारत के प्रजातंत्र के ऐतिहासिक पथ पर चलते हुए हम सभी न केवल एक राजनीतिक प्रयोग बल्कि एक गहन सामाजिक परिवर्तन के साक्षी बन रहे है।

10.5 भारतीय प्रजातंत्र की कार्य प्रणाली

भारत विश्व का प्रमुख लोकतांत्रिक गणराज्य है। भारतीय संविधान निर्माताओं ने प्रजातांत्रिक पद्धति के अन्तर्गत संसदीय शासन प्रणाली को स्वीकार किया। इस प्रणाली के अन्तर्गत केन्द्र की कार्यपालिका संसद के प्रति और राज्यों की कार्यपालिकाएँ विधान मण्डलों के प्रति उत्तरदायी बनाई गई है। संविधान निर्माताओं द्वारा भारत के लिए संघीय शासन व्यवस्था को अपनाया गया जिसमें एकात्मक परिसंघीय मिश्रण है। राज्य तथा केन्द्र का कार्य विभाजन स्पष्ट होता है तथा संविधान की सर्वोच्चता होती है एवं न्यायपालिका स्वतंत्र एवं सर्वोच्च होती है। स्वाधीनता के पश्चात् हमने अपने देश में प्रजातंत्र, विकास, एवं

जनकल्याण की नीतियों के माध्यम से राष्ट्रीय विकास की प्रक्रिया को अपनाया है। प्रशासन का उद्देश्य भारतीय नागरिकों को सामाजिक आर्थिक और राजनीतिक न्याय प्रदान करना है। भारतीय शासन व्यवस्था का स्वरूप निम्न प्रकार से हैं

1. केन्द्रीय शासन राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री, मंत्रिपरिषद, भारतीय संसद, सर्वोच्च न्यायालय
2. प्रात्तीय शासन राज्यपाल, मुख्यमंत्री मंत्रिपरिषद, विधानमंडल, उच्च न्यायालय
3. स्थानीय प्रशासन नगर निगम, नगर पालिका, जिला पंचायत, जनपद पंचायत, ग्राम पंचायत

प्रशासन की दृष्टि से सम्पूर्ण देश को प्रदेशों, संभागों, जिलों तहसीलों और ग्राम इकाईयों में बाँटा गया है। इस प्रकार प्रशासनतंत्र उच्च स्तर से निचले स्तर तक जुड़ा हुआ है।

प्रजातांत्रिक पद्धति को अधिक उपयोगी और व्यावहारिक बनाने के लिए सत्ता को स्थानीय एवं आंचलिक स्तर पर जोड़ा गया है। प्रशासन की प्रत्येक इकाई अपने स्तर पर सौंपे गए कार्यों को सम्पादित करती है। इन इकाईयों से जनभावनाओं के अनुसार कार्य करने की अपेक्षा की जाती है।

10.6 भारत में प्रजातंत्र की प्रकृति

मौलिक अधिकार एंव नागरिक स्वतंत्रताएँ

भारतीय प्रजातांत्रिक व्यवस्था में संविधान द्वारा नागरिकों को समान मौलिक अधिकार प्रदान किए गए है, हर व्यक्ति को स्वतंत्रता (विचार, अभिव्यक्ति, विश्वास, धर्म तथा उपासना) समानता (प्रतिष्ठा एवं अवसर की समानता) एवं न्याय (सामाजिक आर्थिक तथा राजनीतिक) का अधिकार प्राप्त है। ये अधिकार व्यक्तिगत स्वतंत्रता की आधारशिला को निर्मित करते है तथा नागरिक को राज्यों के मनमाने कार्यों एवं नियमों से सुरक्षा प्रदान करते हैं। मौलिक अधिकार एवं नागरिक स्वतंत्रता के अभाव में प्रजातंत्र अधिनायक तंत्र का स्वरूप धारण कर लेगा। व्यक्तियों को जितना स्वतंत्रता प्रजातंत्र में प्राप्त है उतनी किसी अन्य शासन व्यवस्था में नहीं। लोगों को भाषण देने, घूमनेफिरने, रोजगार करने संघ बनाने या किसी भी धर्म को स्वीकार करने एवं प्रचारप्रसार करने की पूर्ण स्वतंत्रता प्राप्त है।

स्थानीय स्वशासन की व्यापक व्यवस्था

प्रजातंत्र का सही अर्थ है, **''सार्थक भागीदारी और उद्देश्यपूर्ण जवाब देही''**। जीवत और मजबूत स्थानीय स्वशासन भागीदारी और जवाबदेही दोनों को सुनिश्चित करता है। इसके माध्यम से शासन में समाज के अन्तिम व्यक्ति की भागीदारी सुनिश्चित होती है। जिससे सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों के नागरिक भी

प्रजातंत्रात्मक संगठनों में रूचि लेते हैं। भारत में प्राचीन काल में भी स्थानीय स्वशासन की व्यवस्था काफी हद तक विद्यमान थी तथा ग्रामीण शासन प्रबन्ध के लिए लोगों के अपने कायदेकानून होते थे। सन् 1992 में संविधान के 73 वें तथा 74 वें संशोधन को संसद ने पारित किया 73वां संवैधानिक संशोधन स्थानीय सरकार से सम्बन्धित है जिन्हें पंचायती राज संस्था के रूप में भी जाना जाता है तथा 74वाँ संवैधानिक संशोधन शहरी स्थानीय सरकार से सम्बन्धित है जिन्हें नगरपालिका भी कहा जाता है। अतः स्थानीय लोगों द्वारा स्थानीय मामलों का प्रबन्धन भारतीय प्रजातंत्र को एक मजबूत आधार प्रदान करता है।

कानून की सत्ता एवं स्वतंत्र न्यायपालिका

कानून की सत्ता एवं स्वतंत्र न्यायपालिका भारतीय प्रजातंत्र की रीढ है। ब्राइस ने कहा है कि'' किसी शासन तंत्र की श्रेष्ठता को जानने के लिए उसकी न्याय व्यवस्था की निपुणता से बढ़कर और कोई कसौटी नहीं हो सकती क्यों कि किसी और चीज से नागरिकों की सुरक्षा और हितों पर इतना प्रभाव नहीं पड़ता जितना कि निश्चित शीघ्र और निष्पक्ष न्याय प्रशासन से।'' भारत के प्रजातंत्र में संविधान द्वारा नागरिकों को जो मौलिक अधिकार प्राप्त हैं, उनके हनन होने की अवस्था में व्यक्ति न्यायालय तक जा सकता है।

जनता में भातृत्व की भावना

भारत का संविधान न केवल स्वतंत्रता एवं समानता का पक्षधर है बल्कि भातृत्व की भावना को भी समाहित किए हुए है। इसका उद्देश साम्प्रदायिकता, क्षेत्रवाद, जातिवाद तथा अलगाववाद सहित राष्ट्रीय एकीकरण की बाधाओं को दूर करना है। भातृत्व की भावना के अभाव में प्रजातंत्र कमजोर होता है। बी0आर0 अम्बेडकर ने भारत के संविधान का निर्माण करते समय बन्धुत्व को बहुत महत्व दिया। उन्होंने इसे ''सभी भारतीयों के मध्य आपसी भाईचारे की भावना के रूप में '' परिभाषित किया। यह वह सिद्धांत है जो सामाजिक जीवन को उसकी एकता और एकजुटता प्रदान करता है।'' संविधान के अनुसार बन्धुत्व व्यक्ति की गरिमा और 'राष्ट्र की एकता की पुष्टि करने का एक महत्वपूर्ण श्रोत है। यह समानता लोगों की नौतिक समानता को स्वीकार करके प्राप्त की जाती है, जिसे धार्मिक विश्वास भाषा, संस्कृति, परम्परा, जाति, रंग, जातीयता, वर्ग और लिंग में हमारे मतभेदों के बावजूद आपसी सम्मान के माध्यम से बनाए रखा जाता है।

स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनावों की व्यवस्था

भारत में जनता के द्वारा ही प्रतिनिधियों का चुनाव होता है। लोकतंत्र में चुनाव के अलगअलग स्तर हैं। संविधान में पूरे देश के लिए एक लोक सभा तथा पृथक में राज्यों के लिए विधान सभा का प्रावधान है। संविधान के भाग 15, अनुच्छेद 324 अनुच्छेद 329 तक निर्वाचन की व्याख्या की गई है। भारतीय संविधान

के संस्थापकों ने प्रतिनिधिक संसदीय लोकतंत्र की कल्पना भारत के लोकाचार, पृष्ठभूमि और आवश्यकताओं के लिए सबसे उपयुक्त राज्य व्यवस्था के रूप में कि थी। सार्वभौमिक मताधिकार के माध्यम से लोगों के प्रतिनिधियों का चयन और स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव भारतीय गणतंत्र के लिए सबसे उपयुक्त प्रतीत होते है।

सामाजिक राजनीतिक तथा आर्थिक समानता

भारतीय प्रजातंत्र का श्रोत भारत का संविधान है और भारतीय संविधान सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक समानता का पक्षधर है। यह अपने सभी नागरिकों की सुरक्षा के संकल्प से जुड़ा हुआ है। यह समाज के सभी व्यक्तियों को समान अधिकार, स्वतंत्रता तथा स्वायत्तता प्रदान करता है, जिससे व्यक्ति की गरिमा बनी रहे और उसके व्यक्तित्व का संतुलित विकास हो। संविधान के द्वारा राजनीति में सबका स्थान समान है तथा देश के राजनीतिक क्रियाकलापों में सभी को बिना किसी भेदभाव के भाग लेने का अधिकार है, लेकिन राजनीतिक समानता, आर्थिक समानता के बिना केवल एक कोरी कल्पना मात्र है क्यों कि अगर व्यक्ति भूख से पीड़ित होगा तो उसके लिए वोट देने का अधिकार अर्थहीन व महत्व हीन है। अतः भारतीय संविधान सामाजिक, राजनीतिक एवं आर्थिक समानता की भावना से ओत प्रोत है।

अतः हम यह कह सकते हैं कि भारत में प्रजातंत्र केवल शासन की एक प्रणाली ही नहीं है, बल्कि वह सहस्त्राब्दियों के अनुभव और इतिहास से सिंचित निर्मित भेद में एकत्व एवं विरोधी में सामंजस्य देखने वाली जीवनशैली व दृष्टि है।

10.7 भारतीय प्रजातंत्र की विसंगतियाँ

वर्तमान में भारतीय प्रजातंत्र में कई विसंगतियाँ परिलक्षित होती है। इन विसंगतियों को दूर किए बिना वास्तविक प्रजातंत्र की कल्पना नहीं की जा सकती। भारतीय समाज में कुछ ऐसे कारण विद्यमान है जो भारत में प्रजातंत्र को पूर्ण रूप से सफल होने देने में बाधक हैं जो इस प्रकार है

अशिक्षा

अशिक्षा भारतीय प्रजातंत्र के लिए सबसे बड़ी बाधा है। निरक्षर जनता प्रजातंत्र के आदर्शों एवं सिद्धांतों को नहीं समझ पाई है। अशिक्षा जनता को उनके अधिकारों एवं कर्तव्यों से विमुख रखती है। अशिक्षित जनता को राजनैतिक व्यक्ति बहलाफुसला कर उनका मत खरीद लेते हैं। अतः भारत की स्थिति प्रजातंत्र के अनुकूल नहीं है। जब तक भारत की सम्पूर्ण जनता शिक्षित नहीं हो जाती तब तक प्रजातंत्र की वास्तविक तस्वीर देखना असम्भव होगा। प्रजातंत्र के सही प्रयोग के लिए अशिक्षा जैसी समस्या को हल करना होना।

आर्थिक व सामाजिक विषमता

भारत एक सम्पूर्ण प्रभुत्व सम्पन्न गणराज्य है। यहाँ प्रजातंत्रात्मक शासन प्रणाली पाई जाती है लेकिन भारतीय समाज में व्याप्त आर्थिक एवं सामाजिक विषमताएँ इस बात की ओर संकेत करती है कि भारत में प्रजातंत्र सिद्धांत में तो है लेकिन व्यवहार में नहीं। अतः भारत में प्रजातंत्र की महत्ता तभी स्वीकार की जाएगी जब सामाजिक आर्थिक असमानता दूर होगी।

वर्ग विहीन समाज का अभाव

प्रजातंत्रात्मक शासन प्रणाली समानता की पोषण होती है। इसमें जाति, धर्म, वर्ग, सम्प्रदाय व लिंग के आधार पर किसी के भी साथ किसी प्रकार का भेदभाव नहीं किया जाता लेकिन भारतीय समाज में विपरीत परिस्थितियाँ देखने को मिलती है। यहाँ समाज विभिन्न खण्डों एवं संस्करणों में विभाजित है। साम्प्रदायिक दंगे, धार्मिक विद्वेष, इत्यादि भारत में प्रजातंत्र की असफलता को इंगित करते है। विभिन्नता युक्त समाज में प्रजातंत्र पूर्ण सफल नहीं हो सकता।

नैतिक मूल्यों का अभाव

प्रजातंत्र की सफलता के लिए एक बड़ी सीमा तक हमारे नैतिक मूल्य एवं आदर्श उत्तरदायी होतें है। भारतीय प्रजातंत्र में इसका अभाव है। जनता द्वारा चुने गए प्रतिनिधि चुनाव से पूर्ण जनता से अपने किए गए वायदों को चुनाव जीतने के पश्चात् भूल जाते है और जनता की अवहेलना करते हैं। वर्तमान समय के अपराध एवं राजनीतिक गठजोड़ देखने को मिलता रहता है। ये परिस्थितियाँ प्रजातंत्र को भारत में सफल होने से रोकती है।

संगठित जनमत का अभाव

प्रजातंत्र का सबसे महत्वपूर्ण एवं सशक्त साधन जनमत होता है। एक स्वस्थ जनमत ही स्वस्थ प्रजातंत्र की भावना विकसित करता है। स्वस्थ जनमत किसी भी देश को एक नवीन दिशा प्रदान करता है। जिससे समाज तथा राष्ट्र की प्रगति सम्भव होती है। भारत में जनमत का स्वरूप स्वस्थ नहीं कहा जा सकता। स्वस्थ जनमत के निर्माण के लिए भारत में अभी राजनैतिक प्रशिक्षण की आवश्यकता है।

निष्पक्ष समाचार पत्रों एवं टी0वी0 चैनलों का अभाव

मीडिया को प्रजातंत्र का चौथा स्तम्भ कहा जाता है। यह प्रजातंत्र का एक अभिन्न अंग है। एक कार्यशील तथा स्वस्थ लोकतंत्र को एक ऐसी संस्था के रूप में पत्रकारिता के विकास के प्रोत्साहित करना

चाहिए जो व्यवस्था से कठिन प्रश्न पूछ सके या सत्य के पक्ष में सत्ता के समक्ष खड़ा हो सके लेकिन भारत में टी0वी0 चैनल एवं अखबार किसी न किसी राजनीतिक पार्टी से सम्बन्धित होते हैं और पूर्ण रूप से व्यवसायिक हो चुके हैं, जिनका सम्बन्ध आम जनता से प्रभावी नहीं रह गया है।

राष्ट्रीय चरित्र दोष पूर्ण

राष्ट्रीय चरित्र का प्रजातंत्र की सफलता में महत्वपूर्ण योगदान होता है। भारतीय समाज में व्याप्त भ्रष्टाचार, स्वार्थपरता, बढ़ती हुई अपराधी प्रवृत्ति हमारे राष्ट्रीय चरित्र का हनन करते हैं। योजनाओं के निर्माण एवं उनके क्रियान्वयन तक में पक्षपात किया जाता है। इस प्रकार के चरित्र से प्रजातंत्र की भावना नष्ट होती है।

उपर्युक्त विश्लेषण से स्पष्ट होता है कि भारत में प्रजातंत्र की कुछ विसांगतियाँ अवश्य हैं लेकिन हम इस बात से भी इनकार नहीं कर सकते कि भारत में प्रजातंत्र के प्रति लोगों की जिज्ञासा बढ़ी है। हमें देश की मूल समस्याओं को जड़ से सुधारना होगा और यह कार्य केवल आयोगों एवं प्रतिनिधियों का ही नहीं है बल्कि इसके लिए नागरिकों को सामने आना होगा और प्रतिनिधियों से सवाल पूछने होंगे तभी भारत में प्रजातंत्र पूर्ण रूप से सफल हो सकेगा।

10.8 भारत में प्रजातंत्र को सफल बनाने के उपाय

1. सजगता प्रजातंत्र का आधार है। जनता की जागरूकता, सतर्कता, अधिकारों तथा कर्तव्यों के प्रति उसकी सजगता ही प्रजातंत्र को सफल बना सकती है।

2. भारत में हर क्षेत्र में असमानता विद्यमान है। सामंजस्यपूर्ण सामाजिक, आर्थिक तथा राजनीतिक परिवेश का निर्माण करके, सहमति आधारित प्रजातंत्र का निर्माण करके भारत में प्रजातंत्र को पूर्ण सफल बनाया जा सकता है।

3. अशिक्षा की समाप्ति के बिना न तो प्रजातंत्र की कीमत समझी जा सकती है और न ही मताधिकार का सही प्रयोग सम्भव हो सकता है। शिक्षा के व्यापक प्रसार के द्वारा नागरिक गुणों का विकास करके प्रजातंत्र के सार्थक उद्देश्यों को प्राप्त किया जा सकता है।

4. जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में नैतिक मूल्यों को प्रतिष्ठित करके प्रजातंत्र को स्वार्थ, द्वेष, एवं अन्य बुराई से मुकत करना होगा नैतिक मूल्यों का विकास ही भारत में प्रजातंत्र की सफलता का मार्ग प्रशस्त कर सकता है।

5. निष्पक्ष प्रेस, सामाजिक, आर्थिक समानता, बेरोजगारी पर नियंत्रण तथा पंचायतों/नगरीय राज व्यवस्था को और मजबूत बनाकर हम भारत में प्रजातंत्र को सफल बना सकते हैं।

10.9 सारांश

भारत न केवल विश्व का सबसे बड़ा लोकतंत्र है बल्कि यह लोकतंत्र की जननी है। प्रजातंत्र भारत की आत्मा है। अनेक विसंगतियों के पश्चात् भी भारत में प्रजातंत्र के प्रति लोगों की जिज्ञासा बढ़ी है। महात्मा गांधी ने भारत को प्रजातंत्र की भूमि कहा है। भारत में वर्तमान प्रजातंत्र क्रमिक रूप से अधिक जनभागीदारी की तरफ बढ़ा है। इसका प्रमाण मतदान और राजनीतिक चर्चाओं में लोगों की बढ़ती भागीदारी है। जिस सहजता एवं शीघ्रता से यहाँ सत्ता परिवर्तन हो जाता है, वह भी इसी बात की पुष्टि करता है। भारत में प्रजातंत्र एक ऐसी स्थिति को जन्म देता है। जिसमें सर्वसाधारण को अधिकतम भागीदारी का अवसर मिलता है। इससे केवल निर्णय लेने की प्रक्रिया में ही नहीं अपितु कार्यकारी क्षेत्र में भी भागीदारी उपलब्ध होती है। अपने विकास क्रम में प्रजातंत्र ने भिन्नभिन्न परिस्थितियों को अनन्य मात्रा में सुनिश्चित करने का प्रयास किया है। भारत में प्रजातंत्र केवल एक विशिष्ट प्रकार की शासन प्रणाली तक ही सीमित नहीं रहा है वरन् एक विशेष प्रकार के राजनीतिक संगठन, सामाजिक संगठन, एकनैतिक एवं मानसिक भावना का भी नाम है। भारत में प्रजातंत्र जीवन का समग्र दर्शन है जिसकी व्यापक परिधि में मानव जीवन के समस्त पहलू आ जाते हैं।

10.10 बोध प्रश्न

1. मिल के अनुसार प्रजातांत्रिक निर्णय निर्माण के तीन लाभ कौन से है।

लघु उत्तरी प्रश्न

1. किसी शासन तंत्र की श्रेष्ठता को उसकी न्याय व्यवस्था की निपुणता से जाना जा सकता है यह कथन किसका है।

   (अ) ब्राइस (ब) बी0आर0 अम्बेडकर

   (स) अरस्तू (द) महात्मा गांधी

2. ''कंसीडरेशन ऑफ रिप्रेजेन्टोटिव गवर्नमेंट पुस्तक किसने लिखी है?

   (अ) अब्राहम लिंकन (ब) मिल

   (स) डीबी (द) हॉल

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. भारत में प्रजातांत्रिक प्रणाली की प्रकृति का स्पष्ट कीजिए।
2. भारतीय प्रजातंत्र की विसंगतियों का वर्णन कीजिए।

10.11 संदर्भ सूची

1. Jain and Fadia, " Political Sociology"
2. Lipsel, S.M; Political Man : The Sociol Bases of Politics, Garden city, Newyork, 1960
3. बिस्वाल, तपन (2017), भारतीय राज व्यवस्था और शासन'', नई दिल्ली ओरियंट ब्लैक स्वॉन
4. गाबा, ओम प्रकाश (2016) : ''राजनीति सिद्धांत की रूप रेखा, '' नई दिल्ली मयूर पेपर बैक्स
5. जैन, पुखराज (2022) : ''संवैधानिक शासन और भारत में प्रजातंत्र'', साहित्य भवन पब्लिकेशन आगरा
6. फड़िया, कुलदीप (2022) : भारत में राजनीतिक प्रक्रिया'', साहित्य भवन पब्लिकेशन्स, आगरा
7. बघेल, डी0एस0 : ''राजनैतिक समाजशास्त्र'' विवेक प्रकाशन, नई दिल्ली
8. सिंह, टी0पी0
9. https://hindi: ipleaders.in/high lights.of.democracy
10. https://hindi.webdunia.com.
11. https://eqyankosh.ac.in

इकाई – 11 : राजनीतिक समाजीकरण : अर्थ एवं परिभाषा

इकाई की रूपरेखा

11.0 उद्देश्य

11.1 प्रस्तावना

11.2 समाजीकरण

11.3 राजनीतिक समाजीकरण

11.4 राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ एवं परिभाषा

11.5 बोध प्रश्न

11.6 सारांश

11.7 सन्दर्भ सूची

11.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन उपरान्त आप जानेंगे–

1. समाजीकरण का तात्पर्य को आप समझ सकेंगे।
2. राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ को आप जान सकेंगे।
3. राजनीतिक समाजीकरण की परिभाषा को आप समझ सकेंगे।

11.1 प्रस्तावना

राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति समाजीकरण के माध्यम से अपने राजनीतिक मूल्यों, विचारों, दृटिकोणों और धारणाओं को आंतरिक रूप से समझते हैं। राजनीतिक समाजीकरण समाजीकरण की प्रक्रियाओं के माध्यम से होता है, जिसे प्राथमिक और द्वितीयक समाजीकरण के रूप में संरचित किया जा सकता है। राजनीतिक समाजशास्त्र की एक प्रमुख विषय है। हम इस तथ्य से परिचित हैं कि राजनीतिक संस्कृति स्वतः विकसित नहीं होती। यह एक समन्वित रूप में अनेक प्रथाओं से प्रभावित होता है। राजनीतिक सामाजिकरण का निर्माण बचपन से ही होता है। बचपन से ही बाल समाज और राज्य के प्रति अपना दृटिकोण या अभिवृत्ति विकसित होती है। अपने पारिवारिक परिवेश में वे माता–पिता, भाई–बहन और अन्य कुटुंबों एवं संबंधों के साथ–साथ समाज और राज्य के प्रति अपना दृ टिकोण विकसित करते हैं। प्रवृत्ति– दृष्टिकोण, अनुशासन और वास्तुशिल्प का निर्माण और विकास करने की प्रथा को समाजीकरण कहा जाता है। राजनीतिक समाजीकरण के अर्थ में निहित तत्वों की चर्चा करना आवश्यक है ।

11.2 समाजीकरण

समाजीकरण का तात्पर्य उस प्रक्रिया से है जिसके आधार पर बच्चे अपने समाज के योग्य और उचित नागरिक बनते हैं। सामाजिक मान्यताओं को आत्मसात करके अपने सामाजिक उत्तरदायित्वों को सम्भालने की चेतना का विकास ही समाजीकरण है। प्रारम्भ में बालक अपना ही हित देखता है। सामाजिक हितों का मूल्य क्रमशः विकसित होता है। मान्य सामाजिक आदतों का विकास और समाज के एक उत्तरदायी, कर्तव्यपरायण सदस्य की भाँति जीवन व्यतीत करने की क्रियाओं को सीखना ही समाजीकरण है।

व्यक्ति स्वभावतः पशु की भाँति स्वार्थी, असभ्य और पाशविक होता है। जब मनुष्य के इस पाशविक मूल स्वभाव में परिवर्तन व परिमार्जन होता है, तभी वह मानव बनता है। पाशविक वृत्ति का मानव वृत्ति में परिवर्तन को ही समाजीकरण कहा जा सकता है।

बालक प्रारम्भ में स्वयं को समाज का अंग नहीं समझता है। परिवार को अपनाकर स्वयं को परिवार का एक सदस्य समझने की चेतना का क्रमशः विकास होता है, जब बालक पूरे समाज को अपनाकर स्वयं को समाज का एक सदस्य समझने लगता है, तभी उसका समाजीकरण पूर्ण होता है। समाजीकरण एक सामाजिक क्रिया है।

11.3 राजनीतिक समाजीकरण

राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृतियों का अनुरक्षण और उसमें परिवर्तन किया जाता है। समाजीकरण के माध्यम से व्यक्तियों को राजनीतिक संस्कृतियों में शामिल किया जाता है। तभी राजनीतिक वस्तुओं के प्रति उनके अभिविन्यास का निर्माण किया जाता है। दूसरे शब्दों में, समाजीकरण उस शिक्षण प्रक्रिया की ओर निर्देश करता है, जिसके द्वारा सुसंचालित राजनीतिक व्यवस्था के लिए स्वीकार्य मानकों और व्यवहारों को एक पीढ़ी से अगली पीढ़ी तक सम्प्रेाति किया जाता है। राजनीतिक समाजीकरण का उद्देश्य व्यक्तियों का इस तरीके से प्रशिक्षण और विकास करना है कि वे राजनीतिक समुदाय के सुकार्यकारी सदस्य बन सकें ।

प्रत्येक राजनैतिक व्यवस्था में राजनैतिक संस्कृति का विशेष महत्त्व होता है। यह राजनैतिक संस्कृ ति भिन्न–भिन्न राजनैतिक समाजों में भिन्न–भिन्न प्रकार की होती है। राजनैतिक संस्कृति का विकास भी अलग–अलग ढंग का होता है। अतः प्रत्येक देश की राजनैतिक संस्कृति विशिष्ट होती है। संस्कृति को विशिष्टता प्रदान करने में अनेक तत्त्व या कारणों का योगदान होता है जिसमें सर्वाधिक प्रभाव तत्त्व या कारण राजनैतिक समाजीकरण है। राजनैतिक संस्कृति की रक्षा राजनैतिक समाजीकरण के द्वारा ही सम्भव है। प्रत्येक देश की राजनैतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित करने का महत्त्वपूर्ण कार्य राजनैतिक समाजीकरण के माध्यम से होता है। इसकी प्रकृति एवं अभिकरणों को समझने से पूर्व इसके अर्थ व परिभाषा को समझना आवश्यक है।

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया सामान्यतया आकस्मिक अथवा अदृश्य रूप से कार्य करती है। इसका अर्थ यह है कि यह इतने शान्त और सौम्य रूप से संचालित होती है कि कई बार लोगों को इसके संचालन की खबर भी नहीं होती है। राजनीतिक समाजीकरण की संकल्पनाओं में प्रधान बल एक पीढ़ी तक राजनीतिक मूल्यों के सम्प्रेाण पर दिया जाता है। किसी सामाजिक अथवा राजनीतिक व्यवस्था की स्थिरता

इस तथ्य के कारण इसके सदस्यों के राजनीतिक समाजीकरण पर निर्भर करती है कि एक अच्छा कार्यकारी नागरिक मानकों को अंगीकार कर ले और उन्हें भावी पीढ़ियों को सम्प्रेाति करे। उदाहरण के लिए, ब्रिटेन में नागरिकों को प्रशिक्षित कर इस बात का अभ्यस्त बनाया जाता है कि वे परिवर्तन करने के लिए संवैधानिक उपायों को स्वीकार कर लें, बजाय इसके कि इन मामलों को सड़कों पर ले जायें या हिंसात्मक उथल–पुथल की अवस्थाएं पैदा करें ।

11.4 राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ एवं परिभाषा

राजनैतिक समाजीकरण, समाजीकरण का एक विशिट रूप है। जब व्यक्ति की सीखने की प्रक्रिया का सन्दर्भ सामाजिक व्यवस्था से जोड़ते हैं तो इस प्रक्रिया को समाजीकरण कहा जाता है और जब इसका सन्दर्भ राजनैतिक व्यवस्था से जोड़ दिया जाता है, तब इसे राजनैतिक समाजीकरण कहा जाता है। एक में व्यक्ति समाज के प्रति उन्मुखी रहता है और दूसरे में समाज की एक उप–व्यवस्था–समाजीकरण व्यवस्था की ओर उन्मुखी होती है। राजनैतिक समाजीकरण सीखने की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनैतिक व्यवस्था के मानकों एवं मूल्यों का आन्तरीकरण किया जा सके तथा इन मानकों और मूल्यों को आने वाली पीढ़ियों को हस्तान्तरित कर सके। राजनैतिक समाजीकरण के द्वारा ही व्यक्ति राजनैतिक उत्तरदायित्वों एवं राजनैतिक व्यवहार प्रतिमानों को सीखता है एवं उन्हें अपने जीवन में उतारने का प्रयत्न करता है। राजनैतिक समाजीकरण एक स्वस्थ राजनैतिक वातावरण के लिए स्वस्थ नागरिकों को तैयार करता है। फलतः राजनैतिक व्यवस्था एवं राजनैतिक संस्कृति दोनों सुदृढ़ होते हैं।

सरल शब्दों में कहा जाए तो राजनीतिक रामाजीकरण एक ऐसा विचार है जो राजनीतिक स्थायित्व (Political stabilization) के लक्ष्य को प्राप्त करने की अपेक्षा करता है। रावर्टा सीगल के शब्दों में, राजनीतिक समाजीकरण का उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों का प्रशिक्षण और विकास करना है जिससे वे राजनीतिक रामाज के अच्छे कार्यकारी सदस्य बन सकें। राजनीतिक रामाजीकरण व्यक्तियों के मन में मूल्यों, मानकों और अभिविन्यासों का विकास करता है जिसमें राजनीतिक व्यवस्था के प्रति विश्वारा की भावना हो और ये अपने आपको अच्छे कार्यकारी नागरिक के रूप में बनाये रखें तथा अपने उत्तराधिकारियों के मन पर अमिट छाप छोड़ एकें। सीगल के शब्दों में, राजनीतिक रामाजीकरण से अभिप्राय सीख की यह प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्रचलित राजनीतिक व्यवस्था द्वारा स्वीकृत राजनीतिक आदर्श एवं व्यवहार पीढ़ी–दर पीढ़ी हरतान्तरित होते हैं। लेगटन ने भी इसी प्रकार के विचार प्रकट किये हैं। इनके शब्दों में व्यापकतर अर्थ में राजनीतिक समाजीकरण वह तरीका है जिसके द्वारा समाज राजनीतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तान्तरित करता है ।

समाजीकरण की परिभाषा करते हुए बोगार्डस लिखते हैं, समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिससे व्यक्ति मानव कल्याण के लिए एक–दूसरे पर निर्भर होकर व्यवहार करना सीखते हैं और ऐसा करने में सामाजिक आत्मनियंत्रण, सामाजिक जिम्मेदारी और सन्तुलित व्यक्तित्व का अनुभव करते हैं। इसी प्रकार जॉनसन कहते हैं समाजीकरण एक सीखना है, जो सीखने वालों को सामाजिक कार्य के योग्य बनाता है। अतः हम यह कह सकते हैं कि समाजीकरण मानव के सीखने की वह प्रक्रिया है, जिसके द्वारा मनुष्य सामाजिक प्राणी बनता है।

डेविड ईस्टन के शब्दों में किसी प्रकार से एक प्रौढ़ पीढ़ी युवा पीढ़ी को अपने जैसे प्रौढ़ प्रतिरूप (dultimage) में डालती है, यही समाजीकरण है। पीटर मर्कल ने राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को एक प्रकार की सामाजिक प्रक्रिया का स्वाभाविक अध्ययन माना है। उनके अनुसार किसी राज–व्यवस्था के सदस्यों द्वारा राजनीतिक दृटिकोण एवं व्यवहार की प्रतिकृति को विकसित करने से सम्बद्ध वैज्ञानिक अध्ययन को राजनीतिक समाजीकरण का अध्ययन कहा जाता है।

1. **एडमंड व पावेल** के अनुसार राजनीतिक समाजवाद वह प्रक्रिया है जो राजनीतिक संस्कृति द्वारा सम्प्रेषित और परिवर्तित होती है। इस प्रक्रिया के द्वारा वैयक्तिक राजनीतिक संस्कृति में प्रवेश किया जाता है तथा राजनीतिक शास्त्र के प्रति उसकी अभिमुखता का निर्माण होता है।

2. **स्टेसी** के मत में समाज विकास की एक प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति ज्ञान, जिज्ञासा, विश्वास, मूल्य, मनोवृत्ति एवं स्ववृत्तियों को प्राप्त करता है और जो समाज के एक प्रभावशाली सदस्य के रूप में कार्य करने योग्य बनता है। राजनीतिक समाजीकरण को विभिन्न विद्वानों ने विभिन्न सन्दर्भ में लिया है तथा विभिन्न दृष्टिकोणों से इसकी व्याख्या की है।

3. **फेड ग्रीनस्टीन** ने संकुचित संदर्भ में राजनीतिक समाजीकरण को परिभाषित करते हुए कहा है कि सीमित अर्थ में राजनीतिक समाजीकरण संस्थागत अभिकरणों द्वारा जिन्हें अनौपचारिक रूप से यह दायित्व सौंपा गया है राजनीतिक सूचनामों, मूल्यों तथा व्यवहारों की नियोजित है।

4. **ग्रीनस्टीन** ने व्यापक संदर्भ में राजनीतिक समाजीकरण न केवल जीवनचक्र के हर स्तर पर सभी प्रकार के राजनीतिक अधिगम औपचारिक व अनौमचारिक, नियोजित व अनियोजित को समाहित करता है, वरन् उन गैर राजनीतिक अभिव्यक्त अधिगम को भी समाहित करता है जो राजनीतिक व्यवहार को प्रभावित करता है, जैसे आवश्यक अभिवृतियाँ तथा आवश्यक व्यक्तित्व–लक्षण ।

5. **ईस्टन डेनिस** के शब्दों में राजनीतिक समाजीकरण विकास की वे प्रक्रियाएं हैं जिनके द्वारा व्यक्ति राजनीतिक अभिविन्यास एवं व्यवहार के प्रतिभानों को सीखता है।

6. **सीवेश** के शब्दों में राजनीतिक समाजीकरण सीखने की यह प्रक्रिया माना। जिसके द्वारा किसी राजनीतिक व्यवस्था द्वारा स्वीकृत राजनीतिक आदर्श एवं व्यवहार पीढ़ियों के बीच हस्तांतरित होते हैं।

7. **राबर्टा सीमेल** के अनुसार राजनीतिक समाजीकरण अग्रगमित राजनीतिक व्यवस्था द्वारा स्वीकृत या मान्य मानकों, अभिवृत्तियों एवं व्यवहारों की मानुक्रमिक दंग से सीखने की प्रक्रिया है।

8. **हरबर्ट हीमेन** ने कहा राजनैतिक समाजीकरण जो सम्पूर्ण ज्ञान की प्रक्रिया का एक अंग है जिसके माध्यम से राजनैतिक पद्धति के सम्बन्ध में ज्ञान की प्राप्ति होती हैं उस ज्ञान के अन्तर्गत व्यक्तियों, घटनाओं, नीतियों तथा आवश्यकताओं से संवर्धित ज्ञान भी शामिल है।

9. **राबर्ट** के अनुसार राजनैतिक सामाजिकरण व्यक्ति को राजनैतिक व्यवस्था में सहभागिता के लिए, मूल्यों आदतों और प्रेरणा का साधन है।

10. **कैनेथ लैंगटन** राजनैतिक समाजीकरण वह तरीका है जिसके द्वारा समाज राजनैतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पौड़ी में हस्तान्तरित करता है।

11. **आर.एस.सीगल** राजनैतिक समाजीकरण का अभिप्राय सीखने की उस प्रक्रिया से है जिसके द्वारा स्वीकृत राजनैतिक आदर्श एवं व्यवहार पीढ़ी दर पीढ़ी स्थानान्तरित होता है।

12. **अल्टॉफ** ने इस संदर्भ में राजनीतिक समाजीकरण को परिभाषित करते हुए कहा है कि राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था से अवगत होता है तथा जो राजनीतिक वस्तुओं के प्रति उसकी राजनीतिक अभिवृत्तियों एवं मूल्यों वाले समाज के सामाजिक, आधिक और सांस्कृतिक पर्यावरणों के प्रभाव का भी परीक्षण करता है।

अभ्यास प्रश्न 1

एडमंड व पावेल की परिभाषा का वर्णन कीजिए।

उपरोक्त परिभाषाओं के आधार पर कहा जा सकता है कि राजनैतिक समाजीकरण मानव के सीखने की वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा मनुय सामाजिक प्राणी के साथ एक राजनीतिक प्राणी बनता है। यह एक ऐसी प्रक्रिया है जो राजनैतिक संस्कृति एवं राजनैतिक व्यवस्था में राजनैतिक व्यक्तियों में सदैव एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित होती रहती है। वस्तुतः यह ऐसी प्रक्रिया है जिसका परिणाम रूपों में अध्ययन किया जाता है।

राजनीतिक समाजीकरण की विभिन्न परिभाषाओं एवं विभिन्न कथनों के विश्लेाणोपरान्त हम उसके अन्तर्गत निम्नलिखित तत्त्व पाते हैं

- राजनीतिक समाजीकरण एक प्रक्रिया है।
- राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक सीख की प्रक्रिया होते हुए भी मात्र सीखने से भिन्न है।
- राजनीतिक समाजीकरण वह प्रणाली है जिसके द्वारा व्यक्तियों की अभिवृत्तियों, अभिविन्यासों तथा मूल्यों का निर्माण होता है और उसे विकसित होने में सहायता मिलती है।
- राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक मूल्यों को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक हस्तांतरित करने की भी प्रक्रिया है।
- राजनीतिक समाजीकरण अनवरत चलती रहने वाली प्रक्रिया है। यह कुछ समय तक चलने वाली अस्थायी प्रक्रिया नहीं है।
- राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया अत्यधिक विस्तृत और जटील है। इसके अन्तर्गत व्यक्ति उन सभी बातों को ग्रहण करता है जो उसके सामाजिक राजनीतिक जीवन के लिए आवश्यक है।
- राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया व्यक्ति की शैशावावस्था से आरम्भ हो जाती है बौर मृत्यु के पूर्व तक चलती रहती है।
- राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया व्यक्तिगत अनुभवों तथा दूसरों से सीखी हुई बातों का मिश्रण है। समाजीकरण प्रक्रिया में व्यक्ति अपनी अनुभूति से भी सीखता है तथा दूसरों की बताई हुई बातों से भी ग्रहण करता है।
- राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया एक मनोवैज्ञानिक प्रक्रिया है क्योंकि यह नागरिकों के दृष्टिकोण एवं अभिवृत्तियों से सम्बन्धित है।

अभ्यास प्रश्न 2

राजनीतिक समाजीकरण की परिभाषाओं एवं विश्लेषणोपरान्त हम निम्नलिखित तत्त्व पाते हैं ।

.....

.....

.....

.....

11.5 सारांश

राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिससे व्यक्तियों की अभिवृत्तियों, अभिविन्यासों एवं मूल्यों का निर्माण और विकास होता है तथा वे अभिवृत्तियाँ, अभिविन्यास और मूल्य एक पीढ़ी हे दूसरी पीढ़ी में सहज और अनुक्रमिक ढंग से हस्तांतरित होते रहते हैं। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि समाजीकरण एक प्रकार से अधिगमन या सीखने की प्रक्रिया है, परन्तु समाजीकरण मात्र अधिगमन या सीखना नहीं है। सीखना (learning) और समाजीकरण में अन्तर है सीखने के अन्तर्गत सामाजिक प्रासंगिकता (social rele& vance) नहीं रहती है, जबकि समाजीकरण का मुख्य तत्त्व सामाजिक प्रासंगिकता है। मात्र बोलना हमारे सामाजिक जीवन के लिए आवश्यक नहीं हो सकता है, जब तक समाजीकरण सामाजिक जीवन को प्रभावित करता है। इसके अतिरिक्त सीखना एक प्रकार नियोजित एवं सचेत प्रयास है, और समाजीकरण एक सहज और स्वाभाविक प्रक्रिया है। उदाहरण के लिए भूगोल या ज्यामिति की बातें बच्चों को एक नियोजित ढंग से सिखलायी जाती हैं, परन्तु समाज में उसे क्या करना चाहिए या समाज के प्रति उसके क्या दायित्व हैं, वह इस बात को स्वतः अपने परिवार के सदस्यों के साथ परस्पर क्रिया के दौरान ग्रहण कर लेता है।

11.6 बोध प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1- पीटर मर्कल ने राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को क्या माना .....है।

(क) एक प्रकार की सामाजिक प्रक्रिया का स्वाभाविक अध्ययन माना है।

(ख) सामाजिक प्रक्रिया

(ग) स्वाभाविक अध्ययन

(घ) एक प्रकार की सामाजिक प्रक्रिया है।

2- यह किसका कथन है। राजनीतिक समाजीकरण विकास की वे प्रक्रियाएं हैं जिनके द्वारा व्यक्ति राजनीतिक अभिविन्यास एवं व्यवहार के प्रतिभानों को सीखता है।

(क) स्टेसी (ख) पीटर मर्कल (ग) डेविड ईस्टन (घ) एडमंड व पावेल

लघु उत्तरी प्रश्न के उत्तर

(क) एक प्रकार की सामाजिक प्रक्रिया का स्वाभाविक अध्ययन माना है।

(ग) डेविड ईस्टन

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. राजनीतिक समाजीकरण की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।

11.7 संदर्भ सूची

- https://hi.wikipedia.org/wiki
- https://www.scribd.com/document
- T. B. Bottomore: Elites and Society, Penguin Books,1964
- Douglas V. Verney : An Analysis of Political Sysytems,
- Wright Mills, Quoted from J. H. Meisel's The Myth of the Ruling Class,
- Dr. B.L. Fadia & Dr. Pukhraj Jain, Modern Political Theory,
- H.D. Lasswell in Lasswell and Learner edited "World Revolutionary Elites, Studies in coercive Ideological Movement,
- डॉ0 डी0 एस0 बघेल डॉ0 टी0 पी0 सिंह कर्चुली "राजनैतिक समाजशास्त्र' विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, नई दिल्ली 2010

इकाई 12 राजनीतिक समाजीकरण प्रकृति एवं विशेषताएँ

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 प्रस्तावना

12.2 राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ

12.3 राजनीतिक समाजीकरण की परिभाषाएँ

12.4 राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति एवं विशेषताएँ

12.5 सारांश

12.6. बोध प्रश्न

12.7 सन्दर्भ सूची

12.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन उपरान्त आप जानेगे।

1. राजनीतिक समाजीकरण के अर्थ से आप परिचित होंगे।
2. राजनीतिक समाजीकरण की परिभाषाओं के बारे में आप ज्ञान प्राप्त करेंगे।
3. राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति एवं विशेषताओं की विस्तार पूर्वक समझ विकसित करेंगे।
4. राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को समझेंगे।

12.1 प्रस्तावना

राजनीतिक समाजीकरण को पहले नागरिक प्रशिक्षण, नागरिक समाजीकरण तथा नागरिकता के नामों से जाना जाता था। राजनीतिक समाजीकरण वास्तव में राजनीति एवं राजनीतिक व्यवहार के क्षेत्र में समाजीकरण की प्रक्रिया का परिसीमन है। यह वह प्रक्रिया है जो राजनीतिक आदर्शों को सीखने का माध्यम है तथा राजनीतिक संस्कृतियों का अनुरक्षण एवं परिवर्तन भी इसके माध्यम से सम्भव होता है। इस प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति न केवल राजनीतिक संस्कृतियों में सम्मिलित होता है वरन् राजनीतिक वस्तुओं, परिस्थितियों के प्रति उसके अभिविन्यास का निर्माण भी होता है। किसी सामाजिक अथवा राजनीतिक व्यवस्था की स्थिरता इसके सदस्यों के राजनीतिक समाजीकरण पर निर्भर करती है क्योंकि एक जिम्मेदार कार्यकारी नागरिक मानकों को अंगीकार करता है और उन्हें भावी पीढ़ियों को सम्प्रेषित करता है। उदाहरण के लिए ब्रिटेन में नागरिकों को प्रशिक्षित कर इस बात का अभ्यस्त बनाया जाता है कि वे परिवर्तन करने के लिए संवैधानिक उपायों को स्वीकार कर ले बजाए इसके की किसी मामले को सड़को पर ले जाएँ और हिंसात्मक उथलपुथल की अवस्थाएँ पैदा करें। एक परिघटना के रूप मे, राजनीतिक समाजीकरण सदियों से अस्तित्व में है, लेकिन इसका व्यापक एवं व्यवस्थित अध्ययन 20वीं सदी के प्रारम्भ से ही किया जा रहा है। 20वीं सदी के आरम्भ में संयुक्त राज्य अमेरिका में शिक्षकों ने स्कूली बच्चों पर अध्ययन किया, जिसमें बच्चों द्वारा सर्वाधिक प्रशंसित राष्ट्रीय स्तर पर महत्वपूर्ण व्यक्तियों के चयन को सम्मिलित किया गया। प्रारम्भिक शोध में यह समझने पर भी ध्यान केन्द्रित किया गया कि द्वितीय विश्व युद्ध और शीतयुद्ध नें राजनीति तथा सरकार के प्रति बच्चों के दृष्टिकोण को कैसे प्रभावित किया। हाल के वर्षों में, विद्वानों ने राजनीतिक समाजीकरण के प्रति व्यापक दृष्टिकोण अपनाया है तथा आयु, शिक्षा और परिवारिक पृष्ठभूमि के अतिरिक्त जाति, लिंग तथा समाजिक वर्ग जैसे कारणों का भी अध्ययन किया है। समाजशास्त्रीयों का मानना है कि लोग अपनी किशोरावस्था से लेकर बीसवें वर्ष के मध्य तक की अवधि में राजनीतिक रूप से सबसे अधिक

प्रभावित होते हैं, जब उनके विचार निश्चित नहीं होते और वे नए अनुभवों के लिए तैयार होते हैं। अनेक अध्ययन इस बात की पुष्टि करते है कि राजनीतिक समाजीकरण समाज की राजनीतिक परम्पराओं, राजनीतिक प्रतीकों एवं मूल्यों को आत्मसात करने का एक सशक्त माध्यम होते हैं।

12.2 राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ

राजनीतिशास्त्र में समाजीकरण की अवधारणा का प्रथम व्यवस्थित विश्लेषण का श्रेय हर्बर्ट हाइमैन को है जिन्होंने उन सभी सामाजिक प्रतिमानों का अर्जन राजनीतिक समाजीकरण माना जो समाजिक अभिकरणों की सहायता से व्यक्ति के लिए सम्भव है। हाईमैन ने राजनीतिक समाजीकरण को एक स्वायत्व प्रक्रिया न मानकर उसे बृहत सभाजीकरण की एक उपप्रक्रिया के रूप में प्रस्तुत किया। ग्रेवियल आमण्ड ने राजनीतिक समाजीकरण को राजनीतिक संस्कृति के परिप्रेक्ष्य में राजनीतिक मूल्य व्यवस्थाओं के प्रेरक का अपरिहार्य संयत्र माना है।

राजनीतिक समाजीकरण, राजनीति विज्ञान के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण अवधारणा है, जिसके माध्यम से एक व्यक्ति स्वयं की राजनीतिक समझ को विकसित करता है, जो सामाजिक क्षेत्रों में उसके व्यवहार को प्रभावित करते हैं। राजनीतिक समाजीकरण व्यक्तियों के राजनीतिक विश्वास प्रणालियों का निर्माण करता है और उन्हें राष्ट्र के जिम्मेदार नागरिक बनाने के लिए दृष्टिकोण, विश्वास, मूल्य तथा व्यवहार विकसित करने की अनुमति प्रदान करता है कि उनके आसपास के वातावरण में सत्ता कैसे व्यवस्थित होती है तथा हमें यह भी सिखाता है कि राजनीतिक संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक कैसे पहुंचती है। राजनीतिक वैज्ञानिकों ने निष्कर्ष निकाला है कि राजनीतिक विश्वास और व्यवहार आनुवंशिक रूप से विरासत में नहीं मिलते हैं। व्यक्ति अपने जीवन काल में राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से यह सीखता है कि उसे राजनीतिक संरचना में किस प्रकार सहभागिता करनी है एवं राजनीतिक, व्यवस्था की वैधता में किस प्रकार अपने विश्वास के स्तर को विकसित करना है।

डेनिस कवानाग ने बताया कि राजनीतिक समाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है, जिसके द्वारा व्यक्ति राजनीति के प्रति आकर्षित होता है और उसे सीखता एवं विकसित करता है। **राबर्ट सीगल** का मानना है कि राजनीतिक समाजीकरण का उद्देश्य ऐसे व्यक्तियों का प्रशिक्षण तथा विकास करना है, जिससे वे राजनीतिक समाज के जिम्मेदार तथा कार्यकारी सदस्य बन सकें तथा प्रचलित राजनीतिक व्यवस्था द्वारा स्वीकृत राजनीतिक आदर्श एवं व्यवहार अगली पीढ़ी को सम्प्रेषित कर सकें। **डॉसन एवं पृविट** ने बताया है कि राजनीतिक समाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक नागरिक राजनीतिक दृष्टिकोण से परिपक्व बनता है।

डेविड ईस्टन ने आर डी हैस के साथ, एक अध्ययन में राजनीतिक समाजीकरण को तीन आधार भूत अभिवृत्तियों ,ज्ञान, मूल्य, व्यवस्था एवं मनोवृत्ति से प्रेरित प्रक्रिया के रूप में समझा। **फ्री मैन** के अनुसार राजनीतिक समाजीकरण सामान्य समाजीकरण प्रक्रिया का एक निश्चित भाग है, जो राजनीतिक दृष्टि से सांदर्भिक सामाजिक प्रतिमानों के आदर्श से सम्बन्धित है। राजनीतिक समाजीकरण नागरिकों को ज्ञान देकर समाज का बेहतर कार्यवाहक बनाना है क्यों कि राजनीतिक पद्धति में एकता के अभाव में राजनीतिक प्रक्रिया असम्भव हो जाती है जिससे स्थायित्व को खतरा उत्पन्न हो जाता है।

बोध प्रश्न

डेनिस कवानाग ने राजनीतिक समाजीकरण का अर्थ क्या बताया है।

.....

.....

.....

.....

.....

राजनीतिक समाजीकरण उस समय आरम्भ होता है जब बच्चा पर्यावरण में प्रवेश करता है। वह अनेक प्रकार की परिस्थितियों के सम्पर्क में आता है जिसके माध्यम से वह ज्ञान प्राप्त करता है। यह एक ऐसी स्थिति है जिसमें बच्चा सत्ता, आज्ञा, विरोध, सहभागिता के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त करता है। **ईस्टन एवं डेजिंग** बच्चे के जीवन में चार सत्रों का वर्णन करते हैं, जिसके द्वारा बच्चा राजनीतिक संस्कृति में प्रवेश करता है।

(1) विशेष व्यक्तियों के माध्यम से सत्ता की मान्यता

(2) सार्वजनिक एवं निजी सत्ता में अन्तर

(3) राजनीतिक संस्थाओं एवं व्यवहार के सम्बन्ध में ज्ञान

(4) राजनीतिक संस्थाओं एवं व्यक्ति विशेष के मध्य अन्तर

मिलचर रस ऐसी ही स्थिति में वातावरण एवं प्रयोगात्मक प्रभाव का वर्णन करते हैं, जो बच्चे के समाजीकरण को प्रभावित करते हैं। उन्हीं का मत है कि इसमें कोई संदेह नहीं है कि समाजीकरण की प्रक्रिया मनुष्य के आरम्भिक जीवन से ही प्रारम्भ हो जाती है और आजीवन चलती रहती है। प्राय यह देखा

गया है कि जो प्रभाव मनुष्य पर राजनीतिक जीवन आरम्भ करने से पूर्व पड़ते हैं वे अधिक महत्व रखते हैं। व्यक्ति जिन प्रभावों को प्रयोग के आधार पर ग्रहण करता है, उनकी तुलना वह आरम्भ में प्राप्त मूल्यों एवं दृष्टिकोणों से करता है और उसी आधार पर अपने मूल्यों एवं प्रभावों को संशोधित करता है।

यह अवधारणा विकासशील देशों में और भी अधिक महत्वपूर्ण हो जाती है जहाँ सामाजिक एवं सांस्कृतिक विविधताएँ जैसे धर्म, संस्कृति, क्षेत्र, जाति एवं वर्ग सम्बन्धी इत्यादि स्तरों पर लोग एक दूसरे से पृथक दृष्टिकोण रखते है। कई बार ये पृथक दृष्टिकोण राष्ट्रीय एकता के मार्ग में बाधा उत्पन्न करते हैं। समाज में सरकार की भूमिका नीतियों के वैध लक्ष्यों और भागीदारी के स्तर के विषय में किसी तरह के समझौते पर पहुँचने के लिए बाधाओं को दूर करना आवश्यक है। एक प्रभाव पूर्ण राजनीतिक व्यवस्था के इस लक्ष्य को एक मनोवैज्ञानिक अवधारणा राजनीतिक समाजीकरण के द्वारा ही प्राप्त किया जा सकता है। **लुसियन पाई** राजनीतिक संस्कृति को एक ऐसी प्रक्रिया के रूप में परिभाषित करते है जिसके द्वारा दृ ष्टिकोण एवं विश्वास राजनीतिक प्रक्रिया को क्रम एवं अर्थ प्रदान करते हैं। एक राजनीतिक प्रणाली की राजनीतिक संस्कृति को निर्मित करने में राजनीतिक समाजीकरण की अहम् भूमिका होती है।

12.3 राजनीतिक समाजीकरण की परिभाषाएँ

एलेन आर0 बाल 'राजनीतिक व्यवस्था के बारे में लोगों का दृष्टिकोण और विश्वास की स्थापना तथा विकास राजनीतिक समाजीकरण कहलाता है।''

हरबर्ट साइमन के अनुसार ''राजनीतिक समाजीकरण जो सम्पूर्ण ज्ञान की प्रक्रिया का अंग है, उससे उस प्रक्रिया का बोध होता है जिसके माध्यम से राजनीतिक व्यवस्था के सम्बन्ध में ज्ञान की प्राप्ति होती है। इस ज्ञान के अन्तर्गत व्यक्तियों, घटनाओं, नीतियों एवं आवश्यकताओं से सम्बद्ध ज्ञान भी सम्मिलित है।''

ऑस्टीन रेने ''राजनीतिक समाजीकरण, समाजीकरण का वह भाग है जो आम आदमी का राजनीतिक व्यवस्था के प्रति दृष्टिकोण विकसित करता है।''

लेगटन ''राजनीतिक समाजीकरण वह तरीका है जिसके द्वारा समाज राजनीतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित करता है।''

पीटर मर्कल ने राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को एक प्रकार की सामाजिक प्रक्रिया का स्वाभाविक अध्ययन माना है उनके अनुसार ''किसी राजनीतिक व्यवस्था के सदस्यों द्वारा राजनीतिक दृष्टिकोण एवं व्यवहार की प्रतिकृति को विकसित करने से सम्बद्ध वैज्ञानिक अध्ययन को राजनीतिक समाजीकरण का अध्ययन कहा जाता है।''

डेविड ईस्टन के अनुसार ''राजनीतिक समाजीकरण वह विकास शील प्रक्रिया है जिनके द्वारा व्यक्ति राजनीतिक गतिविधियों की ओर आकर्षित होते है और अपने व्यवहार को सुनिश्चित करते है।''

आमंड तथा पावेल के शब्दो में ''राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृतियों की रक्षा तथा उनमे परिवर्तन किया जाता है और इस कार्य के निष्पादन मे व्यक्तियों को राजनीतिक संस्कृतियों को सम्मिलित किया जाता है तथा राजनीतिक धारणाओं के प्रति उनके विश्वास का निर्माण किया जाता है।

लेवाइन के अनुसार ''राजनीतिक समाजीकरण व्यक्ति की राजनीतिक व्यवस्था में सहभागिता के लिए मूल्यों आदर्शों एवं प्रेरणा का साधन है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के आधार पर हम यह कह सकते है कि राजनीतिक समाजीकरण मानव के सीखने की वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था के मूल्यों एवं मानकों का आन्तरीकरण करता है और उसे एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी को हस्तान्तरित करता है।

12.4 राजनीतिक समाजीकरण की प्रकृति एवं विशेषताएँ

- राजनीतिक समाजीकरण एक सार्वभौमिक प्रक्रिया है। यह कुछ समाजों तक सीमित न होकर सभी समाजों में अनवरत रुप से चलती रहती है। राजनीतिक व्यवस्था के स्वरूपों में भिन्नता होने के कारण इसकी गति तीव्र या धीमी हो सकती है लेकिन यह प्रक्रिया प्रत्येक समाज में सार्वभौम रूप में पायी जाती है।

- राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक गतिविधियो, मूल्यों एवं मानकों को आन्तरीकृत करने की एक प्रक्रिया है अर्थात यह सीखने की प्रक्रिया है। राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति में राजनीतिक अनुकूलन की भावना विकसित होती है और वह नई परिस्थितियों से समायोजन करना सीखता है।

- राजनीतिक समाजीकरण प्रकट और अप्रकट दोनों रूप में होता है। जब किसी विशेष उद्देश्य की प्राप्ति के लिए राजनीतिक समाजीकरण का स्पष्ट व प्रत्यक्ष रूप से प्रयोग किया जाता है तो इसे प्रकट राजनीतिक सभ्माजीकरण करते है। शिक्षण संस्थाओं में विद्यार्थियों को अनुशासन, आज्ञापालन, कर्तव्यों का पालन आदि की शिक्षा प्रदान करना प्रकट राजनीतिक समाजीकरण का उदाहरण है।

- गैर राजनीतिक उद्देश्यो को पूर्ण करने के प्रयास अनेक बार अप्रकट रूप से राजनीति को प्रभावित करते हैं। इसके लिए कोई बाहरी प्रयास की आवश्यकता नहीं होती बल्कि यह स्वाभाविक रूप से स्वत हो जाती है। इसे अप्रकट राजनीतिक समाजीकरण कहते है।

- यह राजनीतिक मूल्यों एवं मानको के हस्तान्तरण की प्रक्रिया है। राजनीतिक समाजीकरण के द्वारा समाज की एक पीढ़ी अपनी अगली पीढ़ी को राजनीतिक मूल्य हस्तान्तरित करती है। इस प्रक्रिया को ज्याफ्रीराबर्ट्स नामक विद्वान ने राजनीतिक मूल्यों के संचरण की प्रक्रिया कहा है। यह क्रम निरन्तर चलता रहता है फलस्वरूप राजनीतिक व्यवस्था में जो परिवर्तन होते हैं वो संवैधानिक तरीके से होते चले जाते हैं और राजनीतिक व्यवस्था में स्थिरता बनी रहती है।

- राजनीतिक समाजीकरण का राजनीतिक परिवर्तन से घनिष्ठ सम्बध है।एक तरफ राजनीतिक समाजीकरण से निर्मित होने वाले नए विश्वास और मूल्य राजनीतिक परिवर्तन ला सकते हैं तो दूसरी ओर राजनीतिक परिवर्तन के पश्चात् भी राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया समाप्त नहीं होती है और चलती रहती है।

- राजनीतिक समाजीकरण एक सतत् प्रक्रिया है। यह प्रत्येक आयु के लोगों को प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से प्रभावित अवश्य करती है। किसी भी व्यक्ति का राजनीतिक विश्वास सदैव एक समान नहीं रहता बल्कि परिस्थिति के अनुसार राजनीतिक दृष्टिकोण में परिवर्तन होना स्वाभाविक होता है। इन्हीं कारणों से यह कहा जाता है कि राजनीतिक समाजीकरण एक सतत् प्रक्रिया है।

- राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया औपचारिक एवं अनौपचारिक दोनो रूप से संचालित होती है। राजनीतिक समाजीकरण सचेत रूप में विभिन्न शिक्षण संस्थाओं, समाचार पत्रों, एवं राजनीतिक दलों द्वारा प्रत्यक्ष रूप से किया जाता है तो यह राजनीतिक समाजीकरण का औपचारिक प्रक्रिया है। कई बार लोगों के प्रयत्नों से न होकर स्वयं हो तो इसे अनौपचारिक राजनीतिक समाजीकरण कहते है।

- राजनीतिक समाजीकरण की एक महत्वपूर्ण विशेषता यह है कि इसका राजनीतिक संस्कृति से घनिष्ट सम्बन्ध है। राजनीतिक समाजीकरण वह सशक्त माध्यम है जिसके द्वारा राजनीतिक संस्कृति एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक पहुँचती है।

- राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के माध्यम से, समर्थन में बृद्वि होती है, प्रचलित राजनीतिक व्यवस्था के प्रति समर्थन पारम्परिक संस्थाओं के पक्ष में मूल्य और सरकार की बैधता बढ़ जाती है।

अत राजनीतिक समाजीकरण एक ऐसी प्रक्रिया है जिसके माध्यम से विभिन्न व्यक्ति राजनीतिक मुद्दो पर अपने विचार स्थापित करते है और अपने राजनीतिक दृष्टिकोण को संशोधित करते है साथ ही भविष्य में राजनीतिक भागीदारी की सीमा को सुनिश्चित करते है। इसके अतिरिक्त राजनीतिक उद्देश्यों के प्रति सहमति तथा राजनीतिक प्रणाली का मूल्यांकन करने के लिए राजनीतिक मूल्य भी लोगों में विकसित किए जाते हैं ताकि कोई भी राजनीतिक प्रणाली सहज ही अपने उद्देश्यों को प्राप्त कर सकें एवं सचेत नागरिकता निर्माण हो सके।

12.5 सारांश

राजनीतिक समाजीकरण, समाजीकरण का ही एक अंग है। जिस प्रकार व्यक्ति समाज में रहकर सामाजिक क्रियाओं, मूल्यों, प्रतिमानों, आदर्शो एवं व्यवहारों को सीखता है और इस प्रक्रिया को समाजीकरण कहा जाता है। ठीक इसी प्रकार जब समाजीकरण को राजनीतिक व्यवस्था से जोड़ा जाता है तब इसे राजनीतिक समाजीकरण कहते हैं। जब कोई व्याक्ति राजनीतिक व्यवस्था के मूल्यों, मानकों को सीखता है और उसके अनुरूप व्यवहार करता है तो इस प्रक्रिया को राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया कहते हैं। राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के द्वारा किसी राजनीतिक व्यवस्था में व्यक्तियों की राजनीतिक अभिवृत्तियाँ एवं मनोदशाओ का निर्माण होता है, साथ ही व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था के बारे में जानकारी प्राप्त करता है अर्थात राजनीतिक मानको एवं मूल्यों को अंगीकार करने की प्रक्रिया ही राजनीतिक समाजीकरण के नाम से जानी जाती है।

चूँकि व्यक्ति का सामाजिक क्षेत्र उसके राजनीतिक क्षेत्र से जुड़ा होता है। अतः व्यक्ति को राजनीतिक दृष्टिकोण से संतुलित एवं सफल बनाने के लिए, तथा राजनीतिक क्रियाकलापों में भाग लेने के लिए उसका राजनीतिक समाजीकरण आवश्यक होता है। राजनीतिक समाजीकरण के माध्यम से व्यक्ति राजनीतिक व्यावस्था के विषय में जानकारी प्राप्त करता है और स्वयं का सम्बन्च राजनीतिक ज्ञान और राजनीतिक घटनाओं से सुनिश्चित करता है ताकि उसका राजनीतिक अनुकूलन सही ढंग से हो सके और राजनीतिक संस्कृति की समझ विकसित हो सके।

12.7 बोध प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1. ''राजनीतिक समाजीकरण व्यक्ति की राजनीतिक व्यवस्था में सहभागिता के लिए मूल्यों आदशों एवं प्रेरणा का साधन है।''यह किसकी परिभाषा है?

(अ) पीटर मर्कल (ब) ऑस्टीन रेने (स) लेवाइन (द) लेगटन

2. ''राजनीतिक समाजीकरण वह तरीका है जिसके द्वारा समाज राजनीतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में हस्तांतरित करता है।'' यह किसकी परिभाषा है?

(अ) लेगटन (ब) ऑस्टीन रेने (स) लेवाइन (द) पीटर मर्कल

बोध प्रश्न के उत्तर

(स) लेवाइन (अ) लेगटन

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. राजनीतिक समाजीकरण की विशेषताओं का वर्णन कीजिए।
2. राजनीतिक समाजीकरण के द्वारा व्यक्ति राजनीतिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक मूल्यों को आत्मसात् करता है। विवेचना कीजिए।
3. ईस्टन एवं डेनिंग के द्वारा बताए गए जीवन के चार सूत्र कौन से है? जिनके द्वारा बच्चा राजनीतिक जीवन मे प्रवेश करता है।

12.6 सन्दर्भ सूची

- न्यूनडॉर्फ, अंजा और स्मेट्स, काट. ''राजनीतिक समाजीकरण और नागरिकों का निर्माण।'' ऑक्सफोर्ड हैंडबुक ऑनलाइन, 2017।
- मैडेस्टेम एंड्रियास ''क्या राजनीति विरोध प्रदर्शन मायने रखते है। द क्वार्टरली जर्नल, ऑफ इकोनॉमिक्स, 1 नवम्बर, 2013 ।
- एल्विन, डी एफ, रोनाल्ड एल कोहेन, थिओडोर एम, न्यूकॉम्ब ''जीवन काल में राजनीतिक दृष्टिकोण'' यूनिवर्सिटी ऑफ विस्कॉन्सिन प्रेस, 1991,
- फाड़िया, डॉ० बी. एल. एवं जैन, डॉ० पंकज, ''मॉडर्न पॉलिटिकल थ्योरी
- पी.सी. जैन, ''राजनीतिक समाजशास्त्र, रॉवत पब्लिकेशन।
- अली अशरफ, एवं शर्मा, एल. एन., ''पॉलिटिकल सोशियोलॉजी,'' यूनिवर्सिटी प्रेस
- राय, शेफाली ''सोसाइटी एण्ड पॉलिटिक्स इन इण्डिया, अण्डरस्टैंडिन्ग पॉलिटिकल सोशियोलॉजी'' 2014

- फौक्स, कैथ, ''पॉलिटिकल सोशियोलॉजी ए क्रिटिक इन्ट्रोडक्शन 2022, आकार बुक्स, दिल्ली ।
- https://www-thought.co.com
- https:// gyanforener.com.
- https://www.Kailasheducation.com

इकाई 13 : राजनीतिक समाजीकरण के प्रकार व अध्ययन के स्तर

इकाई की रूपरेखा

13.0 उद्देश्य

13.1 प्रस्तावना

13.2 राजनीतिक समाजीकरण के प्रकार

13.3 राजनीतिक समाजीकरण, राज्य, समाज

13.4 सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

13.5 आधुनिक सामाजिक विचारक

13.6 उत्तर–आधुनिक विचारक

13.7 समाजशास्त्रीय सिद्धांत

13.8 संरचनात्मक कार्यात्मकता

13.9 तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत

13.10 अभिजात वर्ग का सिद्धांत और अभिजात वर्ग का प्रचलन

13.11 अन्य सैद्धांतिक दृष्टिकोण

13.12 निष्कर्ष

13.13 बोध प्रश्न

13.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

13.0 उद्देश्य

आप इस स्व : अध्ययन सामाग्री से निम्न बिन्दुओं को जानेंगे और इसका अभ्यास करेंगे।

1. आप राजनीतिक समाजीकरण के प्रकार को जानेंगे।
2. राजनीतिक समाजीकरण के सांस्कृतिक दृष्टिकोण को जानेंगे।
3. आप राजनीतिक समाजीकरण के संघर्ष सिद्धांत का अध्ययन करेंगे।
4. आप राजनीतिक समाजीकरण के शास्त्रीय विचारक का अध्ययन करेंगे।
5. अभिजात वर्ग का सिद्धांत और अभिजात वर्ग का प्रचलन का अध्ययन करेंगे।
6. राजनीतिक समाजीकरण के सामाजिक पूंजी दृष्टिकोण एंव संस्थागत दृष्टिकोण का अध्ययन करेंगे।

13.1 प्रस्तावना

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया के दौरान एक व्यक्ति तीन प्रकार की बुनियादी दिशाएँ प्राप्त करता है–राजनीति के कामकाज से संबंधित ज्ञान, मूल्य और दृष्टिकोण। यह सामाजिक और राजनीतिक व्यवस्था के बीच सबसे महत्वपूर्ण कड़ी है। इसमें जीवन के हर चरण में सभी औपचारिक, अनौपचारिक, जानबूझकर, अनियोजित शिक्षा शामिल है। राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक दृष्टिकोण और सामाजिक प्राथमिकताओं को सीखने में मदद करता है जिसके द्वारा राजनीतिक व्यवस्था और समाज के बीच अंतर–संबंध स्थापित होता है और जिसके माध्यम से व्यक्ति राजनीतिक प्रक्रिया में शामिल होते हैं।

"यह पुरानी पीढ़ी से नई पीढ़ी तक सफलतापूर्वक संचारित करके राजनीतिक संस्कृति को बनाए रखता है। यह व्यक्तियों के मन में मूल्यों, मानदंडों और अभिविन्यासों का प्रस्तावना देता है ताकि वे अपनी राजनीतिक व्यवस्था में विश्वास विकसित करें और अपने उत्तराधिकारियों के मन पर अपनी बात रखे । युवाओं में विकसित राजनीतिक मान्यताएं और दृष्टिकोण बुढ़ापे में नई शिक्षा के संपर्क, बदलते सामाजिक परिवेश, जीवन में नए अनुभवों और हर राजनीतिक दल के प्रदर्शन के कारण बदल सकते हैं।

राजनीतिक समाजीकरण व्यक्तियों को यह महसूस कराता है कि वे एकांकी प्राणी नहीं हैं बल्कि संपूर्ण राजनीतिक व्यवस्था का एक हिस्सा है,जो उनमें जिम्मेदारी की भावना पैदा करता है। राजनीतिक समाजीकरण के विभिन्न एजेंट राजनीतिक व्यवस्था की बेहतर समझ की सुविधा प्रदान करते हैं और संचार प्रक्रिया के माध्यम से एक व्यक्ति उन विचारों, मूल्यों और मान्यताओं को संजोने का प्रयास करता है जिन्हें

राजनीतिक व्यवस्था के लिए आवश्यक माना जाता है। यह व्यक्तियों के बीच बेहतर बातचीत को संभव बनाता है जो उन्हें राष्ट्र के प्रति नागरिकों की भूमिका और उनके राजनीतिक व्यवहार के बारे में ज्ञान प्रदान करता है।

13.2 राजनीतिक समाजीकरण के प्रकार

"राजनीतिक समाजीकरण को निम्नलिखित दो प्रकारों में वर्गीकृत किया गया है :–

प्रत्यक्ष या प्रकट राजनीतिक समाजीकरण– यह वह प्रक्रिया है जिसमें प्रेषित सूचना, मूल्यों या भावनाओं की सामग्री राजनीतिक होती है। एक व्यक्ति, परिवार, शिक्षकों या अन्य कुछ एजेंसियों के प्रभाव में सरकार के पैटर्न और कार्यों और राजनीतिक दलों की विचारधारा के बारे में स्पष्ट रूप से सीखता है। सरकारी संस्थानों के अनुभव, स्कूलों में लोकतंत्र, नागरिकों के अधिकारों, मौलिक कर्तव्यों और राज्य के नीति निर्देशक सिद्धांतों के बारे में जानकारी देने वाला नागरिक शास्त्र पाठ्यक्रम भी प्रत्यक्ष राजनीतिक समाजीकरण का परिणाम है।

अव्यक्त या अप्रत्यक्ष राजनीतिक समाजीकरण– अव्यक्त राजनीतिक समाजीकरण गैर–राजनीतिक वस्तुओं और अभिविन्यासों से शुरू होता है और राजनीतिक अभिविन्यास में समाप्त होता है। अव्यक्त राजनीतिक समाजीकरण में सामान्य संस्कृति की कई सबसे बुनियादी विशेषताएं शामिल होती हैं जिनका राजनीतिक क्षेत्र पर बहुत प्रभाव पड़ता है। यह कुछ निश्चित माध्यमों से होता है। वे सामान्य सामाजिक स्थितियाँ और दृष्टिकोण हैं जो राजनीतिक कार्रवाई या निष्क्रियता की ओर ले जाते हैं; सूचना, मूल्यों और दृष्टिकोण का पारस्परिक संचार; और गैर–राजनीतिक गतिविधियों में कौशल और तकनीकों का अधिग्रहण जो किसी व्यक्ति के वयस्क होने पर राजनीतिक कौशल में समाप्त हो सकता है। कॉलेज और विश्वविद्यालय की राजनीति में भागीदारी राजनीति में भविष्य की भूमिका के लिए जमीन मजबूत करती है।

इस प्रकार समाजीकरण के दोनों रूप विभिन्न चौनलों के माध्यम से कार्य करते हैं। नकल, राजनीतिक अनुभव, प्रत्याशित व्यवहार और राजनीतिक शिक्षा प्रकट समाजीकरण के चौनलों को संदर्भित करते हैं। नकल का कार्य छोटी उम्र में होता है, जिसमें बच्चे अपने माता–पिता, रिश्तेदारों, शिक्षकों, पड़ोसियों आदि की नकल करते हैं। इसमें कोई मजबूत राजनीतिक विश्वास नहीं होता है, लेकिन एक मजबूत राजनीतिक विश्वास बनाने की क्षमता होती है। राजनीतिक अनुभव लोगों के मन पर स्थायी प्रभाव छोड़ते हैं और राजनीति के प्रति लोगों के दृष्टिकोण में बदलाव ला सकते हैं।

मुख्य राजनीतिक समाजीकरण के इन दो प्रकारों के अलावा, "राजनीतिक समाजीकरण के प्रकारों की अन्य तीन श्रेणियाँ हैं, अर्थात् विशिष्ट और सार्वभौमिक, भावात्मक और विशिष्ट और व्यापक राजनीतिक समाजीकरण। विशिष्ट समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसमें व्यक्ति को केवल एक ही भूमिका सिखाई जाती है। वह अन्य भूमिकाओं के बारे में कुछ भी नहीं सीखता है, जिसका अर्थ है, किसी व्यक्ति को केवल विशिष्ट मूल्यों में समाजीकृत करना। सार्वभौमवादी समाजीकरण में विश्वव्यापी दृष्टिकोण का विकास होता है। इसलिए एक व्यक्ति कई भूमिकाएँ सीखता है।

भावात्मक समाजीकरण में भावनात्मक मूल्यों पर जोर दिया जाता है जैसे किसी की राजनीतिक व्यवस्था पर गर्व, किसी के देश के प्रति वफादारी, शासक के प्रति सम्मान आदि।

13.3 राजनीतिक समाजीकरण, राज्य, समाज

नवउदारवाद और राष्ट्र निर्माण की नई चुनौतियों के कारण राज्य और समाज एक गतिशील संबंध साझा करते हैं। वे एक रिश्ता साझा करते हैं। दोनों एक–दूसरे को प्रभावित और नियंत्रित करने का प्रयास करते हैं। सरकारी संस्थाएँ राज्य समाज इंटरफ़ेस में प्रमुख अभिनेता हैं। समाज और सरकारी संस्थानों के सदस्य विभिन्न स्तरों पर परस्पर क्रिया करते हैं। इन स्तरों में नीति निर्माण और सामाजिक सुधार शामिल हैं। समाज द्वारा की गई मांगों को राज्य द्वारा नीति दिशानिर्देशों के अनुसार पूरा किया जाता है। किसी विशेष समय में सक्रिय सामाजिक ताकतें यह तय करने में प्रमुख भूमिका निभाती हैं कि राज्य समाज का संबंध टकराव या सहयोग के रास्ते पर होगा या नहीं। राज्य समाज संबंधों को गति देने में राजनीतिक समाजीकरण महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है।

इसमें मैक्रो लेवल और माइक्रो लेवल प्रक्रियाएं शामिल हैं। वृहद स्तर पर राजनीतिक प्रणालियाँ नागरिकों में उचित मानदंडों और मूल्यों को स्थापित करती हैं और सूक्ष्म स्तर पर एक व्यक्ति राजनीतिक विचारधाराओं को आत्मसात करता है और राजनीतिक प्रणालियों के बारे में सीखता है। इससे व्यक्ति को देश के राजनीतिक जीवन में भाग लेने में मदद मिलती है। किसी भी लोकतंत्र की सफलता के लिए यह आवश्यक है कि नागरिकों को राष्ट्र के राजनीतिक जीवन में शामिल किया जाए और समाज की जरूरतों के साथ एकीकृत किया जाए।

समाज और राज्य के बीच संबंध को राजनीतिक संबंधों के माध्यम से खोजा जा सकता है। "राजनीतिक संबंध राजनीतिक प्रतिभागियों के बीच प्रभाव, समर्थन और दावों का संरचित लेनदेन हैं। उन्हें व्यक्तियों और समूहों के बीच स्थापित ट्रांसमिशन चौनल के रूप में माना जा सकता है जो आपसी पहचान के लिए कुछ आधार साझा करते हैं या सामान्य लक्ष्यों की तलाश करते हैं। " संबंध व्यक्तियों और समूहों,

व्यक्तियों और नेताओं के बीच हो सकते हैं। राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक व्यवहार और राजनीतिक जुड़ाव का निर्धारक है। नीति निर्माण में विभिन्न अभिनेताओं, राज्य और नागरिक समाज के बीच बातचीत शामिल होती है। यह अंतःक्रिया तभी प्रभावी हो सकती है जब व्यक्ति राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया से गुजरे हों और नागरिक समाज समूहों में संगठित हो।

13.4 सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य

सैद्धांतिक दृष्टिकोण किसी विशेष घटना के लिए स्पष्टीकरण प्रदान करता है और विभिन्न चर के बीच संबंधों को निर्दिष्ट करता है और सामाजिक घटनाओं के विश्लेषण में मदद करता है। शास्त्रीय, आधुनिक और उत्तर–आधुनिक विचारकों और समाजशास्त्रीय सिद्धांतों के विचारों की मदद से वर्तमान अध्ययन के लिए एक सैद्धांतिक ढांचा विकसित करने का प्रयास किया है।

शास्त्रीय विचारक शास्त्रीय विचारकों के पास भी समाज की सामाजिक समस्याओं के वैज्ञानिक अध्ययन सहित कई अलग–अलग दृष्टिकोण हैं।

संघर्ष सिद्धांत समाजशास्त्रीय संघर्ष सिद्धांत की जड़ें कार्ल मार्क्स (1818–1883), मैक्स वेबर (1864–1920) और जॉर्ज सिमेल के विचारों में हैं।

संघर्ष परिप्रेक्ष्य स्वीकार करता है कि ऐसे विशेष हित समूह हैं जो समाज के दुर्लभ संसाधनों इस प्रकार इस सिद्धांत के अनुसार व्यक्तियों की राजनीतिक भागीदारी में अंतर उनके अपने हितों के कारण होता है। राजनीतिक समाजीकरण में विभिन्न समूहों के हितों के टकराव के कारण समूहगत भिन्नताएँ होती हैं।

मार्क्स (1883) ने अलगाव की अवधारणा दी है। हालाँकि मार्क्स ने इस अवधारणा को काम के संदर्भ में गढ़ा था लेकिन इसका उपयोग समाज में विभिन्न परिस्थितियों को समझाने के लिए भी किया गया है। "अलगाव शक्तिहीनता की भावना, सामान्यता की भावना और सामाजिक अलगाव की भावना को संदर्भित करता है। इसे आज की युवा पीढ़ी पर इस अर्थ में लागू किया जा सकता है कि यदि व्यक्ति शक्तिहीन महसूस करते हैं, तो वे राजनीतिक जीवन में भाग नहीं लेंगे, यदि समाज में आदर्शहीनता है और व्यक्ति सही और गलत के बीच अंतर करने में सक्षम नहीं हैं या उचित ज्ञान नहीं रखते हैं। आचार संहिता लागू होने पर वे भाग नहीं लेंगे। इसके अलावा, यदि व्यक्ति अपनी समस्याओं से बहुत अधिक बोझिल हैं और सामाजिक अलगाव की स्थिति में रहते हैं तो वे बड़े समाज में रुचि नहीं लेंगे और निष्क्रिय नागरिक बन जाएंगे। मार्क्स का मानना है कि कानूनी समानता और संपत्ति का अधिकार जैसे अधिकार नागरिकों को अहंकारी नागरिक समाज में एक दूसरे के साथ प्रतिस्पर्धा करने में सक्षम बनाते हैं। उनका दावा है कि

नागरिक समाज के राजनीतिक चरित्र को समाप्त कर दिया गया है, जिससे यह पूरी तरह से भौतिकवादी हो गया है और सार्वभौमिक सामग्री के अर्ध संतुलन से भी रहित हो गया है।

उनका कहना है कि राजनीतिक मुक्ति एक विरोधाभास का प्रतिनिधित्व करती है जिसमें एक नागरिक समाज का अहंकारी जीवन एक सामाजिक नागरिक, नैतिक व्यक्ति के आदर्श जीवन के विपरीत होता है, केवल हमारे उत्पादक जीवन का सामाजिककरण करके ही इस विरोधाभास को हल किया जा सकता है और मानव मुक्ति प्राप्त की जा सकती है। हालाँकि मार्क्सवादी विचार उदारवाद के विपरीत हैं लेकिन ये विचार राजनीतिक समाजीकरण के लिए लागू होते हैं क्योंकि ये नागरिक समाज को निर्णय लेने की शक्ति देने से जुड़े हैं। यह तभी हासिल किया जा सकता है जब समाज के सदस्यों को देश की राजनीतिक संस्कृति में शामिल किया जाए और सामाजिक और राजनीतिक मुद्दों में सक्रिय रूप से भाग लिया जाए। इस प्रकार मार्क्स के अनुसार वैचारिक अभिविन्यास और वर्ग चेतना राजनीतिक सहभागिता के लिए प्रेरक कारक हैं।

वेबर (1991) ने शक्ति और अधिकार की अवधारणाएँ दीं जो राजनीतिक समाजशास्त्र की बुनियादी विशेषताएं हैं। उनका मत था कि किसी भी समाज में सामाजिक नियंत्रण वैध प्राधिकार के माध्यम से किया जाता है।

राजनीतिक समाजीकरण के संदर्भ में तर्कसंगत सामाजिक कार्रवाई और युक्तिकरण की अवधारणा महत्वपूर्ण महत्व रखती है क्योंकि यदि समाज के सदस्य राष्ट्र निर्माण में अपनी भूमिका के महत्व को समझते हैं तो वे विकास और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में योगदान दे सकते हैं।

राजनीतिक सहभागिता और राजनीतिक भागीदारी ऐसे साधन हैं जिनके माध्यम से वांछित विकासात्मक चर्चा की जा सकती है। वेबर का यह भी मानना है कि मूल्य आयाम समाजशास्त्रीय विश्लेषण का केंद्र है। व्यक्ति केवल कार्य नहीं करते बल्कि अपने कार्यों को अर्थ देते हैं। व्यक्ति सोच और मूल्यांकन की सामाजिक रूप से स्वीकृत शैलियों के माध्यम से अपने कार्यों को अर्थ देते हैं। वे चुनाव करते हैं, अन्य लोगों से जुड़ते हैं और समाज में प्रचलित सोच की इन स्वीकृत शैली के आधार पर अस्तित्व को अर्थ देते हैं। इसलिए, यदि समाजीकरण के विभिन्न एजेंटों के माध्यम से लोकतांत्रिक आदर्शों को शामिल किया जाता है तो यह राजनीतिक भागीदारी और नेतृत्व गुणों के विकास को प्रभावित कर सकता है।

13.5 आधुनिक सामाजिक विचारक

हेबरमास (1929) ने राजनीतिक भागीदारी की पारंपरिक समझ को चुनौती दी है। वह भागीदारी को मतदान, अभियान या पत्र लेखन जैसी पारंपरिक गतिविधियों के एक विशिष्ट समूह तक सीमित नहीं करता है, बल्कि गतिविधि की विचारशील गुणवत्ता द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है। संचार संरचना जिसमें कोई गतिविधि होती है वह न्यायसंगत और समावेशी है और समस्याओं पर खुले तौर पर और तर्कसंगत रूप से विचार–विमर्श किया जाना चाहिए। हेबरमास ने एक सार्वजनिक क्षेत्र सिद्धांत प्रतिपादित किया है जो नागरिक समाज में मीडिया की भूमिका की व्याख्या करता है। मीडिया से अपेक्षा की जाती है कि वह राज्य की संस्थाओं और व्यक्तिगत जीवन के निजी क्षेत्र के बीच स्वतंत्र अभिव्यक्ति और प्रसार के लिए खुली जगह प्रदान करने के लिए सूचनात्मक, एकीकृत और अभिव्यंजक भूमिका निभाए। इस भूमिका को पूरा करने के लिए मीडिया को सामग्री में असंख्य और विविध होना चाहिए और किसी भी प्रकार के वर्चस्व से मुक्त होना चाहिए। हेबरमास ने सार्वजनिक क्षेत्र के पुनरुद्धार का प्रस्ताव दिया है। "सार्वजनिक क्षेत्र अनिवार्य रूप से लोकतंत्र का ढांचा है। संसदों और पार्टियों को शामिल करने वाली रूढ़िवादी लोकतांत्रिक प्रक्रियाएं हमें सामूहिक निर्णय लेने के लिए पर्याप्त आधार प्रदान नहीं करती हैं।

हम लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं में सुधार और सामुदायिक एजेंसियों और अन्य स्थानीय समूहों की अधिक सुसंगत भागीदारी के माध्यम से सार्वजनिक क्षेत्र को नवीनीकृत कर सकते हैं। उनके अनुसार आधुनिक संचार माध्यम भी लोकतंत्र को आगे बढ़ाने में मौलिक योगदान दे सकते हैं। उदाहरण के लिए, जहां टेलीविजन और समाचार पत्रों पर व्यावसायिक इंटरनेट का प्रभुत्व है, वे लोकतांत्रिक चर्चा पर ध्यान केंद्रित नहीं करते हैं। सार्वजनिक टेलीविजन, रेडियो, इंटरनेट के साथ मिलकर, खुले संवाद और चर्चा विकसित करने की कई संभावनाएं प्रदान करते हैं। इस प्रकार हैबरमास राजनीतिक भागीदारी के विभिन्न रूपों को अलग करता है और लोकतंत्र के लिए जनसंचार माध्यमों के महत्व को रेखांकित करता है।

बेक (1992) समकालीन समाज को 'जोखिम समाज' के रूप में वर्णित करता है। ऐसा इसलिए है क्योंकि, उभरता हुआ समाज नई प्रौद्योगिकियों को शामिल कर रहा है।

पारंपरिक राजनीति का क्षेत्र अपनी शक्ति खो रहा है क्योंकि यह देखा गया है कि बड़े जोखिम उस चीज़ से उत्पन्न होते हैं जिसे बेक 'उप–राजनीति' कहते हैं। वे हैं – बड़ी कॉर्पोरेट कंपनियाँ, वैज्ञानिक प्रयोगशालाएँ, बड़े व्यावसायिक घराने और इसी तरह। यह उप–राजनीतिक व्यवस्था में है कि आधुनिक समाज की संरचनाओं को ज्ञान में प्रगति के नाम पर लागू किया जा रहा है जो संसदीय प्रणाली के दायरे से बाहर है। यह उसका एक हिस्सा है जिसे वह 'राजनीति का बंधनमुक्ति' कहते हैं। जहां राजनीति अब केंद्र सरकार पर निर्भर नहीं रह गई है, बल्कि तेजी से विभिन्न उप–समूहों के साथ–साथ व्यक्तियों का प्रांत बनती जा रही है। ये उप–समूह ऐसे व्यक्ति हैं जो केंद्र सरकार की तुलना में अधिक चिंतनशील और

आत्म–आलोचनात्मक हो सकते हैं और उनमें उन्नत आधुनिकता से जुड़े जोखिमों से बेहतर ढंग से निपटने के लिए प्रतिबिंबित करने की क्षमता है।

अल्थुसर (1982) लुई अल्थुसर ने विचारधारा और वैचारिक राज्य तंत्र की अवधारणा दी है। उनके अनुसार विचारधारा संस्थानों और उनके लिए विशिष्ट प्रथाओं में मौजूद होती है। ये विचारधाराएँ राज्य से संबंधित होने में सक्षम हैं; अल्थुसरका तर्क है कि विचारधाराओं का एक कार्य संबंध होता है जो व्यक्तिपरक अनुभव करता है। उनके अनुसार वर्ग संघर्ष विचारधारा के भीतर होता है। इस प्रकार राजनीतिक समाजीकरण वैचारिक राज्य तंत्र का प्रभाव है।

मिल्स (1959) ने अमेरिकी समाज को एक जन समाज के रूप में वर्णित किया है जिसमें सत्ता के अभिजात वर्ग सभी महत्वपूर्ण मुद्दों का निर्णय लेते हैं और चापलूसी, धोखा और मनोरंजन करके जनता को शांत रखते हैं। वह सत्ता अभिजात्य वर्ग के भ्रष्टाचार का भी उल्लेख करता है। जिसके लिए वह किसी संगठित जनता की अनुपस्थिति को जिम्मेदार मानते हैं जिसके प्रति वे अपने निर्णय के लिए जिम्मेदार हैं। वह अमीरों के प्रभुत्व और सैन्य प्रमुखों के राजनीतिक प्रभाव का भी जिक्र करते हैं। उनका तर्क है कि अमेरिकी समाज पर इन शक्ति अभिजात वर्ग का वर्चस्व है जो अभूतपूर्व शक्ति वाले हैं। सत्ता संभ्रांत लोग जनता की परवाह किए बिना महत्वपूर्ण निर्णय लेते हैं। यह किसी के प्रति जवाबदेह नहीं है और लोगों को मानसिक प्रबंधन और हेरफेर के उपकरणों के अधीन किया जाता है। सत्ता अभिजात वर्ग कुशलता से जनसंचार माध्यमों को नियंत्रित करता है और इसमें हेरफेर करता है ताकि जनसमूह को अपनी पसंद के अनुसार सोचने और कार्य करने के लिए प्रेरित किया जा सके। इस प्रकार राजनीतिक समाजीकरण आलोचनात्मक चेतना विकसित करने के लिए जनसमूह आवश्यक है।

13.6 उत्तर–आधुनिक विचारक

1980 के दशक से समाजशास्त्र में उत्तर–आधुनिक परिप्रेक्ष्य तेजी से प्रभावशाली हो गया है। "आधुनिक दुनिया चार प्रमुख चौनलों के अंतर–खेल का एक उत्पाद है वैश्विक पूंजीवाद; केन्द्रीय राज्य की शक्ति कमजोर होना; शक्तिशाली और भेदक प्रौद्योगिकी द्वारा एक जीवन पद्धति जो उत्पादन को नियंत्रित करती है और उपभोक्तावाद को बढ़ावा देती है; और उनकी पहचान, राष्ट्रवाद, नस्ल, यौन अभिविन्यास और पर्यावरणवाद पर जोर देने वाले मुक्तिवादी सामाजिक आंदोलनों का विकास। ये दृष्टिकोण विभिन्न रूप लेते हैं और समाज में महत्वपूर्ण परिवर्तनों की व्याख्या करते हैं।

"बॉड्रिलार्ड का मानना है कि मूक बहुमत, जनता स्वतंत्र है लेकिन केवल इस अर्थ में कि वे किसी भी व्यक्ति या विश्वासों के किसी समूह द्वारा प्रतिनिधित्व करने में असमर्थ हैं। दुनिया की विशेषता राजनीति की मृत्यु है।

यह इस तथ्य की ओर इशारा करता है कि युवा पीढ़ी की राजनीतिक धारणाओं को राजनीतिक समाजीकरण के माध्यम से एक उचित दिशा देनी होगी ताकि वे राजनीतिक घटनाओं के वास्तविक और अतिरंजित संस्करणों के बीच अंतर कर सकें।

13.7 समाजशास्त्रीय सिद्धांत

लॉरेंस कोहलबर्ग का नैतिक विकास का सिद्धांत कोहलबर्ग के नैतिक विकास के सिद्धांत का प्रस्ताव है कि नैतिक विकास में न्याय की समझ शामिल है। इसे राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया से जोड़ा जा सकता है क्योंकि यह नागरिक और राजनीतिक जुड़ाव के चरणों की जानकारी प्रदान करता है। "नैतिक तर्क का विकास राजनीतिक तर्क को प्रभावित करता है। यह नैतिक तर्क जीवन भर छह विकासात्मक चरणों में चलता रहता है। इन चरणों को तीन स्तरों में बांटा जा सकता हैरू पूर्व–पारंपरिक, पारंपरिक और उत्तर–पारंपरिक।

स्तर 1: पूर्व–पारंपरिक नैतिकता इसमें दो चरण होते हैं। **चरण 1** को आज्ञाकारिता और दंड चरण के रूप में जाना जाता है। यह नैतिक विकास का प्रथम चरण है। इस चरण के दौरान बच्चे सजा से बचने के लिए नियमों का पालन करना सीखते हैं। **चरण 2** को व्यक्तिवाद और विनिमय के रूप में जाना जाता है। इस चरण के दौरान बच्चे व्यक्तिगत दृष्टिकोण व्यक्त करना और व्यक्तिगत आवश्यकताओं की पूर्ति के आधार पर कार्यों का मूल्यांकन करना सीखते हैं।

स्तर 2 : पारंपरिक नैतिकता इसमें चरण 3 और चरण 4 शामिल हैं। **चरण 3** पारस्परिक संबंधों का है। यह चरण सामाजिक अपेक्षाओं और भूमिकाओं से संबंधित है और समाज की अपेक्षाओं पर खरा उतरने पर केंद्रित है। **चरण 4** सामाजिक व्यवस्था बनाए रखने से संबंधित है। इस चरण के दौरान समग्र रूप से समाज की धारणा विकसित होती है। ध्यान कानून और व्यवस्था बनाए रखने, अपने कर्तव्यों को पूरा करने और अधिकार के प्रति सम्मान पर है।

स्तर 3 : पारंपरिक नैतिकता के बाद इस स्तर में चरण 5 और चरण 6 शामिल हैं। **चरण 5** सामाजिक अनुबंध और व्यक्तिगत अधिकारों से संबंधित है। इस चरण के दौरान समाज के सदस्यों ने अलग–अलग मूल्यों, व्यक्तिगत मान्यताओं और अन्य लोगों की राय को ध्यान में रखना शुरू कर दिया। **चरण 6**

सार्वभौमिक सिद्धांतों से संबंधित है। यह चरण सार्वभौमिक नैतिक सिद्धांतों और अमूर्त तर्क पर केंद्रित है। इस चरण के दौरान सदस्य न्याय और समानता के सिद्धांतों का पालन करते हैं जिन्हें उन्होंने समाजीकरण प्रक्रिया के माध्यम से आत्मसात किया है।

राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया को नैतिक विकास के इन चरणों से जोड़ा जा सकता है। "समाज के रीति–रिवाज, परंपराएँ और मानदंड एक इंसान को एक सामाजिक प्राणी में बदल देते हैं। एक बच्चा दुनिया के करीब आता है, मौखिक निर्भरता विकसित करता है और देखभाल की जरूरतों के बारे में अपेक्षाएं विकसित करता है। यह पहला चरण है जो 0 से 1 वर्ष तक का होता है। 1 से 3 साल की उम्र में बच्चा इंद्रियों का उपयोग करना सीखता है और अनुभवजन्य वास्तविकता का बोध कराता है। यही वह समय है जब सामाजिक मानदंडों का आंतरिककरण शुरू होता है और समाजीकरण की नींव रखी जाती है। राजनीतिक शिक्षा तीन साल की उम्र से शुरू होती है। 3 से 6 वर्ष की प्री–स्कूल आयु के दौरान बच्चा राय बनाना और दृष्टिकोण विकसित करना शुरू कर देता है।

यह वह समय है जब बच्चा जिज्ञासु हो जाता है और समाज में होने वाली घटनाओं को समझने के लिए उत्सुक होता है। इस चरण के दौरान समाज के बारे में प्राथमिक ज्ञान प्राप्त होता है। प्राथमिक विद्यालय में 6 से 11 वर्ष की आयु के दौरान बच्चे स्वयं को अपने देश और समुदाय से पहचानना शुरू कर देते हैं। बालक में राष्ट्रीयता एवं अपनत्व की भावना का विकास होता है। 12 से 18 वर्ष की किशोरावस्था के दौरान बच्चे लोकतंत्र, समानता, उदारवाद, चुनाव, मतदान की धारणाओं से अवगत हो जाते हैं और राजनीतिक प्रक्रिया में भूमिका निभाना शुरू कर देते हैं। यही वह अवस्था है जब व्यक्ति में वैचारिक धारणा विकसित होती है। वे राजनीतिक दलों के प्रति प्रारंभिक वफादारी बनाते हैं और बौद्धिक से अधिक भावनात्मक होते हैं। 18 से 35 वर्ष की वयस्क अवस्था के दौरान लोगों का अपना व्यक्तित्व और दृष्टिकोण होता है और राजनीतिक दुनिया के बारे में उनकी निश्चित धारणाएँ होती हैं।

उनके राजनीतिक ज्ञान और विश्लेषण का स्तर बढ़ता है। वे आलोचनात्मक हो जाते हैं और सरकार की नीतियों की तीखी आलोचना करते हैं। 35 से 60 वर्ष की अंतिम वयस्क अवस्था में व्यक्ति लंबी समाजीकरण प्रक्रिया का उत्पाद बन जाता है और मूल्य अभिविन्यास और राजनीतिक धारणाओं को चुनौती देना बहुत कठिन हो जाता है। साठ के दशक के उत्तरार्ध में लोग अपनी प्रमुख जिम्मेदारियाँ निभाते हैं और सेवानिवृत्त जीवन जीते हैं। वे राजनीतिक प्रक्रिया के करीब रहते हैं. उनके ख़ाली समय का पूरा उपयोग राजनीतिक संवादों, चर्चाओं और विचार–विमर्श में होता है। इस अर्थ में यह कहा जा सकता है कि जीवन का उत्तरार्ध गतिविधियों की ओर अधिक उन्मुख होता है और यह भी कहा जा सकता है कि राजनीतिक समाजीकरण जीवन के अंत तक जारी रहता है। इन चरणों के आधार पर यह व्याख्या की जा सकती है कि

राजनीतिक समाजीकरण जल्दी शुरू होता है जीवन और जीवन भर जारी रहता है। जीवन के प्रारंभिक भाग में विकसित रुझान महत्वपूर्ण महत्व रखते हैं जो किसी व्यक्ति की राजनीतिक भागीदारी को प्रभावित करते हैं।

13.8 संरचनात्मक कार्यात्मकता

प्रकार्यवाद के सबसे महत्वपूर्ण बौद्धिक अग्रदूत स्पेंसर, दुर्खीम और वेबर हैं। दो प्रमुख संरचनात्मक प्रकार्यवादी पार्सन्स और मेर्टन हैं। इस दृष्टिकोण के अनुसार सामाजिक प्रणालियाँ कुछ ऐसे कार्य करती हैं जो उनके अस्तित्व के लिए आवश्यक हैं। पार्सन्स के अनुसार "विभिन्न सामाजिक प्रणालियों को केवल समग्र के संदर्भ में ही समझा जा सकता है और कार्यात्मक रूप से परस्पर संबंधित चर के रूप में उनका विश्लेषण किया जा सकता है।

उनका मत है कि चार मूलभूत कार्य हैं जो प्रत्येक सामाजिक व्यवस्था को अवश्य करने चाहिएये कार्य हैं अनुकूलन, लक्ष्य प्राप्ति, एकीकरण और पैटर्न रखरखाव और तनाव प्रबंधन अनुकूलन आवश्यकता और आकांक्षा से संबंधित संसाधनों के आवंटन से संबंधित है, लक्ष्य प्राप्ति का अर्थ है समूह विशिष्ट और सामूहिक लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए समाज की क्षमताओं को अधिकतम करना, एकीकरण प्रेरक और सांस्कृतिक तत्वों के संश्लेषण और एकीकरण से संबंधित है, और विलंबता या पैटर्न रखरखाव और तनाव प्रबंधन से तात्पर्य है अनुरूपता सुनिश्चित करने और विचलन को कम करने के लिए पुरस्कार और दंड से जुड़े संगठित प्रयास। इस प्रकार अनुकूलन का अर्थ है प्रणाली की क्षमता को बढ़ाना चाहिए ताकि यह समाज के सदस्यों की आकांक्षाओं को पूरा कर सकेलक्ष्य प्राप्ति का तात्पर्य उन लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए सिस्टम और पर्यावरण को एक साथ लाने के लिए इकाइयों की समन्वित कार्रवाई है जो सिस्टम ने अपने लिए निर्धारित किए हैं।

एकीकरण का उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि सिस्टम को सुचारू रूप से काम करने की अनुमति दी जाए। एकीकरण का कार्य सिस्टम की इकाइयों के बीच एकजुटता और सामंजस्य का स्तर स्थापित करने के लिए संबंधों का समायोजन करना है। पैटर्न रखरखाव का तात्पर्य सिस्टम के बुनियादी सिद्धांतों को कायम रखने से है। जबकि लक्ष्य प्राप्ति का संबंध प्रणाली के सांस्कृतिक घटकों से है, पैटर्न रखरखाव का संबंध सामाजिक घटकों से है। पार्सन्स का मानना है कि सिस्टम संतुलन केवल तभी बनाए रखा जा सकता है जब बुनियादी इकाइयाँ पूरे सिस्टम के लिए समायोज्य हों। इन कार्यात्मक चर का उपयोग निम्नलिखित पहलुओं के साथ राजनीतिक प्रणालियों पर चर्चा करने के लिए किया जा सकता है। अनुकूलन का तात्पर्य सरकारी कार्यालयों, संस्थानों और राजनीतिक नेताओं, सरकारी अधिकारियों, पार्टी

कार्यकर्ताओं आदि जैसे सामाजिक बुनियादी ढाँचे जैसे बुनियादी ढाँचे से है, लक्ष्य प्राप्ति का तात्पर्य ज्ञान और सूचना के प्रवाह से है, एकीकरण का तात्पर्य समाज के सदस्यों को अवसर प्रदान करना है। ताकि वे देश के समग्र विकास में रुचि विकसित कर सकें और शिकायतों के निवारण के लिए नियमों और विनियमों और तंत्र की समझ के रूप में विलंबता की व्याख्या की जा सके। राजनीतिक समाजीकरण के संदर्भ में, ये कार्यात्मक चर इस अर्थ में महत्व रखते हैं कि राजनीतिक प्रणाली को समाज की आवश्यकताओं पर प्रतिक्रिया देने में सक्षम होना चाहिए ताकि समाज में संतुलन और सुसंगतता बनी रहे।

इसके अलावा, "आल्मंड ने राजनीतिक व्यवस्था के कार्यों को इनपुट और आउटपुट कार्यों में विभाजित किया है। इनपुट कार्यों में राजनीतिक समाजीकरण और भर्ती, रुचि अभिव्यक्ति, रुचि एकत्रीकरण और राजनीतिक संचार शामिल हैं। आउटपुट फ़ंक्शंस में नियम बनाना, नियम निर्णय लेना और नियम लागू करना शामिल है। दबाव समूह और हित समूह जैसी गैर–सरकारी एजेंसियां इनपुट कार्य करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। राजनीतिक समाजीकरण और भर्ती महत्वपूर्ण कार्य हैं जो व्यक्तियों को राजनीतिक व्यवस्था के अनुसार समायोजन में मदद करते हैं। राजनीतिक भर्ती का संबंध विभिन्न समुदायों और वर्गों से समाज के सदस्यों की भर्ती से है। यह सदस्यों को राजनीतिक व्यवस्था में विशिष्ट भूमिकाएँ निभाने के लिए उपयुक्त कौशल में प्रशिक्षित करता है। राजनीतिक समाजीकरण और भर्ती कार्य दोनों ही राजनीतिक व्यवस्था की स्थिरता और आंतरिक सुरक्षा के लिए महत्वपूर्ण हैं। इसलिए संरचनात्मक कार्यात्मक परिप्रेक्ष्य के अनुसार राजनीतिक समाजीकरण राजनीतिक व्यवस्था का एक महत्वपूर्ण कार्य है।

13.9 तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत

तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत के मूल सिद्धांत नवशास्त्रीय अर्थशास्त्र से लिए गए हैं। विभिन्न प्रकार के विभिन्न मॉडलों के आधार पर, फ्रीडमैन और हेचटर ने तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत के 'कंकाल' मॉडल के रूप में वर्णित किया है। तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत का ध्यान अभिनेताओं पर है। अभिनेताओं को उद्देश्यपूर्ण या इरादे वाले व्यक्ति के रूप में देखा जाता है। अर्थात्, अभिनेताओं के कुछ लक्ष्य या लक्ष्य होते हैं जिनकी ओर उनके कार्य लक्षित होते हैं।

अभिनेताओं को भी प्राथमिकता के रूप में देखा जाता है। तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत इस बात से असंबद्ध है कि ये प्राथमिकताएँ क्या हैं, या उनके स्रोत क्या हैं। यह सिद्धांत इस तथ्य पर जोर देता है कि कार्रवाई उन उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए की जाती है जो एक अभिनेता की प्राथमिकता पदानुक्रम के अनुरूप हैं। यद्यपि तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत अभिनेता के उद्देश्यों या इरादों से शुरू होता है, यह कार्रवाई पर दो प्रमुख बाधाओं को भी ध्यान में रखता है।

पहला है संसाधनों की कमी. अभिनेताओं के पास अलग–अलग संसाधन होने के साथ–साथ अन्य संसाधनों तक अलग–अलग पहुंच होती है। जिनके पास बहुत सारे संसाधन हैं, उनके लिए लक्ष्यों की प्राप्ति अपेक्षाकृ त आसान हो सकती है। व्यक्तिगत कार्रवाई पर बाधाओं का दूसरा स्रोत सामाजिक संस्थाएँ हैं। फ्रीडमैन और हेचटर ने दो अन्य विचारों की गणना की है जिन्हें वे तर्कसंगत विकल्प सिद्धांत के लिए बुनियादी मानते हैं। पहला एक एकत्रीकरण तंत्र है, या वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा सामाजिक परिणाम उत्पन्न करने के लिए अलग–अलग व्यक्तिगत क्रियाओं को संयोजित किया जाता है। **दूसरा** तर्कसंगत विकल्प बनाने में जानकारी का महत्व है"। यह सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि व्यक्ति राजनीतिक गतिविधियों में तभी भाग लेंगे जब उन्हें राजनीतिक मामलों के बारे में उचित ज्ञान और जानकारी होगी और उनका मानना है कि भागीदारी से कुछ उद्देश्य पूरे होंगे जो उनके लिए फायदेमंद हैं। इस प्रकार राजनीतिक भागीदारी व्यक्तियों की तर्कसंगत पसंद पर आधारित है।

13.10 अभिजात वर्ग का सिद्धांत और अभिजात वर्ग का प्रचलन

अभिजात वर्ग और अभिजात वर्ग के प्रसार का सिद्धांत विफ़ेरेडो पेरेटो द्वारा दिया गया था। "पेरेटो के अनुसार समाज में विषम समूह होते हैं। इन समूहों के भीतर तीव्र क्षैतिज और ऊर्ध्वाधर परिसंचरण होता है। वह समूह या व्यक्ति जो अन्य समूहों पर आधिपत्य सुनिश्चित करते हैं उन्हें अभिजात वर्ग कहा जाता है। पेरेटो ने अभिजात वर्ग शब्द का प्रयोग उन लोगों के लिए किया है जो बुद्धिमत्ता, चरित्र, कौशल, क्षमता और शक्ति का प्रदर्शन करते हैं। पेरेटो के अनुसार व्यक्ति अपनी क्षमताओं में भिन्न होता है और तदनुसार समाज को दो वर्गों में विभाजित करता है; शासक अभिजात वर्ग और गैर–शासी अभिजात वर्ग। शासक अभिजात वर्ग अल्पमत में है और इसमें ऐसे व्यक्ति शामिल हैं जो सीधे तौर पर सरकार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अभिजात वर्ग वे व्यक्ति होते हैं जो किसी समाज के शासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। अभिजात वर्ग का अस्तित्व एक सार्वभौमिक विशेषता है।

गैर–शासकीय अभिजात वर्ग जनता है। उनमें नेतृत्व के गुणों की कमी के साथ–साथ जिम्मेदारी से डर भी होता है। पेरेटो द्वारा सामने रखी गई एक अन्य अवधारणा अभिजात वर्ग का संचलन है। यह एक ऐसी प्रक्रिया को संदर्भित करता है जिसमें व्यक्ति अभिजात वर्ग और गैर–अभिजात वर्ग के बीच घूमते हैं। पेरेटो ने न केवल अभिजात वर्ग और गैर–अभिजात वर्ग के बीच अंतर किया, बल्कि अभिजात वर्ग के संचलन के विचार का भी सुझाव दिया जिसमें अभिजात वर्ग के क्षय या पुनर्जीवित होने पर एक अभिजात वर्ग दूसरे की जगह लेता है। प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से शासन करने वाले लोगों के गैर–अभिजात वर्ग से कुलीन वर्ग या शासक वर्ग की ओर भी गतिशीलता हो सकती है। इसका सीधा मतलब यह है कि पैसे या ताकत वाले नए लोग पुराने लोगों की जगह ले लेते हैं। इस सिद्धांत को राजनीतिक समाजीकरण से जोड़ा

जा सकता है क्योंकि राजनीतिक प्रणालियों और राजनीतिक संस्कृति की समझ से जनता को राजनीतिक व्यवस्था में भाग लेने में मदद मिल सकती है। इसके अलावा, यदि शुरू से ही नेतृत्व के गुणों को विकसित किया जाए, तो यह गैर–अभिजात वर्ग में क्षमताओं का विकास कर सकता है और इस तरह अभिजात वर्ग का प्रसार सुनिश्चित कर सकता है और राष्ट्र लोकतंत्र के सहभागी स्वरूप की ओर बढ़ सकते हैं।

13.11 अन्य सैद्धांतिक दृष्टिकोण

उपर्युक्त सिद्धांतों के अलावा कई अन्य सिद्धांत और दृष्टिकोण हैं जो लोगों की राजनीतिक भागीदारी के कारणों की व्याख्या करते हैं। ये इस प्रकार हैं– मेरेलमैन का राजनीतिक समाजीकरण का पार्श्व सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि पुरानी पीढ़ी के युवाओं में संचारित होने के केवल एक मॉडल पर ध्यान केंद्रित करने के बजाय, समाजीकरण को अधिक जटिल और अंतर–संबंधित मामला माना जाना चाहिए। यह समाजीकरण के ऊर्ध्वाधर सिद्धांत की आलोचना है।

ऊर्ध्वाधर मॉडल से पता चलता है कि पुरानी पीढ़ी जानकारी और ज्ञान का भंडार है जो युवा पीढ़ी को हस्तांतरित होती है। इस सिद्धांत के अनुसार एक विकल्प जहां पार्श्व समाजीकरण समाजीकरण के क्षैतिज रूप से जुड़े एजेंटों का विकास है जो युवाओं तक पहुंचने और समाज की विभिन्न और विविध छवियों को वितरित करने के लिए एक दूसरे के साथ पूरा होता है। औद्योगिक देश समाजीकरण के ऊर्ध्वाधर से पार्श्व रूपों की ओर बढ़ गए हैं जहां कोई औपचारिक केंद्रीय प्राधिकरण नहीं है जो इसका उल्लंघन करते हैं उन्हें कड़ी सजा दी जाती है। यह नियम निर्माता पर कोई अतिरिक्त दबाव डाले बिना व्यवस्था के भीतर परस्पर विरोधी स्थितियों को खुशी से हल करने में सक्षम है। यह सिद्धांत इस बात पर जोर देता है कि परिवार के अलावा राजनीतिक समाजीकरण के कई अन्य प्रभावशाली एजेंट भी हैं।

रिकर और ओडरशूक ने मतदान के कारणों को समझाने के लिए निर्णय सैद्धांतिक रूपरेखा विकसित की। यह मनुष्य को तर्कसंगत विचारक के रूप में देखता है। इस सिद्धांत को एक समीकरण के रूप में प्रस्तुत किया गया है, यू = पी' बी–सी जहां यू मतदान की उपयोगिता है, पी संभावना है कि वोट जाति चुनाव के नतीजे तय करेगी, बी पसंदीदा उम्मीदवार होने पर अपेक्षित लाभ है या पार्टी जीतती है, और सी मतदान की लागत है। इसलिए यह दावा किया जाता है कि P*B>C होने पर किसी व्यक्ति के मतदान करने की संभावना अधिक होती है। इस प्रकार लोग मतदान में तभी भाग लेंगे यदि वे इसे अपने व्यक्तिगत स्वयं के लिए फायदेमंद मानते हैं।

स्ट्रीब और श्नाइडर की चयनात्मक निकासी का सिद्धांत आयु–उपयुक्त भागीदारी और स्व–आरंभित राजनीतिक अलगाव की धारणाष को सामने रखता है। इस सिद्धांत के अनुसार लोग अपनी राजनीतिक

गतिविधि के स्तर और प्रकृति को अपने व्यक्तिगत और प्रासंगिक–स्थितिजन्य कारकों जैसे स्वास्थ्य, सामाजिक दबाव और ख़ाली समय के आधार पर समायोजित करते हैं। इसका तात्पर्य यह है कि यदि लोगों के पास पर्याप्त खाली समय है तो इससे उनकी राजनीतिक भागीदारी बढ़ेगी। इस सिद्धांत के आधार पर स्वास्थ्य और अवकाश के समय जैसे कई कारकों को व्यक्तियों की राजनीतिक भागीदारी को प्रभावित करने वाले कारकों के रूप में पहचाना जा सकता है।

जेनिंग्स और मार्कस का समूह रचना सिद्धांत सामाजिक–जनसांख्यिकीय चर जैसे उम्र, वैवाहिक स्थिति, लिंग और राजनीतिक भागीदारी के स्तर के बीच संबंध पर केंद्रित है। ऑनलाइन राजनीतिक भागीदारी के मामले में युवा लोगों की तुलना में वृद्धावस्था समूहों में कम भागीदारी दर पाई जाती है। यह इस तथ्य का परिणाम हो सकता है कि वृद्ध लोग आम तौर पर कम सुसज्जित, कम शिक्षित और भाग लेने के लिए कम तैयार हो जाते हैं। यह सिद्धांत राजनीतिक भागीदारी को प्रभावित करने वाले कारकों के रूप में उम्र और वैवाहिक स्थिति की पहचान करता है।

अन्य सैद्धांतिक दृष्टिकोण ऐसे तीन दृष्टिकोण हैं जो किसी देश के नागरिकों के राजनीतिक दृष्टिकोण और व्यवहार पैटर्न के गठन की व्याख्या करते हैं। वे सांस्कृतिक दृष्टिकोण, सामाजिक पूंजी दृष्टिकोण और संस्थागत दृष्टिकोण हैं।

"सांस्कृतिक दृष्टिकोण राजनीतिक दृष्टिकोण के निर्माण में किसी राष्ट्र के सामूहिक अनुभवों, उसकी परंपराओं और इतिहास की भूमिका पर जोर देता है। यह उस राष्ट्र की राजनीतिक संस्कृति को महत्व देता है जिसमें एक बच्चा बड़ा होता है। लोगों की मान्यताएँ और व्यवहार पैटर्न प्रारंभिक जीवन समाजीकरण से प्रभावित होते हैं। व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों अनुभव किसी व्यक्ति की राजनीतिक मान्यताओं को आकार देते हैं। इस अर्थ में, व्यक्तियों के मूल्यों और आदतों को पथ–निर्भर और परिवर्तन के प्रतिरोधी के रूप में देखा जा सकता है।

सांस्कृतिक सिद्धांतों की दृष्टि से नागरिकों का राजनीति से मोहभंग और उनकी नागरिक निष्क्रियता सांस्कृतिक संचरण का परिणाम है। ऐसा माना जाता है कि इसने पारस्परिक विश्वास को कम कर दिया है, किसी भी बाह्य–प्रणालीगत पहल को हतोत्साहित किया है और अधिकारियों के प्रति राजनीतिक उदासीनता, संदेह और अविश्वास की विशेषता वाली एक बहुत ही विशिष्ट प्रकार की राजनीतिक संस्कृति का निर्माण किया है। दूसरा और यह तर्क सामने रखता है कि युवा पीढ़ी में राजनीतिक उदासीनता राजनीतिक संस्कृति के संचरण की कमी के कारण है।

सामाजिक पूंजी दृष्टिकोण सामाजिक पूंजी सिद्धांतों के परिप्रेक्ष्य से, ष्नागरिक अक्षमता और निष्क्रियता परिवार और स्कूल जैसी समाजीकरण की विभिन्न एजेंसियों के माध्यम से लोकतांत्रिक मानदंडों, कौशल और मूल्यों के अपर्याप्त संचरण का परिणाम है। सामाजिक पूंजी सिद्धांत मानते हैं कि एक–दूसरे के साथ बातचीत करके, लोग दूसरों पर भरोसा करना, पारस्परिकता करना, आत्मविश्वास हासिल करना, राजनीतिक व्यवस्था की जवाबदेही में विश्वास और सभी प्रकार के नागरिक मूल्यों को सीखते हैं। फिर इन मूल्यों को संस्थानों में पेश किया जाता है और परिणामस्वरूप बेहतर सूचित, अधिक व्यस्त, प्रभावोत्पादक, राजनीतिक रूप से सक्रिय और लोकतांत्रिक रूप से जिम्मेदार नागरिक तैयार होते हैं। सामाजिक पूंजी दृष्टिकोण राजनीतिक समाजीकरण का नीचे से ऊपर का दृष्टिकोण है। यह दृष्टिकोण राजनीतिक समाजीकरण में परिवार और स्कूल की भूमिका पर ध्यान केंद्रित करता है और लोगों के बीच बातचीत को महत्व देता है।

संस्थागत दृष्टिकोण इस दृष्टिकोण के अनुसार, "राजनीतिक दृष्टिकोण अंतर्जात हैं। नागरिक अपने पूर्व अनुभवों और इन अनुभवों की व्याख्या के आधार पर अपनी राय और अपेक्षाएँ बनाते हैं। सरकारी संस्थानों के साथ व्यवहार में व्यक्तिगत अनुभवों के साथ–साथ संस्थानों के प्रदर्शन स्तर का मूल्यांकन नागरिकों द्वारा उनकी जवाबदेही, जवाबदेही, भ्रष्टाचार से लड़ने की क्षमता और विकास के संदर्भ में आउटपुट के आधार पर किया जाता है। संस्थागत दृष्टिकोण राजनीतिक दृष्टिकोण और व्यवहार के विकास के लिए एक श्ऊपर से नीचेश दृष्टिकोण है, और तर्क देता है कि समाज के सदस्यों के बीच सहकारी मूल्यों और व्यवहार को बढ़ावा देने में संस्थानों की प्रमुख भूमिका है।

ऊपर चर्चा किए गए ये तीन दृष्टिकोण राजनीतिक समाजीकरण को सांस्कृतिक संचरण, परिवार, स्कूल और सरकारी संस्थानों से जोड़ते हैं। इन एजेंसियों के माध्यम से पेश किए गए मानदंड और मूल्य समाज में प्रभावी हैं और नागरिकता की धारणा को प्रभावित करते हैं।

13.12 निष्कर्ष

राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से राजनीतिक विश्वास और राय विकसित की जाती है जो राष्ट्र के नागरिक और राजनीतिक जीवन में भाग लेने के लिए आवश्यक हैं। समाज के सदस्य राजनीतिक समाजीकरण के माध्यम से राजनीतिक मूल्य प्राप्त करते हैं। शास्त्रीय सिद्धांतकार लोकतंत्र के कामकाज और समाज के नागरिक जीवन में लोगों की भागीदारी के लिए राजनीतिक समाजीकरण को आवश्यक मानते हैं। आधुनिक विचारक राजनीतिक समाजीकरण को आदत और जनसंचार की विभिन्न एजेंसियों से जोड़ते हैं। उत्तर आधुनिक विचारक वास्तविकता और अति वास्तविकता के बीच अंतर पर ध्यान केंद्रित करते हैं। समाजशास्त्रीय सिद्धांत राजनीतिक समाजीकरण को जीवन भर चलने वाली

प्रक्रिया और समाज में संतुलन बनाए रखने के लिए आवश्यक मानते हैं। कुछ अन्य सिद्धांत राजनीतिक समाजीकरण को उम्र, ख़ाली समय और स्वार्थ से जोड़ते हैं। सांस्कृतिक, सामाजिक पूंजी और संस्थागत दृष्टिकोण राजनीतिक मूल्यों के प्रसारण के लिए परिवार, स्कूल और सरकारी संस्थानों को महत्व देते हैं। समकालीन समाज की विशेषता सामाजिक, राजनीतिक और आर्थिक क्षेत्र में व्यापक परिवर्तन हैं। राजनीतिक समाजीकरण व्यक्तियों की राजनीतिक भागीदारी को निर्धारित करता है। राज्य समाज के संबंध राजनीतिक विश्वास, प्रभावकारिता और भागीदारी के बुनियादी पहलुओं पर आधारित हैं। राजनीतिक मान्यताओं और विचारों के निर्माण पर इन परिवर्तनों के प्रभाव की जांच करना आवश्यक है। निम्नलिखित अध्याय राजनीतिक भागीदारी के विभिन्न पहलुओं पर केंद्रित है।

13.13 बोध प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1. राजनीतिक समाजीकरण के कितने प्रकार है?

   (अ) 1 (ब) 2 (स) 3 (द) 4

2. राजनीतिक समाजीकरण के प्रकारों की कितनी श्रेणियाँ हैं,?

   (अ) एक (ब) दो (स) तीन (द) चार

3. कार्ल मार्क्स का जन्म कब हुआ था

(अ) 1881–1953 (ब) 1818–1883 (स) 1858–1903 (द) 1918–2003,

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. राजनीतिक समाजीकरण के प्रकारो का विस्तृत वर्णन कीजिए।
2. अभिजात वर्ग का सिद्धांत और अभिजात वर्ग का प्रचलन की व्याख्या कीजिए।
3. सामाजिक पूंजी क्या है वर्णन कीजिए।

बोध प्रश्न के उत्तर

1 (अ) 2 (स) 3 (ब)

13.14 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- बादाम, गेब्रियल. और जी. बिंघम पॉवेल। (2014) तुलनात्मक राजनीति एक विकासात्मक दृष्टिकोण। मैसाचुसेट्स। लिटिल, ब्राउन एंड कंपनी (इंक.)।
- बादाम, गेब्रियल. और सिडनी वर्बा। (2015)। नागरिक संस्कृति : पाँच देशों में राजनीतिक दृष्टिकोण और लोकतंत्र। न्यूबरी पार्क, कैलिफोर्निया सेज प्रकाशन।
- बॉटमोर, टॉम। (2016)। राजनीतिक समाजशास्त्र. नई दिल्ली बी.आई. प्रकाशन.
- कैल्वर्ट, पीटर। (2012)। तुलनात्मक राजनीतिः एक प्रस्तावना. एसेक्सः पियर्सन एजुकेशन लिमिटेड।
- चतुवेर्दी, अर्चना. (2009)। तुलनात्मक राजनीति। नई दिल्ली : राष्ट्रमंडल प्रकाशक।
- दास गुप्ता, सुबीर. (1984)। राजनीतिक विकास और राजनीतिक विकास : सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य। कलकत्ता : अशोक रे.
- डिसूजा, लीला. (2005)। धर्म का समाजशास्त्र. जयपुर : प्रेम रावत प्रकाशन।
- फॉल्क्स, कीथ। (1999)। राजनीतिक समाजशास्त्र : एक महत्वपूर्ण प्रस्तावना. नई दिल्ली रावत प्रकाशन।
- ग्रीन, दिसंबर और लौरा लुएहरमन। (2004)। तीसरी दुनिया की तुलनात्मक राजनीति : अवधारणाओं और मामलों को जोड़ना। बोल्डर लिन रेनर पब्लिशर्स, इंक.
- गुप्ता, एस.डी. (1984)। राजनीतिक विकास और राजनीतिक विकास : सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य। कलकत्ता. अशोक रे, प्रजना।
- हेन्स, जेफरी। (2005)। वैश्वीकरण की दुनिया में तुलनात्मक राजनीति। माल्डेन : पोलिटी प्रेस।
- हाइमन, हर्बर्ट. (1959)। राजनीतिक समाजीकरण : राजनीतिक व्यवहार के मनोविज्ञान में एक अध्ययन। नई दिल्लीरू गुटब प्रिमलानी, अमेरिंड प्राइवेट लिमिटेड
- जयपालन, एन. (2000). तुलनात्मक सरकारें. नई दिल्ली : अटलांटिक प्रकाशक और वितरक।
- जेना, सरोज कुमार. (2012)। राजनीतिक समाजशास्त्र : एक यथार्थवादी दृष्टिकोण। नई दिल्ली : अनमोल प्रकाशन।

- कुकरेजा, सुनील. (2006)। राजनीतिक समाजशास्त्र में केस स्टडीज। नई दिल्ली : धारावाहिक प्रकाशन।
- लालनिथांगा, पी. (2005). मिजोरम का उदय. आइजोल : लेखक लालरिनावमा। वी.एस. (2005)। मिज़ो लोकाचारः परिवर्तन और चुनौतियाँ। आइजोलः मिजोरम प्रकाशन बोर्ड
- लालथंगलियाना. बी. (2014). मिज़ो का संक्षिप्त इतिहास और संस्कृति। आइजोल : लेखक.
- माल्सावमडॉन्गिलआना और रोहमिंगमावी (2018) (संस्करण)। मिज़ो आख्यान : मिज़ोरम के विवरण। गुवाहाटी. वैज्ञानिक पुस्तक केंद्र.
- मजूमदार, ए.के. और भंवर सिंह. (1999)। राजनीतिक समाजशास्त्र. जयपुरः आर बी एस ए पब्लिशर्स।
- मिश्रा, मधुस्मिता. (2003)। प्रेस और राजनीतिक समाजीकरण. दिल्लीः प्रमुख प्रकाशक।
- मुखोपाध्याय, अमल कुमार। (1974). राजनीतिक समाजशास्त्रः एक प्रस्तावनाात्मक विश्लेषण। कलकत्ता. पी.के. बागची.
- नगला, बी.के. (1999)। (ईडी।)। राजनीतिक समाजशास्त्र. जयपुरः प्रेम रावत प्रकाशन।
- नुन्थारा, सी. (1996)। मिजोरमः समाज और राजनीति। नई दिल्लीः इंडस पब्लिशिंग कंपनी।
- ओमेन, टी.के. (2004)। राष्ट्र, नागरिक समाज और सामाजिक आंदोलनः राजनीतिक समाजशास्त्र में निबंध। नई दिल्लीः सेज पब्लिकेशंस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड।
- पाइ, लूसियन डब्ल्यू. और सिडनी वर्बा। (2015)। (ईडी।)। राजनीतिक संस्कृति और राजनीतिक विकास. दिल्लीः सुरजीत प्रकाशन।
- राठौड़. पी.बी. (2006)। तुलनात्मक राजनीति के आयाम. जयपुरः एबीडी पब्लिशर्स।
- सिंह, मंजीत. (1992)। छात्रों का राजनीतिक समाजीकरण। नई दिल्लीः डीप एंड डीप प्रकाशन।
- वर्मा, आर.पी. (2001)। राजनीतिक समाजशास्त्र की गतिशीलता. नई दिल्लीः रजत प्रकाशन

इकाई 14 : राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण, निर्धारक तत्व तथा महत्व

इकाई की रूपरेखा

14.0 उद्देश्य

14.1 प्रस्तावना

14.2 राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण

- 14.2.1 परिवार
- 14.2.2 किशोर
- 14.2.3 लिंग
- 14.2.4 साथियों के समूह
- 14.2.5 पड़ोस
- 14.2.6 विद्यालय
- 14.2.7 धर्म
- 14.2.8 सामाजिक वर्ग

14.3 राजनैतिक समाजीकरण के निर्धारक तत्त्व

- 14.3.1 राजनैतिक व्यवस्था की प्रकृति
- 14.3.2 राजनैतिक समाज के अभिमुखीकरण
- 14.3.3 राजनैतिक समाज के आदर्श

14.4 राजनैतिक समाजीकरण का महत्त्व

14.5 सारांश

14.6 बोध प्रश्न

14.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

14.0 उद्देश्य

आप इस इकाई के अध्ययन उपरान्त जान सकेंगे –

1. राजनीतिक समाजीकरण के विभिन्न अभिकरण को जानेंगे।
2. राजनैतिक समाजीकरण के निर्धारक तत्त्व को जान सकेंगे।
3. राजनैतिक समाजीकरण का महत्त्व को आप समझ सकेंगे।
4. राजनैतिक समाजीकरण के निर्धारक तत्त्व मे प्रकृति, आदर्श, एवं अभिमुखीकरण को आप जानेंगें।

14.1 प्रस्तावना

हम सभी सहमत हैं कि व्यक्ति अलगाव में नहीं रह सकते। उसमें सामाजिकता की स्वाभाविक प्रवृत्ति होती है। परिवार के सदस्यों, साथियों, शिक्षकों, सहपाठियों, रिश्तेदारों और समुदाय के सदस्यों के साथ निरंतर बातचीत होती रहती है। आधुनिक समय में विज्ञान और प्रौद्योगिकी की प्रगति के साथ, हम सोशल मीडिया, नेटवर्किंग आदि के प्रभाव को भी महसूस कर सकते हैं। समाज के साथ यह संवाद ही उसे इंसान बनाता है। हम प्रत्येक स्तर पर समाजीकरण की प्रक्रिया को समझने का भी प्रयास करेंगे। समाजीकरण की प्रक्रिया एक जीवित जीव को सामाजिक प्राणी बनने में सक्षम बनाती है। एक सतत प्रक्रिया के रूप में यह गर्भ से कब्र तक और पीढ़ी–दर–पीढ़ी चलती रहती है। समाज में विभिन्न एजेंसियों द्वारा व्यक्तियों का पोषण और आकार किया जाता है। इस इकाई का उद्देश्य आपको समाजीकरण की विभिन्न एजेंसियों से परिचित कराना है और प्रत्येक एजेंसी किसी व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्माण में कैसे योगदान देती है।

14.2 राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरण

समाजीकरण शून्य में नहीं हो सकता। व्यक्ति, समूह और संस्थाएँ समाजीकरण के लिए सामाजिक संदर्भ तैयार करते हैं। इन एजेंसियों के माध्यम से ही हम अपनी संस्कृति के मूल्यों और मानदंडों को सीखते हैं और उन्हें शामिल करते हैं। वे वर्ग, नस्ल और लिंग के संबंध में सामाजिक संरचना में हमारी स्थिति का भी लेखा–जोखा रखते हैं। समाजीकरण प्रक्रिया में हम जो आदतें, कौशल, विश्वास और निर्णय के मानक सीखते हैं, वे हमें समाज के कार्यात्मक सदस्य बनने में सक्षम बनाते हैं। हालाँकि, कार्यात्मक शब्द व्यापक सामाजिक–सांस्कृतिक संदर्भ से प्रभावित है। विभिन्न एजेंसियों को औपचारिक/अनौपचारिक, सक्रिय/

निष्क्रिय या प्राथमिक/माध्यमिक के रूप में वर्गीकृत किया जा सकता है। हालाँकि, कोई स्पष्ट सीमांकन नहीं है क्योंकि ये सभी आपस में बहुत अधिक जुड़े हुए हैं।

14.2.1 परिवार

समाजीकरण की कल्पना विकास के विभिन्न चरणों में होने वाली प्रक्रियाओं के अनुक्रम के रूप में की जा सकती है, जिसमें परिवार समाजीकरण की पहली और सबसे महत्वपूर्ण स्थायी एजेंसी है। छोटे बच्चे का अपने परिवार के साथ रिश्ता बच्चे पर सबसे महत्वपूर्ण, भाग्यवर्धक और निर्णायक प्रभावों में से एक है। परिवार को 'सामाजिक सद्गुणों का उद्गम स्थल' कहा जाता है। यहीं पर बच्चे का सहयोग, सहिष्णुता, आत्म–बलिदान, प्रेम और स्नेह जैसे मूल मूल्यों की ओर रुझान होता है। जिस तरह से एक बच्चा जीवन में बाकी दुनिया के साथ बेहतर या बदतर के लिए अपने रिश्ते स्थापित करता है, वह काफी हद तक परिवार में उसके प्राथमिक समाजीकरण से आकार लेता है। एक बुनियादी सामाजिक संस्था के रूप में परिवार को हमेशा व्यक्ति के साथ–साथ समाज और मानव जाति के विकास के लिए एक मुख्य घटक माना गया है। एक शिशु अपने परिवार के प्यार और देखभाल के साथ जीवन की यात्रा पर निकलता है। फिर यह पारिवारिक संदर्भ में ही है कि वह जीवन का पहला पाठ सीखता है और अपने परिवार के सदस्यों की आदतों, रीति–रिवाजों और व्यवहार पैटर्न की नकल करने की कोशिश करता है।

बॉर्डियू के अनुसार, हमें आदतें अपने परिवारों से विरासत में मिलती हैं। आदत स्वभाव के एक समूह को संदर्भित करती है जो हमें हमारे सामाजिक वर्ग के हिस्से के रूप में चिह्नित करती है – शिष्टाचार, भाषण पैटर्न, शब्दावली और अभिव्यक्ति शैली, शारीरिक व्यवहार और मुद्राएं। विशेष बातचीत के लिए हमारी प्राथमिकता काफी हद तक हमारी आदत से निर्धारित होती है। सभी मानव समाजों में समाजीकरण की एक प्रमुख एजेंसी के रूप में, परिवार एक युवा शिशु को मानव समुदाय के सदस्य में बदल देता है और बच्चों में संस्कृति संचारित करने के पहले माध्यम के रूप में कार्य करता है। यह परिवार ही है जो स्नेह, सुरक्षा और समाजीकरण प्रदान करता है जो महत्वपूर्ण वर्षों के दौरान एक बच्चे के लिए बुनियादी स्रोत हैं।

14.2.2 किशोर

किशोरों के समाजीकरण को किशोरों द्वारा उनकी सामाजिक दुनिया और सामाजिक संबंधों की व्याख्या के संदर्भ में माना जाता है। शैशवावस्था और बचपन के शुरुआती चरणों की तुलना में, माता–पिता के समाजीकरण के अवसर सीमित हैं क्योंकि किशोर ऐसी दुनिया में चले जाते हैं जहां वे अपने माता–पिता के नियंत्रण में कम होते हैं। इस स्तर पर, दोस्ती घनिष्ठ और अधिक घनिष्ठ हो जाती है; माता–पिता के साथ संबंध साथियों के साथ संबंध में बदल जाता है।

किशोरों की अधिक स्वायत्तता की मांग के परिणामस्वरूप माता–पिता के साथ टकराव बढ़ सकता है। हम उनके विद्रोही स्वभाव को यौवन जैसे शारीरिक परिवर्तनों के लिए जिम्मेदार मानते हैं, लेकिन सच्चाई यह है कि इस तरह के गुस्से का विस्फोट और भूमिका संबंधी भ्रम सांस्कृतिक असंगति के कारण होते हैं। माता–पिता और किशोरों के बीच कई झगड़े मुद्दों को तैयार करने या परिभाषित करने के तरीके के कारण उत्पन्न होते हैं। यह सामाजिक मानदंडों और परंपराओं के संबंध में अपेक्षाओं में अंतर के कारण भी हो सकता है। माता–पिता सामाजिक परंपराओं के अनुसार मुद्दों की व्याख्या इस आधार पर करते हैं कि क्या सही है या क्या गलत है। किशोरों के लिए ऐसे मामले व्यक्तिगत पसंद से जुड़े होते हैं। उदाहरण के लिए, एक माता–पिता इस बात से नाराज़ हो सकते हैं कि उनका किशोर बेटा/बेटी कमरे को इतना गन्दा रखता है। लेकिन किशोरों के लिए यह पसंद का मामला है।

14.2.3 लिंग

हम जानते हैं कि लिंग पहचान मानव विकास में प्रमुख मील के पत्थर में से एक है। कम उम्र में भी, लिंग की धारणा बच्चे के मानस में स्थापित हो जाती है। लिंग समाजीकरण से तात्पर्य लड़के और लड़कियों के समाजीकरण में अंतर से है। परिवार पहली और सबसे महत्वपूर्ण एजेंसी है जहां लैंगिक समाजीकरण होता है। पारिवारिक समाजीकरण के दौरान, लैंगिक भूमिकाएँ सीमांकित हो जाती हैं। 'लड़कों और लड़कियों, पुरुषों और महिलाओं से क्या करने की अपेक्षा की जाती है।' हमारे देश के अधिकांश हिस्सों में पितृसत्तात्मक व्यवस्था कायम है। हमारे समाज में महिलाओं और पुरुषों के बीच असमान शक्ति संबंध बिल्कुल स्पष्ट हैं, जिससे पुरुष अधिक प्रभावशाली होते हैं और महिलाओं को अक्सर पुरुषों के अधीन और हीन माना जाता है।

लड़कों को पुरुष लिंग भूमिका के अनुरूप और लड़कियों को महिला लिंग भूमिका के अनुरूप पाला जाता है। लोगों को अलग करने के लिए पुरुष–महिला द्वंद्व की प्रथा जारी है। दरअसल, ये लिंग भूमिकाएँ जन्मजात नहीं हैं बल्कि जैविक लिंग अंतर का एक सामाजिक प्रक्षेपण हैं। जीवन के आरंभ से ही, बच्चे अपने जीवन के सभी पहलुओं में लिंग आधारित भेदभाव का अनुभव करना शुरू कर देते हैं, चाहे वह स्वास्थ्य देखभाल पोषण हो, या शिक्षा या दूसरों के साथ उनके संबंध। बच्चें न केवल माता–पिता के व्यवहार का अनुकरण करते हैं, बल्कि अक्सर उन्हें यह भी सिखाया जाता है कि उन्हें क्या करना चाहिए या क्या नहीं करना चाहिए। लड़के से जुड़ा विशेष मूल्य बिल्कुल स्पष्ट है; चाहे वह माता–पिता की प्रतिक्रियाओं, माता–पिता के व्यवहार, पारिवारिक अनुष्ठानों, प्रथाओं, उत्सवों, लोककथाओं या गीतों के माध्यम से हो। लड़कियों को जिन समस्याओं का सामना करना पड़ता है वे आम तौर पर पुरुष प्रभुत्व और महिलाओं की असहायता का प्रतिबिंब होती हैं।

14.2.4 साथियों के समूह

साथियों के हित और सामाजिक स्थिति भी समान हो सकती हैं और करीबी सामाजिक निकटता रख सकते हैं। युवा किशोरों के लिए, साथियों द्वारा स्वीकृति समाजीकरण का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है। इसलिए वे सहकर्मी समूह के अनुरूप होने और वफादारी को बढ़ावा देने की इच्छा प्रदर्शित करते हैं। सहकर्मी समूह के प्रभाव का पता उस समय से लगाया जा सकता है जब बच्चा तीन साल का होता है, जब वह निकटतम परिवार के बाहर के लोगों के साथ मिलना–जुलना शुरू कर देता है। इतनी कम उम्र से ही, बच्चे अपने साथियों के साथ सार्थक संबंध बनाते हैं, जो उन पर प्रभाव डालते प्रतीत होते हैं।

चूँकि वे अधिकतर एक ही आयु वर्ग के होते हैं, वे बिना किसी रोक–टोक के स्वतंत्र रूप से बातचीत करते हैं।सहकर्मी समूह के साथ इस प्रकार का निरंतर और अनियंत्रित समाजीकरण एक व्यक्ति को बहुत महत्वपूर्ण सबक प्राप्त करने में मदद करता है। सहकर्मी समूह का हिस्सा बनकर, बच्चे अपने माता–पिता के अधिकार से दूर होना शुरू कर देते हैं और खुद दोस्त बनाना और निर्णय लेना सीखते हैं। यदि आप बच्चों को खेलते हुए देखते हैं तो आप देख सकते हैं कि कैसे वे बड़ों के निर्देशों के बिना बातचीत, प्रभुत्व, नेतृत्व, सहयोग, समझौता आदि जैसी विभिन्न रणनीतियों को शामिल करते हैं। सहकर्मी समाजीकरण उन्हें समूह बातचीत की बारीकियों को समझने और उसके अनुसार कार्य करने की क्षमता से लैस करता है। साथियों का प्रभाव ऐसा होता है कि कुछ बच्चे माता–पिता और परिवार की प्रमुख शक्ति को चुनौती देने लगते हैं।

14.2.5 पड़ोस

पड़ोस को एक स्थानीय सामाजिक इकाई कहा जा सकता है जहां एक–दूसरे के निकट रहने वाले लोगों या एक ही इलाके के लोगों के बीच निरंतर संपर्क होता है। ऐसी स्थानिक इकाइयों में अक्सर आमने–सामने बातचीत होती रहती है। इस अर्थ में वे स्थानीय सामाजिक इकाइयाँ हैं जहाँ बच्चे बड़े होते हैं। आप अपने पड़ोस में विभिन्न प्रकार के लोगों को देख सकते हैं जो जाति, वर्ग या धर्म या व्यवसाय में भिन्न हैं। ऐसे विविध प्रकार के लोगों के साथ बातचीत करके, आप विभिन्न रीति–रिवाजों और प्रथाओं से परिचित हो सकते हैं; विभिन्न व्यवसाय जो लोग अपनाते हैं; ऐसे व्यवसायों के लिए आवश्यक कौशल और उन सदस्यों के पास मौजूद गुण भी। बढ़ता बच्चा भी अनुशासन और व्यवस्थित व्यवहार के मूल्यों को आत्मसात कर सकता है ।

14.2.6 विद्यालय

जैसे–जैसे बच्चा बड़ा होता है, उसे स्कूल में भेजा जाता है जहाँ उसका दूसरों के साथ संपर्क भी बढ़ता है। स्कूल में बच्चे का पहला दिन मेसो स्तर की इकाई में प्रवेश के संस्कारों में से एक है। यह याद

रखने योग्य है कि शैशवावस्था से किशोरावस्था तक बच्चों का समाजीकरण बहुत तीव्र गति से होता है और शैशवावस्था के प्रारंभिक चरण में परिवार और साथियों का सबसे अधिक प्रभाव होता है। इसके बाद, यह स्कूल ही है जो बच्चे के व्यवहार मानदंडों को आकार देता है। स्कूल औपचारिक शैक्षणिक संस्थानों की एक पूरी श्रृंखला को संदर्भित करता है। बैकर के शब्दों में, स्कूल शिक्षा और समाजीकरण की एक सक्रिय, प्रत्यक्ष और औपचारिक एजेंसी है। स्कूल की कल्पना विषम समाज को समानता देने के उद्देश्य से की गई है। स्कूल को समाज के विवेक के रक्षक के रूप में देखा जाना चाहिए जो बच्चों के साथ जुड़ाव के माध्यम से मानवता को नैतिक, बौद्धिक और सौंदर्य विकास के अगले उच्च स्तर तक ले जाने के लिए लगातार प्रयास कर रहा है। स्कूल छात्रों को औपचारिक और अनौपचारिक दोनों संदर्भ प्रदान करते हैं। औपचारिक संदर्भ वह है जो कक्षा में प्रदान किया जाता है जिसमें समाजीकरण की सामग्री पाठ्यक्रम और शिक्षण–सीखने की प्रक्रिया द्वारा निर्धारित की जाती है।

14.2.7 धर्म

एमिल दुर्खीम ने धर्म को "पवित्र चीज़ों से संबंधित मान्यताओं और प्रथाओं की एकीकृत प्रणाली के रूप में परिभाषित किया है।" जिनकी मान्यताएँ और प्रथाएँ समान हैं वे धर्म के माध्यम से एक एकल नैतिक समुदाय में एकजुट होते हैं। मानवविज्ञानी और समाजशास्त्री दोनों ही धर्म को हमारे सामाजिक अस्तित्व का एक अविभाज्य अंग मानते हैं। धर्म सामूहिक विश्वास को सामूहिक पहचान में आकार देता है। आपने देखा होगा कि शादी, दफ़न, जन्मदिन समारोह और त्यौहार जैसे धार्मिक अनुष्ठान लोगों को एक साथ कैसे लाते हैं, जिसमें वे अपने समूहों के साथ एकजुटता व्यक्त करते हैं। एक विशेष धार्मिक समूह के सदस्य अपनेपन की भावना का आनंद लेते हैं। यह स्वाभाविक है कि जो लोग समूह से बाहर हैं वे अलग–थलग महसूस करते हैं। समाजीकरण के संभावित एजेंटों में से एक के रूप में, धर्म अपने सदस्यों को आध्यात्मिक दुनिया के दृष्टिकोण से अवगत कराता है और उन्हें एक बड़े समाज में उद्यम करने के लिए प्रेरित करता है। हमारे देश में धर्म के संबंध में विविधता बहुत आश्चर्यजनक है। समाजीकरण की प्रक्रियाएँ और प्रथाएँ एक धर्म से दूसरे धर्म में भिन्न होती हैं।

14.2.8 सामाजिक वर्ग

समाजीकरण में सामाजिक वर्ग की भूमिका को नजर अंदाज नहीं किया जा सकता। समाजीकरण और सामाजिक वर्ग के बीच घनिष्ठ संबंध है। सामाजिक वर्ग को न तो कानूनी रूप से परिभाषित किया गया है और न ही धार्मिक रूप से स्वीकृत किया गया है। इसे आम तौर पर समान पदों, धन और आय वाले लोगों का एक समूह कहा जाता है। हमारा समाज कई सामाजिक वर्गों में विभाजित या स्तरित है।

जिस तरह से समाज के संसाधनों को वितरित किया जाता है वह इन परतों में असमान है। ऊपरी परतों पर उन लोगों का कब्जा है जिनके पास अधिक संसाधन हैं और निचली परतों का प्रतिनिधित्व उन लोगों द्वारा किया जाता है जिनके पास कम संसाधन हैं। एक सामाजिक वर्ग को ऐसे लोगों के समूह द्वारा चिह्नित किया जाता है जो धन, आय, शिक्षा और व्यवसाय जैसे कारकों के संबंध में समान स्थिति साझा करते हैं। इनमें से प्रत्येक वर्ग की अपनी मान्यताएँ, दृष्टिकोण, राय और विश्व दृष्टिकोण हैं।

14.3 राजनैतिक समाजीकरण के निर्धारक तत्त्व

व्यक्ति के जीवन में राजनैतिक समाजीकरण का अत्यधिक महत्त्व है। इसका कारण यह है कि मानव सामाजिक प्राणी के साथ राजनैतिक प्राणी भी है। वर्तमान राजनैतिक समाजों में राजनैतिक समाजीकरण का अत्यधिक महत्त्व है। आज व्यक्ति सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक और यहाँ तक कि धार्मिक क्षेत्रों में क्या करता है? उसका नियमन उसकी राजनैतिकता करती है। व्यक्ति को आज राजनीति से ऐसा मोह हो गया है कि वह उसके रग–रग में समा गई है।

14.3.1 राजनैतिक व्यवस्था की प्रकृति

राजनैतिक व्यवस्था की प्रकृति न केवल राजनैतिक समाजीकरण का महत्त्वपूर्ण निर्धारक तत्त्व है अपितु यह छल–योजन या राजनैतिक सिद्धान्त–बोधन के लिए राजनैतिक समाजीकरण के अभिकरणों को प्रयुक्त करने की नियामक भी होती है। प्रत्येक राजनैतिक व्यवस्था किसी न किसी प्रणाली या सरकार पर आधारित होती है। प्रजातन्त्र, राजतन्त्र निरंकुशतन्त्र आदि राजनैतिक व्यवस्थाएँ हैं जहाँ पर राजनैतिक समाजीकरण की गति निर्धारित होती है। प्रजातन्त्रात्मक शासन प्रणाली वाले समाजों में राजनैतिक समाजीकरण के अभिकरण शासन तन्त्र के अनुसार सक्रिय रहते हैं क्योंकि प्रजातन्त्र में खुलापन होता है। इसी तरह राजतन्त्रात्मक एवं निरंकुश तन्त्र वाले समाजों में राजनैतिक समाजीकरण के अभिकरण प्रतिबंधित और सीमित रहते हुए कार्य करते हैं। अतः राजनैतिक समाजीकरण व्यवस्थाओं की प्रकृति पर निर्भर करता है ।

बोध प्रश्न

राजनैतिक व्यवस्था की प्रकृति को इन पंक्तियों मे लिखिए।

.....

.....

.....

14.3.2 राजनैतिक समाज के अभिमुखीकरण

अभिमुखीकरण से आशय यह है कि समाजीकरण किस दिशा में पनप रहा है। यदि समाजीकरण और राजनैतिक समाजीकरण में दिशायी साम्य की अवस्था नहीं होती तो राजनैतिक समाज के अभिमुखीकरण विपरीत दिशा को होते। यह तब होता है जब शासन तन्त्र अप्रकट रूप से क्रियाशील राजनैतिक समाजीकरण पर हस्तक्षेप करने लगता है। अतः राजनैतिक समाजीकरण उसी ओर गतिमान होता है जहाँ समाजीकरण स्वस्थ और स्वच्छ रूप से क्रियाशील होता है।

14.3.3 राजनैतिक समाज के आदर्श

समाज के जो आदर्श हैं, वही आदर्श राजनैतिक समाज के भी बन जाते हैं। राजनैतिक समाज के आदर्श यदि नकारात्मक होंगे तो राजनैतिक समाजीकरण के वे नियामक नहीं कहे जायेंगे। कहने का आशय यह है कि राजनैतिक समाजीकरण के लिए राजनैतिक समाज के आदर्श निर्धारक तत्त्व के रूप में कार्य करते हैं।

14.4 राजनैतिक समाजीकरण का महत्त्व

1. राजनैतिक समाजीकरण राष्ट्र और राजनैतिक व्यवस्था के प्रति निष्ठा और विशिष्ट मूल्यों को अपनाने या पनपने में सहायता देती है।

2. राजनैतिक समाजीकरण जीवनपर्यन्त चलने वाली प्रक्रिया होने के कारण राजनैतिक सक्रियता के बराबर नियामक बनी रहती है और इस तरह इसका राजनैतिक व्यवस्था को प्रकृति, उसकी क्रियात्मकता और विकास में महत्त्वपूर्णस्थान बना रहता है।

3. राजनैतिक समाजीकरण व्यक्ति को राजनैतिक प्राणी बनाता है। इसी प्रक्रिया के द्वारा व्यक्ति के मानस पटल में राजनैतिक मानचित्र बनते हैं, जिसके माध्यम से व्यक्ति राजनैतिक घटनाओं के प्रति अपनी प्रतिक्रिया व्यक्त करता है।

4. राजनैतिक समाजीकरण व्यक्ति और व्याप्तगों के समूहों की राजनैतिक मनोवृत्तियों तथा मूल्यों का ही निर्धारण करता है। इन्हीं मूल्यों के द्वारा वह राजनैतिक व्यवस्था में निवेशक की भूमिका निभाता है।

5. राजनैतिक व्यवस्था में व्यक्तियों की सहभागिता राजनैतिक समाजीकरण के द्वारा नियामक होती है।

6. राजनैतिक समाजीकरण, राजनैतिक सहभागिता और राजनैतिक भर्ती का नियामक भी होता है। अर्थात राजनैतिक समाजीकरण राजनैतिक भर्ती का प्रेरक होता है। फलस्वरूप व्यक्ति का राजनैतिकरण होता है।

7. राजनैतिक समाजीकरण के द्वारा राजनैतिक संस्कृतियों को बनाए रखा या परिवर्तित किया जाता है। अर्थात राजनैतिक संस्कृति के विकास में इसकी महत्त्वपूर्ण भूमिका रहती है।

8. राजनैतिक समाजीकरण व्यक्ति को राजनैतिक संस्कृति में दीक्षित भी करता है। यह राजनैतिक संस्कृति को एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक प्रभावी ढंग से पहुँचाने के माध्यमों में सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है।

9. राजनैतिक समाज को आधुनिकता का आधार राजनैतिक समाजीकरण है। अतः इस प्रक्रिया का राजनैतिक व्यवस्था के विकास व कार्य क्षमताओं में निर्णायक भूमिका होती है।

10. व्यक्ति को राजनीति में प्रवेश के लिए राजनैतिक समाजीकरण पुल (Bridge) का काम करता है। यह व्यक्ति को राजनीति से जोड़े रखता है।

11. राजनैतिक समाजीकरण, राजनैतिक व्यवस्थाओं को स्थिरता और सामर्थ्य से युक्त करने की प्रक्रिया है। फलतः राजनैतिक अव्यवस्थाओं से मुक्त रखने का कार्य भी इसी प्रक्रिया द्वारा सम्भव होता है।

12. राजनैतिक व्यवस्था को दृढ़ता प्रदान करने के लिए लोगों में सकारात्मक राजनैतिक विचार राजनीतिक समाजीकरण की प्रक्रिया द्वारा ही सम्भव होता है।

13. राजनैतिक समाजीकरण व्यक्ति में राजनीति के प्रति उदासीनता को दूर कर उसमें राजनीति के प्रति लगाव पैदा करता है।

14. यह व्यक्ति का राजनीतिकरण, उसकी राजनैतिक भर्ती व सहभागिता का प्रवेश द्वार है।

14.5 सारांश

राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके माध्यम से व्यक्ति सीखते हैं और बार–बार एक राजनीतिक लेंस को आत्मसात करते हैं, जिससे उनकी धारणा बनती है कि सत्ता कैसे व्यवस्थित होती है और उनके आसपास की दुनिया कैसे व्यवस्थित होती है (और होनी चाहिए); वे धारणाएँ, बदले में, व्यक्तियों की परिभाषाओं को आकार देती हैं और परिभाषित करती हैं कि वे कौन हैं और उन्हें उन राजनीतिक और

आर्थिक संस्थानों में कैसे व्यवहार करना चाहिए जिनमें वे रहते हैं। रुख और विचारधारा – यह विकासात्मक प्रक्रियाओं का अध्ययन है जिसके द्वारा सभी उम्र और किशोरों के लोग राजनीतिक ज्ञान, दृष्टिकोण और व्यवहार प्राप्त करते हैं। यह एक सीखने की प्रक्रिया को संदर्भित करता है जिसके द्वारा एक अच्छी तरह से चलने वाली राजनीतिक व्यवस्था के लिए स्वीकार्य मानदंड और व्यवहार होते हैं। एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी में संचारित होता है। इस कार्य के निष्पादन के माध्यम से व्यक्तियों को राजनीतिक संस्कृति में शामिल किया जाता है और राजनीतिक वस्तुओं के प्रति उनका रुझान बनता है। इस प्रक्रिया में स्कूलों, मीडिया और राज्य का बड़ा प्रभाव होता है।

राजनीतिक समाजीकरण वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था के बारे में जानकारी प्राप्त करता है जो उसके राजनीतिक ज्ञान और राजनीतिक घटनाओं के विषय में उसके संबंधों को सुनिश्चित करती है। यह ऐसी प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति के राजनीतिक अनुकूल का पता लगता है।

14.6 बोध प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1 राजनीतिक समाजीकरण के अभिकरणों पड़ोस और विद्यालय पर टिप्पणी लिखिए।

2 राजनैतिक समाजीकरण के निर्धारक तत्त्व राजनैतिक व्यवस्था की प्रकृति पर टिप्पणी लिखिए।

3 राजनैतिक समाजीकरण के निर्धारक तत्त्व पर एक लेख लिखिए।

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1 राजनीतिक समाजीकरण के विभिन्न अभिकरणों की व्याख्या कीजिये।

2 राजनैतिक समाजीकरण के निर्धारक तत्त्व कौन कौन है? व्याख्या कीजिये।

3 राजनैतिक समाजीकरण का महत्त्व की विस्तृत व्याख्या कीजिये।

4 राजनैतिक समाजीकरण के निर्धारक तत्त्व मे अभिमुखीकरण का वर्णन कीजिये।

14.7 सन्दर्भ ग्रंथ सूची

- ओमेन,टी.के. (2004)। राष्ट्र, नागरिक समाज और सामाजिक आंदोलन : राजनीतिक समाजशास्त्र में निबंध। सेज पब्लिकेशंस इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, नई दिल्ली।

- पाइ, लूसियन डब्ल्यू. और सिडनी वर्मा। (2015)। (ईडी।)। राजनीतिक संस्कृति और राजनीतिक विकास. सुरजीत प्रकाशन, दिल्ली।
- राठौड़. पी.बी. (2006)। तुलनात्मक राजनीति के आयाम. एबीडी पब्लिशर्स, जयपुर।
- सिंह, मंजीत. (1992)। छात्रों का राजनीतिक समाजीकरण। डीप एंड डीप प्रकाशन, नई दिल्ली।
- वर्मा, आर.पी. (2001)। राजनीतिक समाजशास्त्र की गतिशीलता. रजत प्रकाशन, नई दिल्ली।
- डॉ0 राधिका देवी (2020)राजनीति में अभिजन या विशिष्ट वर्ग की अवधारणा (IJHSSI)
- डॉ0 डी0 एस0 बघेल डॉ0 टी0 पी0 सिंह (2010)कर्चुली "राजनैतिक समाजशास्त्र' विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, नई दिल्ली।

इकाई – 15 : राजनीतिक अभिजनः अर्थ, परिभाषा एवं विशेषताएँ

इकाई की रूपरेखा

15.0 उद्देश्य

15.1 प्रस्तावना

15.2 अभिजन की उत्पति

15.3 राजनीतिक अभिजन का अर्थ एवं परिभाषाएँ

15.4 राजनीति अभिजन की विशेषताएँ

15.5 सारांश

15.6 बोध के प्रश्न

15.7 पारिभाषिक शब्दावली

15.8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

15.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप जान सकेंगे –

- राजनीति अभिजन के अर्थ को समझ सकेंगे।
- राजनीतिक अभिजन के परिभाषाओं को समझ सकेंगे।
- राजनीतिक अभिजन के विशेषताओं की समझ विकसित होगी।

15.1 प्रस्तावना

अभी तक आपने राजनीति समाजशास्त्र में राजनीतिक प्रक्रियाओं का जानने का प्रयास किया कि किस प्रकार से राजनीतिक व्यवस्था समाज के विभिन्न प्रक्रियाओं को प्रभावित करती है। इनका प्रभाव किसी एक व्यक्ति पर नही बल्कि सम्पूर्ण समाज के गतिविधियों पर दृष्टिगोचर होता है। समाज के अन्तर्गत संचालित होने वाले परिवर्तनों को यदि सूक्ष्म तरीको से देखने का प्रयास किया जाता है तो इसके पीछे की ताकते जो कार्य करती है, उसमे कुछ लोगो का समूह ही शामिल होता है जिसके आधार पर समाज में संचालित होने वाली गतिविधियों को दिशा मिलती है एवं इसका सरोकार परोक्ष एवं अपरोक्ष रूप से निर्णय शक्ति की प्रक्रिया में भागीदारी से है। हमने सैद्धांतिक स्तर पर समानता के स्तर पर लोकतांत्रिक प्रणाली को अपनाया है। लेकिन व्यवहारिक स्तर पर परिदृश्य भिन्न नजर आते है। लोकतन्त्र में राजनैतिक कार्य विधियां या शासन संचालन का कार्य सिद्धान्ततः जनता द्वारा माना जाता है। किंतु प्रजातंत्रात्मक व्यवस्था का व्यवहार गहराई से देखने पर यह ज्ञात होता है कि जो शासन जनता का, जनता द्वारा एवं जनता के लिये होना चाहिये, वास्तव में वह इसके ठीक विपरीत नजर आता है। शासन का संचालन कुछ व्यक्ति ही करते है, जोकि समाज के उस वर्ग से अपना सरोकार रखते है जिनको कि हम अभिजन के रूप में संज्ञा प्रदान करते है और सभी प्रकार के सरकारों में शासन तन्त्र किसी न किसी रूप से 'इर्द गिर्द' रहने वाले लोगो का ही प्रभुत्व पाया जाता है। इन्ही लोगो के हाथो में शक्ति और सत्ता पायी जाती है जिसके कारण राजनीतिक व्यवस्था में इन्हें बड़ा आदर एवं सम्मान प्राप्त होता है। राजनैतिक दृष्टि से यदि इस पर देखा जाये तो हमें यह भी देखने को मिलता है कि 'इर्द गिर्द' रहने वाले लोगो के प्रभावशीलता के कारण निर्णय शक्ति भी काफी सीमा तक प्रभावित होती है। अब हमे यह समझना होगा कि अभिजन किस प्रकार से राजनीतिक एवं सामाजिक प्रक्रियाओं को संचालित करते है तथा समाज में ये अभिजन वास्तव में कौन सा वर्ग होता है।

15.2 अभिजन की उत्पत्ति (Genesis of Elite)

अभिजात वर्ग के दर्शन की झलक यूनानी दार्शनिक अरस्तू एवं प्लेटों के रचनाओं में भी कही न कही नजर आता है। प्लेटो अपनी आदर्श राज्य की अवधारणा में अभिजात वर्ग के शासन का प्रबल समर्थक दिखा है। 16वीं शताब्दी में अभिजन का प्रयोग सर्वोत्कृष्ट वस्तुओं का वर्णन प्रस्तुत करने के उद्देश्य से किया गया था। उस समय इस शब्द का प्रयोग सैनिक दस्तों या सामन्त वर्ग (Nobility) से सम्बद्व श्रेष्ठतर व्यक्तियों के लिए किया जाता था।

वास्तव में देखा जाये तो, अभिजात वर्ग की अवधारणा की उत्पत्ति समाजों के ऐतिहासिक विकास और उनकी पदानुक्रमिक संरचनाओं में गहराई से निहित है। इस अवधारणा के विचार के विकास में मुख्य बिंदु इस प्रकार हैं:

''प्राचीन सभ्यताएँ''– प्रारंभिक समाजों में, विशेष रूप से प्राचीन मिस्र, मेसोपोटामिया, ग्रीस और रोम में, पदानुक्रमिक संरचनाएँ स्वाभाविक रूप से बनीं। इन समाजों में शासक वर्ग वे थे, जिनके पास महत्वपूर्ण शक्ति और प्रभाव था। राजा, फिरौन, सम्राट और उच्च पुजारी अभिजात वर्ग के शुरुआती रूपों में से थे, जो संसाधनों को नियंत्रित करते थे, कानून बनाते थे और धार्मिक प्रथाओं को प्रभावित करते थे।

''सामंती व्यवस्थाएँ''– यूरोप में मध्य युग के दौरान, सामंती व्यवस्था ने कुलीन वर्ग और आम लोगों के बीच एक स्पष्ट विभाजन पैदा किया। कुलीन वर्ग, जिनके पास जमीन थी और जिनके अधीन जागीरदार थे, उन्हें उनकी संपत्ति, जमीन के स्वामित्व और राजनीतिक और सैन्य मामलों पर प्रभाव के कारण अभिजात वर्ग माना जाता जा सकता है।

''पुनर्जागरण और ज्ञानोदय'' जैसे–जैसे यूरोप मध्यकालीन काल से पुनर्जागरण और ज्ञानोदय की ओर बढ़ा, अभिजात वर्ग की अवधारणा का विस्तार हुआ और इसमें न केवल शासक वर्ग बल्कि बुद्धिजीवी, कलाकार और वैज्ञानिक भी शामिल हो गए। इस अवधि में प्रभावशाली विचारकों और रचनाकारों का उदय हुआ जिन्होंने संस्कृति और ज्ञान को आकार दिया।

''औद्योगिक क्रांति'' औद्योगिक क्रांति ने समाज में महत्वपूर्ण सामाजिक और आर्थिक परिवर्तनों को लाने में अपनी अहम भूमिका अदा की। उद्योगपतियों और पूंजीपतियों के उदय ने आर्थिक अभिजात वर्ग का एक नया वर्ग बनाया, जिन्होंने उद्योग और वित्त पर अपने नियंत्रण के कारण पर्याप्त शक्ति का इस्तेमाल किया। इस अवधि में आधुनिक राष्ट्र–राज्यों के गठन और शासन संरचनाओं के विकसित होने के साथ राजनीतिक अभिजात वर्ग का विकास भी देखा गया।

''आधुनिक समाजशास्त्रीय सिद्धांत'' 19वीं सदी के अंत और 20वीं सदी की शुरुआत में, विल्फ्रेडो पारेतो और गेटानो मोस्को जैसे समाजशास्त्रियों ने अभिजात वर्ग के बारे में सिद्धांतों को औपचारिक रूप देना शुरू किया। पेरेटो ने अभिजात वर्ग के परिसंचरण की अवधारणा पेश की, जिसमें सुझाव दिया गया कि अभिजात वर्ग के समूहों को लगातार नए लोगों द्वारा प्रतिस्थापित किया जा रहा है। मोस्को ने तर्क दिया कि एक शासक अल्पसंख्यक, या अभिजात वर्ग, सभी समाजों में मौजूद है, चाहे सरकार का प्रकार कुछ भी हो।

''20वीं सदी और उसके बाद'' अभिजात वर्ग का अध्ययन सी. राइट मिल्स जैसे विद्वानों के साथ विकसित होता रहा, जिन्होंने अपनी 1956 की पुस्तक 'द पावर एलीट' में संयुक्त राज्य अमेरिका में राजनीतिक, सैन्य और आर्थिक नेताओं के परस्पर जुड़े नेटवर्क की जांच की। उनके काम ने इस बात पर प्रकाश डाला कि कैसे इन अभिजात वर्ग के पास समाज पर असंगत मात्रा में शक्ति और प्रभाव था।

इस प्रकार यह स्पष्ट होता है कि अभिजात वर्ग की अवधारणा की उत्पत्ति समाज के भीतर पदानुक्रमित संरचनाएं बनाने की प्राकृतिक मानवीय प्रवृत्ति का प्रतिबिंब है, जहां कुछ व्यक्ति या समूह धन, ज्ञान और सामाजिक स्थिति जैसे विभिन्न कारकों के आधार पर महत्वपूर्ण शक्ति और प्रभाव के पदों पर पहुंचते हैं।

15.3 राजनीतिक अभिजनः अर्थ एवं परिभाषा

अभिजन के उत्पत्ति को जानने के पश्चात आईये अब राजनीतिक अभिजन के अर्थ को जानने का प्रयास किया जाये। आपको यह समझ में आ गया होगा कि अभिजनों का स्वरूप किसी न किसी रूप में संस्तरणबद्ध समाजों में प्राचीन समय से ही विद्यमान रहा है। लेकिन इसको अकादमिक जगत के आधुनिक युग में लाया गया। आक्सफोर्ड शब्दकोश में सन् 1823 में Elite शब्द को प्रयोग में लाया गया। वैसे इसके शाब्दिक अर्थ में देखा जाये तो Elite शब्द अंग्रेजी भाषा के 'Eligere' से विकसित हुआ है, जिसका अर्थ चयन द्वारा चुना गया (Selection by Choice) है। इसका शाब्दिक अर्थ है 'कुछ लोगो का चयन' किन्तु यह अर्थ संकुचित सा प्रतीत होता है, क्योंकि इसका प्रयोग नेतृत्व के रूप में किया जाता है। इसके व्यापक अर्थ को निम्नलिखित व्याख्या के आधार पर बताया गया है।

फ्रांसिस कोकर ने इस सन्दर्भ में बताया है कि ''सामान्य बहुमत हमेशा ही कुछ प्रभावशाली लोगो के अधीन होता है और ये प्रभावशाली लोग अपनी महिमा को बढ़ाने या अपने वर्ग या समूह के उद्देश्यों या हितों की रक्षा करने के लिए निमित्त काम करते है।'' इस प्रकार से सभ्य समाज के निर्माण के आरम्भ से ही व्यवस्था में सत्ता एवं शक्ति प्रत्यक्ष रूप से कुछ लोगों के हाथों में केंद्रित रही है या परोक्ष रूप से इसी

वर्ग के संकेतों पर संचालित होती रही है। एक राजनीतिक समाज में शक्तियां किसी खास वर्ग के हाथों में सिमटी होती है, शासन का स्वरूप चाहे लोकतांत्रिक हो या सर्वाधिकारवादी शक्तियों के विकेंद्रीकरण के बावजूद राजनीतिक शक्तियों का प्रयोग कर्ता व संचालन कर्ता यही होता है। अर्थात् राजनीतिक अभिजन सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था का वह श्रेष्ठ वर्ग है जिसका नियंत्रण समाज के मूल्य पर होता है। जिसके सदस्य प्रत्येक स्तर पर समाज को नेतृत्व प्रदान करने और प्रभाव डालने की स्थिति में होते हैं। व्यवस्था में इस वर्ग को सामाजिक प्रतिष्ठा एवं मान्यता दोनों प्राप्त होती है। **लासवेल** के विचार में विशिष्ट वर्ग समाज का बस समूल (Well Founded) है, जिसके पास प्रतिष्ठा (Deference) आय (Income) और सुरक्षा (Security) जैसे सामाजिक मूल्य होते हैं। प्रत्येक सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था में श्रेणीबद्ध (Hierarchy) सत्ता का अस्तित्व विद्यमान होता है जिसके तहत सत्ता व शक्ति का केन्द्रीकृत स्वरूप पदसोपान ढाँचे के अनुरूप कार्य करता है।

लोकतांत्रिक व्यवस्था में अभिजन का अर्थ किसी सामाजिक–राजनीतिक व्यवस्था के उस वर्ग से हैं जो व्यवस्था संचालन व निर्णयकारिता को प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से प्रभावित एवं नियंत्रित करता है। इस अर्थ में कई विद्वानों द्वारा राजनीतिक अभिजन को व्यवस्था के निर्णयकर्त्ता की संज्ञा प्रदान की गई है। इस रूप में राजनीतिक अभिजन का अर्थ व्यवस्था का शासक वर्ग या नीतिनिर्माण व निर्णय लेने वाले प्रभावशाली लोगों के संगठित अल्पसंख्यक समूह से है। इन अल्पलोगो के समूहों के पास समाज के विभिन्न क्षेत्रों जैसे शिक्षा, सम्पत्ति, शासन एवं संचालन पर प्रभावशाली रूप से आधिपत्य मौजूद रहता है। राजनीतिक विद्वानों एवं राजनीतिक समाजशास्त्रियों की दृष्टि से समाज का जो अल्पसंख्यक वर्ग सामाजिक जीवन की उन्नति के हित में बड़े छोटे निर्णय लेता है एवं बहुसंख्यकों पर शासन करता है वही राजनीतिक अभिजन है।

राजनैतिक अभिजन को समाजविज्ञानों में प्रयोग करने का श्रेय विल्फ्रेड परेटो एवं गिटानो मोस्को को जाता है।

विल्फ्रेडो पेरेटो ने अपनी पुस्तक Mind and Society (1935) में अभिजन को परिभाषित किया है, उनके अनुसार प्रत्येक विशिष्ट मानवीय क्रिया जैसे न्यायालय, व्यापार, कला, राजनीति आदि में अगर हम व्यक्ति की गतिविधि के क्षेत्र के सूचकों को अंक प्रदान करें तो तब जो व्यक्ति सर्वोच्च अंक प्राप्त करते हैं, तब उनका एक वर्ग बनाया जाए तो उस वर्ग को अभिजन कहा जाता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि राजनीतिक अभिजन सम्मिलित किया जा सकता है जो राजनीतिक व्यवस्था में उच्च स्थान पर आ जाते है।

मोस्को ने भी अभिजन वर्ग को परिभाषित किया है। इन्होंने अपनी पुस्तक The Ruling Class(1939) में लिखा

है कि अविकसित, अल्पविकसित, अर्धविकसित तथा विकासशील समाजों में दो प्रकार के वर्ग पाए जाते हैं। प्रथम वह है जो शासन करता है एवं दूसरा वह हैं जिन पर शासन किया जाता है। प्रथम वर्ग के लोग अल्पसंख्यक होते हुए राजनीतिक कार्यों का नियंत्रण अपने हाथों में केंद्रित करते हैं एवं सत्ता के लाभों का आनंद उठाते है जबकि दूसरा वर्ग बहुसंख्यक होते हुए भी प्रथम वर्ग द्वारा वैध तरीके से और कभी स्वेच्छाचारी एवं हिंसक तरीकों से निर्देशित एवं नियंत्रित रहता है।

हेराल्ड डी. लासवेल ने अपनी पुस्तक Politics: Who Gets,What, When and How में राजनीति अभिजन को परिभाषित करते हुए कहा है कि– राजनीतिक अभिजन राजनीतिक निकाय के सत्ताधारियों का समावेश होता है। सत्ताधारियों में वह नेतृत्व तथा सामाजिक रचना सम्मानित है जिसमें नेताओं का उदय होता है एवं जिसके प्रति किसी निश्चित अवधि तक वे उत्तरदायी होते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि वे अल्पसंख्यक जो किसी भी मूल्य को सर्वाधिक पाते हैं अभिजन कहलाते हैं, शेष सामान्य जन होते हैं।

रेमंड एरोन ने भी राजनीतिक अभिजन को परिभाषित करते हुए अपने लेख Social Structure and the Ruling Class में स्पष्ट किया है कि अभिजन मुख्यतः शासक वर्ग ही है जोकि अल्पसंख्यक होता है। रेमंड एरोन ने अभिजन एवं अन्य सामाजिक वर्गों के बीच पाए जाने वाले अंतर को स्पष्ट किया है और बौद्धिक संभ्रांत जन के प्रभावों की व्याख्या सत्ता की व्यवस्था का अभिन्न अंग मानते हुए की है।

सी. राइट मिल्स ने भी The Power Elite (1956) में स्पष्ट किया है कि अभिजन समुदाय के सर्वोत्कृष्ट लोगों का एक समूह है जो धन,शक्ति और प्रतिष्ठा में सर्वोपरि है और जो अन्य लोगों के विरोध के बावजूद भी अपनी इच्छा को आरोपित करने या थोपने में समर्थ होते है। इस प्रकार मिल्स का मानना है कि अभिजन एक शक्तिशाली समूह या व्यक्ति होता है जिसके पास धन, शक्ति और प्रतिष्ठा पाई जाती है, ये लोग शक्ति का प्रयोग करते हैं और दूसरों के न चाहते हुये भी अपनी इच्छा थोपकर कार्यों को सम्पादित करते है। इसी संदर्भ को और अधिक स्पष्ट करते हुए इन्होने यह भी कहा है कि शक्तिशाली अभिजन की रचना उन व्यक्तियों द्वारा होती है, जो अपने पदों के द्वारा सामान्य पुरूषों एवं स्त्रियों के सामान्य पर्यावरण से ऊपर उठ जाते है और वे ऐसे पदों पर आसीन है जो प्रमुख परिणामों से सम्बन्धित निर्णय ले सकता है।

राजनीतिक समाजशास्त्री **टी.बी.बोटोमोर** ने अपनी पुस्तक Elite and Society(1964) में अभिजन को परिभाषित किया है। उन्होने कहा कि– अभिजन की अवधारणा का विकास ऐतिहासिक परिस्थितियों में प्रजातन्त्र के महत्व के विरोध में विकसित हुआ है। अभिजन शक्ति का प्रयोग वस्तुतः उन प्रकार्यात्मक व्यवसायी समूह के लिये किया जाता है जिनको समाज में किसी कारण से उच्च स्थान प्राप्त होता है।

इन परिभाषित व्याख्याओं से यह स्पष्ट होता है कि अभिजन वे हैं जो समाज में सर्वोच्च संस्तरण पर

है और समुदाय में उच्च प्रस्थिति को रखते हैं, अभिजन के नाम से जाने जाते हैं। राजनीति अभिजन वे हैं जो राजनीतिक संरचना में शक्ति प्राप्त व्यक्ति होते हैं।

अंत में हम यह कह सकते हैं कि सामाजिक जीवन के किसी भी क्षेत्र को या पूरे समाज को नेतृत्व देने वाले छोटे से समूह को अभिजन कहा जा सकता है। सामान्यतः अब इनके अवधारणा को शासक वर्ग के साथ जोड़ दिया जाता है, किंतु यह पूर्ण रूप से उचित नहीं है कि क्योकि शासक वर्ग तो अभिजन का एक लघु भाग हो सकता है। हम यह भी कह सकते हैं कि अभिजन समाज का ऐसा अत्यंत छोटा सा सम्मान और प्रतिष्ठा प्राप्त एक ऐसा वर्ग है जो अपने विशिष्ट कार्यों जैसे राजनैतिक,शैक्षणिक,आर्थिक धार्मिक,सामाजिक इत्यादि में विशेष योग्यता और उपलब्धि के कारण अपने कार्यक्षेत्र में प्रभावक और निर्णायक की भूमिका अदा करते हैं।

15.4 राजनीतिक अभिजन की विशेषताएं

राजनीतिक अभिजन वर्ग की अवधारणा ऐसे लोगों के एक छोटे समूह को संदर्भित करती है, जो समाज के भीतर असंगत मात्रा में राजनीतिक शक्ति, प्रभाव और अधिकार रखते हैं। यह समूह अक्सर नीतियों, निर्णयों और राष्ट्र या समुदाय की समग्र दिशा को आकार देता है। राजनीतिक अभिजन वर्ग की कुछ सामान्य विशेषताएं इस प्रकार हैं:

1. **शक्ति का संकेन्द्रण:** राजनीतिक अभिजन वर्ग आमतौर पर महत्वपूर्ण राजनीतिक संसाधनों और निर्णय लेने के अधिकार को नियंत्रित करते हैं। वे अक्सर सरकार, राजनीतिक दलों और प्रभावशाली संगठनों में प्रमुख पदों पर रहते हैं। राजनीतिक अभिजन प्रभुता सम्पन्न होते है। इसके आधार पर वे बहुसंख्यकों पर शासन करते है। राजनीतिक अभिजन मूल रूप से सत्ताधारी वर्ग के साथ जुड़े होते है।

2. **प्रभाव और नियंत्रण:** राजनीतिक अभिजनों का नीति निर्माण, कार्यान्वयन और प्रवर्तन सहित राजनीतिक प्रक्रियाओं पर उनका पर्याप्त प्रभाव होता है। उनके निर्णयों का अक्सर समाज पर दूरगामी परिणाम किसी न किसी रूप में दृष्टिगोचर होता है। राजनीतिक अभिजन बहुसंख्यकों को अपने से पृथक रखते है, तथा उन पर नियंत्रण एवं शासन करते है।

3. **संसाधनों तक पहुँच:** राजनीतिक अभिजन वर्ग के पास अक्सर व्यापक वित्तीय, सामाजिक और सूचनात्मक संसाधनों तक पहुँच होती है। इसमें धन, प्रभावशाली संपर्कों के नेटवर्क और अंदरूनी जानकारी शामिल हो सकती है।

4. **शिक्षा और विशेषज्ञता:** कई राजनीतिक अभिजन वर्ग उच्च शिक्षित होते हैं और कानून, अर्थशास्त्र या सार्वजनिक प्रशासन जैसे क्षेत्रों में विशेष ज्ञान या विशेषज्ञता रखते हैं। यह विशेषज्ञता राजनीतिक प्रणालियों को नियंत्रित करने की उनकी क्षमता को बढ़ा सकती है।

5. **सामाजिक स्थिति और प्रतिष्ठा:** वे अक्सर उच्च सामाजिक स्थिति और प्रतिष्ठा का आनंद लेते हैं, जो उनकी शक्ति और प्रभाव को मजबूत कर सकता है। यह स्थिति पारिवारिक पृष्ठभूमि, पेशेवर उपलब्धियों या सामाजिक संबंधों से उत्पन्न हो सकती है। राजनीतिक अभिजनों को समाज में अत्यधिक सम्मान व प्रतिष्ठा प्राप्त होती है, क्योंकि ये राजनैतिक सक्रियता के नियामक तथा सभी के राजनीतिक देवता होते है।

6. **विशेष नेटवर्क:** राजनीतिक अभिजन वर्ग अक्सर विशिष्ट स्कूलों, सामाजिक क्लबों या पेशेवर संघों के माध्यम से विशेष नेटवर्क और गठबंधन बनाते हैं। ये नेटवर्क सहयोग, आपसी समर्थन और सत्ता के समान की सुविधा प्रदान करते हैं।

7. **रणनीतिक स्थिति:** वे अक्सर सरकारी एजेंसियों, विधायी निकायों, राजनीतिक दलों और प्रभावशाली विचारों के साथ प्रमुख संस्थानों के भीतर रणनीतिक रूप से तैनात होते हैं। यह स्थिति उन्हें नीति और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को आकार देने में सक्षम बनाती है।

8. **निरंतरता और उत्तराधिकार:** राजनीतिक अभिजन वर्ग अक्सर उत्तराधिकारियों को तैयार करके और वंशवादी या घनिष्ठ नेटवर्क बनाए रखकर अपने प्रभाव की निरंतरता सुनिश्चित करते हैं। इसमें परिवार के सदस्य, आश्रित या विश्वसनीय सहयोगी शामिल हो सकते हैं।

9. **सार्वजनिक धारणा प्रबंधन:** वे सार्वजनिक धारणा और मीडिया कथाओं को प्रतिबंधित करने में माहिर हैं। इसमें जनमत को आकार देने और अपनी वैधता बनाए रखने के लिए मीडिया चैनलों, जनसंपर्क रणनीतियों और प्रचार का उपयोग करना शामिल हो सकता है।

10. **परिवर्तन का प्रतिरोध:** राजनीतिक अभिजन वर्ग उन परिवर्तनों का विरोध कर सकते हैं जो उनकी शक्ति को खतरे में डालते हैं या मौजूदा व्यवस्था को बाधित करते हैं। वे यथास्थिति बनाए रखने या क्रमिक, नियंत्रित सुधारों को लागू करने के लिए अपने प्रभाव का उपयोग कर सकते हैं।

11. **वैधता और अधिकार:** वे अक्सर विभिन्न स्रोतों से वैधता प्राप्त करते हैं, जैसे लोकतांत्रिक चुनाव, कानूनी ढाँचे, पारंपरिक अधिकार या करिश्माई नेतृत्व। यह वैधता उनके अधिकार और शासन करने की क्षमता को बढ़ा सकती है। राजनीतिक अभिजनों की सत्ता वैधानिक होती है। इसी वैधता के द्वारा

इनकी राजनीतिक व्यवस्था में अत्यधिक प्रभावपूर्ण स्थिति होती है।

12. **वैश्विक संबंधः** एक तेजी से परस्पर जुड़ी दुनिया में, राजनीतिक अभिजात वर्ग के पास अक्सर वैश्विक संबंध और प्रभाव होते हैं। वे अंतरराष्ट्रीय संगठनों, मंचों और नेटवर्क में भाग ले सकते हैं, वैश्विक नीतियों और रुझानों को आकार दे सकते हैं।

ये विशेषताएँ राजनीतिक अभिजन वर्ग को समाज के भीतर अपना प्रभुत्व और नियंत्रण बनाए रखने में मदद करती हैं, जिससे उनके हितों और मूल्यों के अनुसार राजनीतिक परिदृश्य को आकार मिलता है।

15.5 सारांश

इस ईकाई में सर्वप्रथम अभिजन वर्ग के उद्भव की चर्चा करते हुये इसके अर्थ को इस प्रकार से बताया गया है। ''अभिजन वर्ग'' से तात्पर्य ऐसे चुनिंदा लोगों के समूह से है, जिनके पास समाज में काफी मात्रा में शक्ति, धन, विशेषाधिकार या प्रभाव होता है। इस समूह को अक्सर उनकी उच्च स्थिति, शिक्षा या सामाजिक पूंजी के अन्य रूपों से पहचाना जाता है। इस परिभाषा के माध्यम से इसके विशेषताओं को बताते हुये इसके अर्थ को और भी अधिक स्पष्ट रूप में बताया गया है। राजनीतिक अभिजन के बारे में यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक अभिजन राजनीतिक क्षेत्र के साथ–साथ समाज के हर क्षेत्र में हमेशा उच्च स्थान पर ही होते है। जब इन्हें सत्ता प्राप्त हो जाती है, तब इनकी शक्ति और लोकप्रियता बहुत अधिक बढ़ जाती है, तब ये अपना महत्वपूर्ण योगदान देते है। इसीलिए इनका अस्तित्व वैधता तथा स्वेच्छाचारिता दोनो पर आधारित होता है।

सामाजिक विकास की अवस्थाओं का अभिजन वर्ग की प्रकृति पर गहरा प्रभाव पड़ता है। पूंजीवादी अवस्था में अभिजन वर्ग समाजवादी अवस्था मे भिन्न होता है। जब कही पर व्यवस्थाएं बदलती हैं तो इनमें भी परिवर्तन आ जाता है। कई बार एक व्यवस्था में भी राजनीतिक अभिजन का परिभ्रमण होता रहता है और जो समूह आज विपक्ष में है वह सत्ता में आ जाता है। इस प्रकार राजनीतिक अभिजन के कई प्रकार होते है।

15.6 बोध के प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1. अभिजन का क्या अर्थ है?

2. राजनीतिक अभिजन का क्या अर्थ है?

3. राजनीतिक अभिजन की दो विशेषताओं को बताये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. ''अभिजन राजनैतिक व्यवस्था में सत्ता धारक है।'' यह परिभाषा किसके द्वारा दी गयी है?

(क) लासवेल (ख) प्लेटो (ग) अरस्तू (घ) मार्क्स

2. निम्नलिखित में कौन सी राजनीतिक अभिजन की विशेषता नही है?

(क) प्रभुता सम्पन्न (ख) खुलेपन का न होना (ग) बहुसंख्यको पर शासन (घ) कानूनी बल का प्रयोग

3. निम्नलिखित में कौन से राजनीतिक अभिजन नही है?

(क) सांसद (ख) प्रधानमंत्री (ग) विपक्ष का नेता (घ) वकील

4. आक्सफोर्ड के अंग्रेजी शब्दकोश में Elite शब्द को कब शामिल किया गया?

(क) 1823 (ख) 1824 (ग) 1620 (घ) 1789

5. निम्नलिखित में से अभिजन शब्द की विवेचना सर्वप्रथम किसने की?

(क) पारसंस (ख) विल्फ्रेड पारेटो (ग) सी.राइट मिल्स (घ) कार्ल मार्क्स

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

(क), 2. (ख), 3. (घ), 4. (क), 5. (ख)

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. अभिजन के उद्भव की विवेचना कीजिये तथा इसको परिभाषित कीजिये।

2. राजनीतिक अभिजन की व्याख्या और इसके विशेषताओं सहित विस्तारपूर्वक कीजिये।

15.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

- "Ancient Egyptian Society and Family Life," University of Chicago: Oriental Institute,

oi.uchicago.edu.

- Feudalism in Medieval Europe," Encyclopedia Britannica, britannica.com.
- "The Industrial Revolution," History.com, history.com.
- "The Renaissance: The 'Rebirth' of Science & Culture," Live Science, livescience.com.
- "The Roman Empire: Government and Politics," BBC History, bbc.co.uk.
- Bloch, Marc. "Feudal Society." University of Chicago Press, 1961
- Domhoff, G. William. "Who Rules America? The Triumph of the Corporate Rich." McGraw-Hill, 2013.
- Gay, Peter. "The Enlightenment: An Interpretation." W.W. Norton & Company, 1996.
- Hobsbawm, Eric. "Industry and Empire: The Birth of the Industrial Revolution." The New Press, 1999.
- Mills, C. Wright. "The Power Elite." Oxford University Press, 1956.
- Mosca, Gaetano. "The Ruling Class." McGraw-Hill, 1939.
- Pareto, Vilfredo. "The Mind and Society: A Treatise on General Sociology." Dover Publications, 1963.
- बघेल डी.एस.,सिंह टी.पी. : राजनीतिक समाजशास्त्र, विवेक प्रकाशन दिल्ली,2022.
- शर्मा एल.एन., मुरारी कृष्ण. : राजनीतिक समाजशास्त्र–21वी. सदी के बदलते संदर्भ में, ओरियंट ब्लैकस्वॉन 2014.

इकाई 16 : राजनीतिक अभिजन के प्रकार (बुद्धिजीवी, प्रबन्धक, नौकरशाह)

इकाई की रूपरेखा

16.0 उद्देश्य

16.1 प्रस्तावना

16.2 राजनीतिक अभिजन के प्रकार

16.3 राजनीतिक अभिजन के बुद्धिजीवी वर्ग

16.4 बुद्धिजीवी वर्ग की राजनैतिक भूमिका और महत्व

16.5 बुद्धिजीवियों की महत्वपूर्ण भूमिका

16.6 प्रबंधन/प्रबन्धक की अवधारणा

16.7 नौकरशाही का अर्थ एंव परिभाषा

16.8 नौकरशाही की विशेषताएँ

16.9 सारांश

16.10 सन्दर्भ सूची

16.0 उद्देश्य

आप इस इकाई के अध्ययन उपरान्त जान सकेंगे –

- राजनीतिक अभिजन के प्रकार को आप जान सकेंगे।
- राजनीतिक अभिजन के बुद्धिजीवी को आप समझेंगे।
- बुद्धिजीवी वर्ग की राजनैतिक भूमिका और महत्व का अध्ययन करेंगे।
- बुद्धिजीवियों की महत्वपूर्ण भूमिका को समझेंगे।
- नौकरशाही का अर्थ एंव परिभाषा को आप समझेंगे।
- नौकरशाही की विशेषताएँ का अध्ययन करेंगे।

16.1 प्रस्तावना

अभिजन वर्ग दो प्रकार के हैं लोमड़ी और शेर। लोमड़ियाँ वे हैं जो धूर्तता, छल और धोखेबाजी के गुणों के द्वारा शासन करते है। दूसरी ओर, शेर वे हैं जो सजातीयता, छोटे नौकरशाहों, स्थापित मानदंडों और केंद्रीकृत प्रक्रियाओं के माध्यम से शासन करते हैं। बुद्धिजीवी सामाजिक प्रभुत्व और राजनैतिक शासन की सहायक गतिविधियों को अंजाम देते हैं। मोस्को का तथाकाथित राजनैतिक वर्ग केवल प्रभुत्व सामाजिक समूह के लिए कार्यरत बौद्धिक संवर्ग ही है। मोस्को की राजनैतिक वर्ग की संकल्पना को पैरेटो की अभिजन की संकल्पना से सम्बद्ध कर सकते हैं। यह संकल्पना बुद्धिजीवियों की ऐतिहासिक परिघटना और राज्य तथा समाज के जीवन में उनके कार्य का व्यापार एवं प्रयास कहा जा सकता है। नौकरशाही उस व्यवस्था को कहते हैं जिसके अन्तर्गत सरकारी कार्यों का संचालन एवं निर्देशन उन व्यक्तियों के हाथों में होता है जो प्रशासन द्वारा इस कार्य के लिए नियुक्त किए जाते हैं। ये कर्मचारी विशेष प्रशिक्षण प्राप्त होते हैं। इस व्यवस्था में कार्य स्वयं ही निर्जीव मशीन की भाँति सोपान–विधि की सहायता से होता है। ये कर्मचारी जनता की अपेक्षा अपने उच्च अधिकारियों के प्रति अधिक उत्तरदायी होते हैं।

16.2 राजनीतिक अभिजन के प्रकार

राजनीतिक विज्ञान में अभिजनों के अनेक प्रकार बताये गए है। पैरेटो ने शासक अभिजन व विपक्षी अभिजन दो प्रकारों का वर्णन किया है। ऐतहिासिक दृष्टि से अभिजनों को शासक अभिजन, कुलीतनन्त्र,

शासक वर्ग, व्यूहिक अभिजन (Strategic Elites) आदि वर्गों में बांटा जाता है। टी०बी० बोटोमोर ने अभिजनों को बुद्धिजीवी, प्रबन्धकर्ता और नौकरशाही तीन वर्गों में बांटा है। विकासशील देशों के सन्दर्भ में एडवर्ड शील्स ने अभिजनों को वंश परम्परातग, क्रान्तिकारी, मध्यमवर्गीय, औपनिवेशिक प्रशासकर्ता वर्गों में विभाजित किया है। इस प्रकार अभिजनों के अनेक प्रकार हैं। लेकिन राजनीतिक अभिजनों की दृष्टि से आज अभिजनों का दोषरहित से अध्ययन किया जाता है।

1. सामान्य दृष्टिकोण से

2. आधुनिक दृष्टिकोण से।

सामान्य रूप में अभिजन तीन प्रकार के माने जाते हैं–

1. परम्परागत अभिजन

2. शाही परिवार के सदस्य

3. नवोदित अभिजन वर्ग।

आधुनिक दृष्टिकोण से पैरेटो ने अभिजनों को दो भागों में बांटा है–

1. शासकीय अभिजन

2. अशासकीय या प्रतिपक्षी अभिजन।

परम्परागत अभिजनों में विभिन्न धमों व सम्प्रदायों के मुखिया शामिल रहे हैं। इस प्रकार के अभिजन उन देशों में पाए जाते हैं जहां धर्म का ज्यादा प्रभाव है। पाकिस्तान, बंगला देश, ईरान, मोराक्को आदि देशों में इसी तरह के अभिजन हैं। शाही परिवार के सदस्य राजतन्त्रीय प्रणालियों में अभिजनों की भूमिका निभाते हैं। नेपाल, ब्रिटेन, जापान आदि देशों में ये अभिजन पाए जाते हैं। स्वतन्त्रता से पहले भारत में भी रियासतों के राजा इसी प्रकार के अभिजन वर्ग थे। लेकिन द्वितीय विश्वयुद्ध के बाद उपनिवेशवाद की समाप्ति था उससे पहले औद्योगिक क्रान्ति के कारण आए परितर्वनों व आधुनिकीकरण के दौर में जिस नए अभिजन वर्ग का उदय हुआ उसे नवीन अभिजन वर्ग कहा तजा है। नौकरशाही एक ऐसा ही अभिजन वर्ग है। आज विश्व के अधिकांश विकतिस व विकासशील देशों में इसी प्रकार के अभिजन पाए जाते हैं।

पैरेटो के विचार से आज राजनीतिक अभिजनों को शासकीय व अशासकीय दो भागों में बांटा जा सकता है। एस०ई०फाइनर भी अपनी पुस्तक में सत्ता या शासक अभिजन तथा प्रतिपक्षी या विपक्षी अभिजन

(Counter Elites) की बात किया है । वैसे तो अभिजनों के अनेक प्रकार व उप–प्रकार हैं, क्योंकि समाज के हर क्षेत्र में पाए जाते हैं और राजनीतिक भूमिकाओं का भी निष्पादन करते रहते हैं। सामान्य तौर पर राजनीतिक अभिजन वे लोग ही होते हैं जो राजनीतिक व्यवस्था के सर्वोच्च शिखर पर रहते हैं और उसकी निर्णय प्रक्रिया को प्रभातिव करते हैं। वास्तव में यह राजनीतिक अभिजन की सीमित व्याख्या है। राजनीतिक व्यवस्था में अभिजनों का एक ऐसा वर्ग भी होता है जो विपक्ष में होता है और सत्ता संभालने के लिए तैयार रहता है। लोतकन्त्र में चुनावी प्रक्रिया द्वारा इनका हेर–फेर होता रहता है। निरंकुश राजनीतिक व्यवस्थाओं में क्रान्तिकारी तरीकों से इन्हें उखाड़ फेंका जाता है और विपक्षी अभिजन उनका स्थान ले लेते हैं और गृह–युद्ध जैसी स्थिति को समाप्त कर देते हैं। विपक्षी अभिजनों का अभाव तानाशाही को जन्म देते है। इसलिए राजनीतिक व्यवस्था के विकास व स्थायित्व के लिए दोनों प्रकार के अभिजनों का होना जरूरी है।

पैरेटो के शासकीय और अशासकीय अभिजन राजनीतिक व्यवस्था के शिखर पर पहुंचे हुए वे लोग होते हैं जो विधिवत् सत्ता के धारक होते हैं और औपचारिक रूप से राजनीतिक व्यवस्था में समस्त निर्णय लेने व लागू करवाने का अधिकार रखते हैं। ये न्याय संगत बल प्रयोग का अधिकार भी रखते हैं। इनका मुख्य कार्य व्यवस्था को एक सूत्र में पिरोना व बनाए रखना है। ये जन सहमती के नाम पर ही शासन कतरे हैं और बहुसंख्यक वर्ग से अपनी अलग पहचान रखते हैं। ये किसी समय विशेष में सत्ता व नेतृत्व की भूमिकाओं के निष्पादक रहे हैं। इसके विपरीत प्रतिपक्षी या अशासकीय अभिजन ऐसा अभिजन वर्ग कहा है जो आवश्यतका पड़ने पर शासकीय अभिजनों का स्थान ले सकते है। यह वर्ग सत्ता में नहीं हो, या तो यह पहले सत्ता में रह चुका हो, या परिस्थिति होने पर सत्तारूढ़ होने की योग्यता व इच्छा रखता है। यह वर्ग भी सरकार की निर्णय प्रक्रिया को प्रभावित करता रहता है। संभावित सत्ताधारक होने के नाते इसका भी समाज व राजनीतिक व्यवस्था में महत्वपूर्ण स्थान रहा है। शासकीय अभिजन तो सत्ता में ही रहे है, जबकि अशासकीय सत्ता के इर्द–गिर्द मंडराते रहते हैं दोनों अभिजन जन समर्थन प्राप्त करने व बनाए रखने के लिए हर सम्भव कोशिश करते रहते हैं और दोनों में सत्ता प्राप्ति के लिए कठोर प्रतियोगिता व संघर्ष चलता रहता है।

16.3 राजनीतिक अभिजन के बुद्धिजीवी वर्ग

प्रबुद्धजन या बुद्धिजीवी 'Intellectuals' का हिंदी रूपांतरण है जिसका अर्थ समझ शक्ति रखना होता है। सरल अर्थ में बुद्धिजीवी का अर्थ बुद्धि से संबंधित है। मनुष्य सामाजिक प्राणी के साथ–साथ एक तर्कशील प्राणी भी होता है। ईश्वर ने मनुष्य को विकसित मस्तिष्क प्रदान किया है जो उसे संसार के जीवधारियों में श्रेष्ठतम दर्जा प्रदान करता है। जैसा की आप जानते है की संसार के सभी मानव प्राणी बुद्धिजीवी हैं उनके पास दिमाग हैं और के उसका उपयोग करते हैं। लेकिन सामाजिक कामकाज के

लिहाज से सभी बुद्धिजीवी नहीं है। बुद्धिजीवी तो वह वर्ग है जो भौतिक और सामाजिक जगत का निरंतर नवीनीकरण करता है और दुनिया की नवीन और अखण्ड अवधारणा की नींव बन जाता है। यह प्रभुत्वशाली समूह का प्रतिनिधि होता है। ग्राम्शी ने बुद्धिजीवी की परिभाषा करते हुए लिखते है कि व्यापक अर्थ में बुद्धिजीवी वे व्यक्ति हैं जो वर्गीय शक्तियों के संघर्ष के मध्यस्थता के अनिवार्य कार्य को सम्पन्न करते है। यद्यपि ग्राम्शी ने दो वर्गों के संघर्ष को समाप्त करवाने वाल बौद्धिक कुशल व्यक्ति को बुद्धिजीवी कहा है जो प्राचीन और आधुनिक समय के समाज के लिए भी प्रासंगिक है।

16.4 बुद्धिजीवी वर्ग की राजनैतिक भूमिका और महत्व

बुद्धिजीवी एक ऐसा सामाजिक समूह है जो विशेष योग्यता, क्षमता, कूटनीतिकता के आधार पर अपना बौद्धिक प्रभुत्व धारण करता है। इन्हीं विशेष गुणों,कूटनीतिकर्ता राजनैतिक जीवन के विभिन्न क्षेत्रों में बुद्धिजीवियों का महत्व और प्रभाव देखा जाता है। बुद्धिजीवी समाज व राजनीति का केंद्र बिंदु व प्रतिनिधि होता है। राजनैतिक अभिजन बुद्धिजीवी एक दूसरे के पर्यायवाची नहीं हैं। यद्यपि इन दोनों का राजनैतिक महत्व लगभग समान ही हैं बुद्धिजीवियों की राजनैतिक भूमिका या महत्व निम्नलिखित है।

1. राजनैतिक एवं संवैधानिक व्यवस्था के निर्माण में महत्व–प्रत्येक देश की राजनैतिक व्यवस्था भिन्न प्रकार की होती है। राजनैतिक व्यवस्था का स्वरूप जिस पर आज पूरे विश्व की सरकारों में इस पार्टी के अस्तित्व को देखा जा सकता है।
2. प्रबुद्धजन किसी भी देश की राजनैतिक संस्कृति के निर्माता होते हैं।
3. सरकार के निर्माण में प्रबुद्धजनों के सामूहिक प्रयास से ही देश की सरकारों का गठन किया जाता है। सरकार में इनकी निर्णयकारिता व प्रभावशीलता बनी रहती है। सरकार को गिराने में विरोधी दल के बुद्धिजीवी भूमिका होती है। सरकार में बैठे नेता, मंत्री, सांसद व नौकरशाह बुद्धिजीवी, के आदेशों का पालन जनता करती है। अतः इनके कार्यशैली का प्रभाव जनमानस पर पड़ता है।
4. राजनैतिक संघर्ष व अराजकता दूर करने में कई बार देश में राजनैतिक अब्यवस्थाएँ चरम रूप में देखी जाती हैं। इस संघर्ष से वर्ग संघर्ष पनपने का खतरा होता है। प्रजातांत्रिक मूल्यों के नष्ट होने से पूरी राजनैतिक व्यवस्था पंगु हो जाती है। जिससे राजनैतिक विकास बाधित होता है। राजनैतिक संघर्षों से मुक्ति पाने तथा देश में शांति बहाली के लिए इन बुद्धिजीवियों का अपना महत्व होता है।
5. स्वस्थ नेतृत्व में राजनैतिक व्यवस्था व विकास के लिए आवश्यक तत्व होता है। अच्छा नेतृत्व अच्छी स्थायी सरकार का निर्माण करता है। नेतृत्व क्षमता बुद्धिजीवी की एक विशेषता है। बुद्धिजीवी वर्गों में नेतृत्व के गुण, क्षमता या योग्यता पाई जाती है।

6. बुद्धिजीवियों का जनमत निर्माण एवं संचालन में जनता के विश्वास को अर्जित करना जनमत है। एक बुद्धिजीवी जनता के मतों, उनकी भावनाओं, विश्वासों को अपने पक्ष में करने की शक्ति रखता है। वर्तमान में कई बुद्धिजीवी वर्ग सक्रिय रूप से जनाधार प्राप्त करने में अपनी दक्षता प्रदर्शित करते हैं। एक स्वस्थ्य जनमत निर्माण में जाति, धर्म, भाषा, संप्रदाय को आड़े नहीं आना चाहिए। प्रायः बुद्धिजीवी इनसे परे रहकर स्वस्थ्य जनमत का निर्माण करते हैं। जनमत का संचालन भी यही बुद्धिजीवी करते हैं।
7. बुद्धिजीवियों की जनता के कल्याण में भी रुचि होती है । कहीं–कहीं देखी जाती है। गरीबी हटाओ, आदि के नारे विभिन्न पार्टी की सरकारों द्वारा दिए जाते हैं जो इस बात का द्योतक है कि बुद्धिजीवी वर्ग उपेक्षित जनता के हित की भी बात सोचते हैं। उत्पादन के क्षेत्र में बड़े–बड़े तकनीशियन, वैज्ञानिक, चिकित्सक विधिवेत्ता, शिक्षाशास्त्री आदि का जो भी योगदान होता है वह संपूर्ण समाज की भलाई के लिए किया जाता है।

16.5 बुद्धिजीवियों की महत्वपूर्ण भूमिका

- आर्थिक प्रबुद्धजनों के माध्यम से विभिन्न प्रकार के उत्पादनों में वृद्धि होती है।
- व्यक्तित्व और चरित्र के निर्माण में बुद्धिजीवियों की भूमिका होती है।
- देश को आत्मनिर्भरता प्रदान करने में सहायक होते हैं।
- राजनैतिक समाजीकरण में बुद्धिजीवियों का विशेष महत्व होता है।
- सरकार व जनता के बीच सामंजस्य स्थापित करने में मदद करते है।
- शासकों को सलाह देने का कार्य करते है।
- बौद्धिक चरित्र के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका होती है।

16.6 प्रबंधन/प्रबन्धक की अवधारणा

प्रबंधन का इतिहास बहुत पुराना है हालांकि अतीत में यह वर्तमान की तुलना में बहुत अलग था। तीसरी सहस्राब्दी ईसा पूर्व में वाणिज्यिक सौदों एवं कानूनों के बारे में जानकारी है। इससे पता चलता है कि प्राचीन समय में प्रबंधन अभ्यास मौजूद था। पुरातत्व खुदाई से यह ज्ञात होता है कि आदिम समुदाय के

काल में भी लोग संगठित समूहों में एकजुट होते थे और संयुक्त गतिविधियाँ करते थे अधिक सटीक रूप से कहें तो उनका प्रबंधन किया जाता था। प्राचीन काल में बड़े संगठनों का उदय स्पष्ट रूप से दर्शाता है कि उनके पास एक प्रबंधन संरचना थी। पिछले कुछ वर्षों में कुछ संगठनों का प्रबंधन अधिक जटिल और कठिन हो गया है और संगठन स्वयं अधिक मजबूत और अधिक स्थिर हो गए हैं। इसका एक उदाहरण रोमन साम्राज्य है जो सैकड़ों वर्षों तक अस्तित्व में रहा। जनरलों के नेतृत्व में रोमन सेनाओं के पास कमान की एक स्पष्ट संरचना थी, जिसने उन्हें यूरोप और मध्य पूर्व के शक्तिशाली राज्यों पर बड़ी जीत हासिल करने की अनुमति दी, जिनकी उड़ान, योजना और अनुशासन खराब तरीके से संगठित थे। पूरे इतिहास में संगठनों के अस्तित्व के बावजूद, 20 वीं शताब्दी तक किसी ने भी उन्हें वैज्ञानिक और व्यवस्थित रूप से प्रबंधित करने के बारे में नहीं सोचा था। फिर, विज्ञान के क्षेत्र में प्रबंधन अपेक्षाकृत नया है, अर्थशास्त्र और राजनीति विज्ञान में एक मौलिक विषय है। हालाँकि, प्रत्येक युग में विकास की विशेषताएँ और स्वामित्व संबंध अलग–अलग होते हैं, इसलिए संगठनों के प्रति दृष्टिकोण विविध रहे हैं।

प्रशासन पर विभिन्न सिद्धांतों के बीच अभिजात वर्ग के सिद्धांत की जांच करना दिलचस्प है। राजनीति विज्ञान में अभिजात वर्ग सिद्धांत एक सैद्धांतिक परिप्रेक्ष्य है जिसके अनुसार, एक समुदाय के मामलों को उसके सदस्यों के एक छोटे उपसमूह द्वारा सबसे अच्छा संभाला जाता है और आधुनिक समाजों में ऐसी व्यवस्था वास्तव में अपरिहार्य है। ये दोनों सिद्धांत वैचारिक रूप से संबद्ध हैं लेकिन तार्किक रूप से पृथक हैं और उनका प्रबंधन भी अलग.अलग रहा है। इसके विपरीत मार्क्सवाद जैसे सिद्धांत मजदूर वर्ग में सत्ता स्थापित करने की आवश्यकता को संबोधित करते हैं हालांकि विडंबना यह है कि अगर इतिहास से परामर्श किया जाए तो उस विचारधारा का पालन करने वाले देशों में भी राजनीतिक अभिजात वर्ग स्थापित हुए जो सिद्धांत को मान्य करता प्रतीत होता है।

उपरोक्त से संबंधित इस बात पर प्रकाश डालता है कि ऐसे सभी समाजों में सत्ता का नौकरशाहीकरण राजनीतिक अभिजात वर्ग के वर्चस्व को सुगम बनाता है जिसमें शीर्ष राजनेता राज्य एजेंसियों के प्रमुख व्यापारिक दिग्गज और प्रबंधक संगठित श्रम के नेता, मीडिया मुगल और परिणामी जन आंदोलनों के नेता शामिल होते हैं। इस तरह अभिजात वर्ग विभिन्न कारणों और उपायों के लिए उन आबादी को संगठित करता है जिस पर वे शासन करते हैं। फिर प्रभावी शासन राजनीतिक इच्छाशक्ति आत्मविश्वास और दूरदर्शिता से ओतप्रोत प्रतिभाशाली और कुशल नेताओं पर निर्भर करता है। अभिजात वर्ग का सिद्धांत इस बात पर ध्यान केंद्रित करता है कि किस हद तक अभिजात वर्ग इन गुणों से संपन्न है और उन कमियों पर जो राजनीतिक पतन का कारण बनती हैं और ऐसे गुणों से बेहतर तरीके से संपन्न नए अभिजात वर्ग द्वारा प्रतिस्थापन की ओर ले जाती हैं।

16.7 नौकरशाही का अर्थ एंव परिभाषा

नौकरशाही अंग्रेजी के ब्यूरोक्रेसी (Bureaucracy) का हिन्दी रूपान्तर है। ब्यूरोक्रेसी शब्द फ्रांसीसी शब्द ब्यूरो (Burcau) से बना है जिसका अर्थ है मेज या डेस्क (Desk)। मेज का वह अर्थ लिखने वाली मेज से है। इसीलिए ब्यूरोक्रेसी को फाइनर ने मेज प्रशासन कहकर सम्बोधित किया है। ब्यूरो का दूसरा अर्थ पद अथवा पदस्थान भी होता है। इससे स्वाभाविक तौर पर व्यूरोक्रेसी का अर्थ होता है अधिकारियों का शासन। अंग्रेजी के ब्यूरोक्रेसी के लिए हिन्दी में अनेक शब्दों का प्रयोग किया जाता है जैसे–नौकरशाही, सेवकतन्त्र, अधिकारी, राज्य आदि। इन शब्दों में नौकरशाही ही सबसे अधिक प्रचलित है। यहाँ जिन अर्थों में नौकरशाही की विवेचना की जाती है, वह आधुनिक विचार है।

1. **मैक्स वेबर** यह एक प्रकार का प्रशासकीय संगठन है, जिसमें विशेष योग्यता, निष्पक्षता तथा मनुष्यता का अभाव आदि लक्षण पाए जाते हैं।

2. **बनार्ड शॉ** सत्ता के उपासक उच्च पदाधिकारियों की सामन्तशाही का दूसरा नाम नौकरशाही है।

इस प्रकार, नौकरशाही शासन संगठन की श्रेणी है जिसमें कर्मवारी मशीन के पुर्जे की भाति सरचनात्मक और कार्यात्मक पहलुओ का सम्पादन करते है ।

नौकरशाही की विशेषताएँ :–

- नौकरशाही एक प्रकार की पद्धति है। इस पद्धति का निर्माण अधिकारियों द्वारा होता है। नौकरशाही की परिभाषा से भी इसकी विशेषताएँ उल्लिखित होती हैं। इन्हीं परिभाषाओं आदि को ध्यान में रखकर नौकरशाही की निम्न विशेषताओं का उल्लेख किया जा सकता है।

- एक विशिष्ट पद्धति–आदिकाल से लेकर आज तक हम देखते हैं कि शासन का संचालन करने के लिए अनेक प्रकार की पद्धतियाँ हैं । इन सभी पद्धतियों की भाँति ही नौकरशाही भी एक विशेष प्रकार की पद्धति है।

- नौकरशाही में अनेक प्रकार के सदस्यों के विशिष्ट कर्त्तव्य पदाधिकारी होते हैं। इन पदाधिकारियों की प्रमुख विशेषता यह है कि इन्हें एक विशिष्ट प्रकार के कर्तव्यों को पूरा करना पड़ता है। ये पदाधिकारी इन विशिष्ट कार्य क्षेत्रों से बाहर नहीं जाते हैं और उसी की परिधि के अन्दर चक्कर लगाते रहते हैं।

- नौकरशाही का निर्माण विभिन्न प्रकार के पद–सोपान पद्धति के अधिकारियों होते है। इन अधिकारियों की नियुक्ति की जाती है। यह नियुक्ति पद सोपान पद्धति के आधार पर होती है। इसमें सभी अधिकारियों के पद निश्चित होते हैं। कुछ अधिकारियों का पद ऊँचा होता है तो कुछ अधिकारियों का पद नीचा होता है।

- कागजी कार्यवाही इस कागजी कार्यवाही को कागजी घोड़ा दौड़ानी भी कहा जाता है । इसका सीधा अर्थ यह है कि यथार्थ रूप में काम न होकर काम फाइलें। होता है और फाइलें एक टैबल से दूसरी टेबल पर घूमती रहती हैं। इसका प्रमुख तो यह है कि कर्मचारी लगन, उत्साह और जिम्मेदारी से काम नहीं करते हैं।

- व्यवस्थित अभिलेख नौकरशाही की प्रमुख विशेषता यह है कि इसमें फाइले कागजों, अभिलेखों, लिखा–पढ़ी आदि को महत्त्व प्रदान किया जाता है। पदाधिकारी को अभिलेखों और दस्तावेजों पर निर्भर रहना पड़ता है। इन दस्तावेजों और अभिलेखों के अभाव में पदाधिकारी काम नहीं कर सकते हैं। अभिलेखों को फाइलों में बड़े सुरक्षित और वैज्ञानिक ढंग से रखा जाता है।

- नौकरशाही में उन्हीं व्यक्तियों को स्थान दिया जाता है जो कार्य–कुशल और मेधावी होते हैं। पदाधिकारियों में इतनी कुशलत होनी चाहिए कि वे अपना काम तो व्यवस्थित तरीकों से करें ही साथ ही अपने अधीन पदाधिकारियों के कार्यों पर नियंत्रण रख सकें एवं निरीक्षण करते रहें।

16.8 सारांश

राजनीतिक अभिजन प्रबल राजनीतिक प्रभावयुक्त राजनेताओं की सामूहिकता का नाम है। ये किसी समुदाय के लघु अल्पसंख्यक होते हैं जो महत्वपूर्ण राजनीतिक पदों, प्रभावशाली सामाजिक वर्गों या प्रजातियों की सदस्यता, आर्थिक या सामाजिक समूह में अपनी समाज शैक्षणिक पृष्ठभूमि, आदि के आधार पर राजनीतिक क्षेत्रों में प्रबल प्रभाव रखते हैं। इनके पास बडी मात्रा में राजनीतिक साधन होते हैं जिनका प्रयोग वे वांछित राजनीतिक परिणामों को प्राप्त करने के लिए करते हैं। ये राजनीतिक साधन नेतृत्व, कौशल, राजनीतिक पद और विशेष राजनीतिक सूचनाओं की प्राप्ति, आदि के रूप में हो सकते हैं। सत्तारूढ़ राजनेताओं के पास औचित्यपूर्ण सत्ता, दण्ड एवं पुरस्कार, सम्मान, दल, मित्र, शास्तियां आदि अनेक साधन होते हैं। वे राजनीतिक सामग्री जैसे धन और कर्मचारीगण, आदि के माध्यम से स्वरूपक्ष, आदि में बहुमत को प्राप्त कर सकते हैं। अभिजन की धारणा का कुछ और विस्तार से प्रतिपादन टी.बी. बॉटोगोर के द्वारा किया गया है। बॉटोमोर के अनुसार अभिजन या शासक वर्ग की अवधारणा ऐतिहासिक परिस्थितियों में सामन्तवाद

के अन्त तथा आधुनिक पूँजीवाद के प्रारम्भ की देन है। उस समय से ही यह वर्ग समाज की अधिकांश सम्पत्ति तथा राष्ट्रीय आय के बड़े भाग का प्राप्तकर्ता एवं स्वामी बन बैठा है। इन आर्थिक लाभों को बनाये रखने के लिए वह एक विशिष्ट संस्कृति तथा जीवन दर्शन के निर्माण में भी सफल हो गया है।

राजनीतिक अभिजन में निरन्तर परिवर्तन होता रहता है। और यही बात राजनीतिक अभिजन को कुलीनतन्त्र एवं वर्गतन्त्र से अलग कर देती है। कुलीनतन्त्र या वर्गतन्त्र अरस्तू की इस मान्यता पर आधारित है कि जन्म की घडी से ही कुछ लोग शासक होने के लिए और अन्य शासित होने के लिए निश्चित होते हैं। लेकिन अभिजन की धारणा का मूल विचार यह है कि अभिजन की स्थिति को योग्यता के आधार पर किसी के भी द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

16.9 बोध प्रश्न

लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सभी मनुष्य बुद्धिजीवी हैं, लेकिन सभी मनुष्य समाज में बुद्धिजीवियों का काम नहीं करते। यह कथन किस विद्वान का है–

   (अ) मुसोलनी (ब) मोस्को (स) ए, ग्राम्शी (द) मिचेल्स

2. मोस्को का बौद्धिक संवर्ग किसे कहेंगे–

   (अ) राजनैतिक वर्ग (ब) तकनीशियनों का वर्ग (स) सामाजिक वर्ग (द) उत्पादक वर्ग।

3. सत्ता के उपासक उच्च पदाधिकारियों की सामन्तशाही का दूसरा नाम नौकरशाही है।

   (अ) मैक्स वेबर (ब) लास्की (स) ग्लैडन (द) बनार्ड शॉ

बोध प्रश्न का उत्तर

1 (स) 2 (अ) 3 (द)

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. राजनीतिक अभिजन के प्रकार की विस्तृत व्यख्या कीजिये ।

2. बुद्धिजन किसे कहते हैं? बुद्धिजीवियों के प्रकारों की विवेचना कीजिए।

3. बुद्धिजीवी की राजनैतिक भूमिका या महत्व को समझाइए।

4. नौकरशाही क्या है? इसकी विशेषताओं का वर्णन कीजिए।

5. नौकरशाही को परिभाषित कीजिए तथा इसके प्रकारों को समझाइए।

16.10 सन्दर्भ सूची

- https://www.scribd.com/document
- Edward Shils Influence and Withdrawal: The Intellectuals in Indian Political Development in Political Decision Making,
- Dr. B.L. Fadia & Dr. Pukhraj Jain, Modedj nsrs Political Theory,
- H.D. Lasswell in Lasswell and Leadj nsrser edited "World Revolutionary Elites, Studies in coercive Ideological Movement.
- अंतोनियो ग्राम्शी, सांस्कृतिक और राजनैतिक चिंतन के बुनियादी सरोकार, शिल्पी ग्रन्थ अकादमीय दिल्ली 2002
- डॉ0 राधिका देवी राजनीति में अभिजन या विषिष्ट वर्ग की अवधारणा (IJHSSI) 2020
- डॉ0 डी0 एस0 बघेल डॉ0 टी0 पी0 सिंह कर्चुली " राजनैतिक समाजशास्त्र' विवेक प्रकाशन जवाहर नगर, नई दिल्ली 2010

इकाई 17 : राजनीतिक अभिजन के सिद्धान्त एवं उनकी आलोचनायें

इकाई की रुपरेखा

17.0 उद्देश्य

17.1 प्रस्तावना

17.2 राजनीतिक अभिजनों का सिद्धांत

17.3 गिटानो मोस्को का अभिजन सिद्धान्त

17.3.1 शासक वर्ग

17.3.2 शासित वर्ग

17.4 पैरेटो का अभिजन सिद्धान्त

17.4.1 तार्किक क्रियाएँ

17.4.2 अतार्किक क्रियाएँ

(a) अवशेष

(b) भ्रान्त तर्क

17.5 सी. राइट मिल्स का अभिजन सिद्धान्त

17.6 मिचेल्स का अभिजन सिद्धान्त

17.7 अभिजन सिद्धान्त की आलोचनाएँ

17.8 सारांश

17.9 बोध प्रश्न

17.10 सन्दर्भ सूची

17.0 उद्देश्य

आप इस इकाई मे विभिन्न समाजशास्त्रियों द्वारा प्रतिपादित राजनीतिक अभिजनों का सिद्धांत का अध्ययन उपरान्त आप जान सकेंगे।

1. आप राजनीतिक अभिजनों के सिद्धांतों का अध्ययन करेगें।
2. गिटानो मोस्को का अभिजन सिद्धान्त का अध्ययन करेंगें।
3. पैरेटो का अभिजन सिद्धान्त का अध्ययन करेगें।
4. सी. राइट मिल्स का अभिजन सिद्धान्त का अध्ययन करेगें।
5. मिचेल्स का अभिजन सिद्धान्त का अध्ययन करेगें।
6. अभिजन सिद्धान्त की आलोचनाएँ का अध्ययन करेगें।

17.1 प्रस्तावना

अभिजात वर्ग का सिद्धांत समाजशास्त्र, राजनीति विज्ञान और दर्शन के भीतर एक सिद्धांत है जो इस विचार को प्रस्तुत करता है कि समाज में सत्ता कुछ ही व्यक्तियों के पास होती है। माना जाता है कि ये अभिजात वर्ग उच्च वर्गों से आते हैं और अक्सर दूसरों की तुलना में अधिक संसाधनों तक उनकी पहुँच होती है। अभिजात वर्ग के सिद्धांतकारों का तर्क है कि इन व्यक्तियों का सामाजिक, आर्थिक एवं राजनीतिक तथा मीडिया जैसे प्रमुख निर्णय लेने वाले क्षेत्रों पर नियंत्रण होता है। हालाँकि अभिजात वर्ग के इस सिद्धांत को विभिन्न सामाजिक और शासन संरचनाओं पर लागू किया जा सकता है, लेकिन इसका उपयोग अक्सर अभिजात वर्ग और आधुनिक लोकतांत्रिक समाजों के बीच संबंधों को समझाने के लिए किया जाता है। यह सुझाव देता है कि विभिन्न क्षेत्रों जैसे वित्त, राजनीति, रक्षा विज्ञान, व्यवसाय में अपने–अपने डोमेन के शीर्ष पर मौजूद व्यक्ति मिलकर शक्ति और प्रभाव का एक ताना–बाना बनाते हैं। दूसरे शब्दों में आभिजात वर्ग आपस में जुड़े हुए निदेशालयों का एक समूह बनाते हैं जो व्यक्तियों का एक नेटवर्क है जो सामाजिक और आर्थिक प्रणालियों की एक विस्तृत जनसमूह को नियंत्रित करते है।

17.2 राजनीतिक अभिजनों का सिद्धांत

राजनीतिक अभिजन वर्ग का सिद्धांत राजनीति विज्ञान का बहुत महत्वपूर्ण सिद्धांत है। इस सिद्धांत के बीज प्लेटो और अरस्तु के दर्शन में भी मितले हैं। लेकिन इस सिद्धांत को वैज्ञानिक रूप देने का सर्वप्रथम प्रयास लॉसवेल ने किया। 1950 के दशक में अमेरिका में इस सिद्धांत को व्यापक आधार प्रदान करने के लिए शुम्पीटर, लॉसवेल, सी० राइट मिल्स द्वारा प्रयास किए गए। इसके बाद पैरेटो, मोस्को, मिथेल्स और गैसेट ने इसे सुनिश्चित आधार प्रदान किया। इन विचारकों ने इस सिद्धांत के आधार पर राजनीतिक व्यवस्थाओं की प्रकृति, उनकी कार्य क्षमता, उनके परितर्वन, विकास और पतन को समझने का प्रयत्न किया गया था। अरस्तु और प्लेटों भी शासकीय श्रेष्ठता के सिद्धांत में विश्वास करते हैं। इस सिद्धांत की मूल मान्यता यह है कि शासन करने के गुण या क्षतमा थोड़े से व्यक्तियों में ही है और शेष जनमानस शामिल होने के लिए ही जन्म लेते है।

पैरेटो, मोस्को और मिचेल्स का मानना है कि प्रत्येक समाज का शासन ऐसे अल्पसंख्यक वर्ग के हाथों में रहा है जिसके पास सम्पूर्ण सामाजिक और राजनीतिक सत्ता पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लेने के आवश्यक गुण होते है। अपने इन्हीं गुणों के कारण यह वर्ग अन्य वर्गों से शीर्ष स्थान पर पहुंचते है। यह वर्ग जोड़–तोड़ में निपुण होने के कारण राजनीति में अपना स्थान बना लेते है और राजनीतिक व्यवस्था को खुला रखते है ताकि अन्य अभिजन भी इसमें प्रवेश पा सकें। अभिजन वर्ग अपनी असाधारण योग्यता, अनोखी सूझ–बूझ, कार्यकुशतला या प्रबन्ध–क्षमता के बल पर सम्पूर्ण संगठन में प्रभावशाली स्थान प्राप्त कर लेते है और उसे अपनी इच्छा या योजना के अनुसार संचातिल करते है। इसके विपरीत बहुसंख्यक वर्ग में नेतृत्व के गुण और उत्तरदायित्व की भावना का सिद्धांत अभाव होने के कारण वे इस अल्पसंख्यक अभिजन वर्ग के निर्देशों में चलने में ही अपना हित समतझे हैं।

राजनैतिक अभिजन के सिद्धान्त को विभिन्न विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। यहाँ हम कुछ प्रमुख विचारकों के विचारों का उल्लेख करेंगे

17.3 गिटानो मोस्को का अभिजन सिद्धान्त (Gactano Mosca's Theory of Elite)

इटली के महान विचारक गिटानों मोस्को ने अपने इस महान सिद्धान्त का प्रतिपादन अपनी कृति 'दि रूलिंग क्लास' में विस्तृत रूप से किया है। मोस्को ने यह माना है कि सम्पूर्ण राजनैतिक संगठन में दो प्रकार के व्यक्ति पाए जाते हैं। एक शासक वर्ग और दूसरा शासित वर्ग। अपने सिद्धान्त में इन्होंने इन दोनों में अन्तर को प्रतिपादित करने का भी प्रयास किया है। मोस्को ने जिन दो सामाजिक वर्गों का उल्लेख किया है, वे निम्न हैं

(1) शासक वर्ग (Ruling Class)

यह एक अल्पसंख्यक वर्ग है जो बहुसंख्यकों पर शासन करता है। यह वर्ग अपनी विशेष योग्यता और क्षमता के कारण अन्यों पर शासन करता है एवं नियंत्रण स्थापित करता है। यह राजनैतिक व्यवस्था के सर्वोच्च शिखर के व्यक्तियों का वर्ग होता है जिनका शक्ति और साधनों पर एकाधिकार होता है। यह राजनैतिक निर्णयकारिता को संचालित करते हैं तथा शासकीय कार्यों का निष्पादन करते हैं। इन्हीं शासक वर्गों के पास सम्पूर्ण शक्ति व सत्ता केन्द्रित रहती है। बहुसंख्यक शासित वर्ग इन्हीं शक्ति या सत्ता के द्वारा निर्देशित व आदेशित होती हैं तथा शासक वर्ग के निर्णयों को मानती हैं। शासक वर्ग को शासकीय अभिजन के नाम से भी जानते हैं।

(2) शासित वर्ग (Ruled Class)

यह राजनैतिक संगठन का वह बहुसंख्यक वर्ग होता है जिसके पास राजनैतिक शक्ति व सत्ता का अभाव होता है तथा यह हमेशा शासकों द्वारा निर्देशित व नियंत्रित होता रहता है। जैसा कि मोस्को ने भी कहा है कि शासित वर्ग वह बहुसंख्यक वर्ग है जो शासक वर्ग द्वारा निर्देशित व नियंत्रित होता है। मोस्को के अनुसार यह बहुसंख्यक वर्ग सदैव शासित इसलिए होता है कि इसके पास संगठन, एकता व विशेष योग्यता की कमी बराबर बनी रहती है। फलस्वरूप वे किसी निर्णय एकमत नहीं हो सकते। पर एक अल्पसंख्यक वर्ग बहुसंख्यक वर्ग पर शासन करने में कैसे सफल हो जाता है, इसका कारण बताते हुए मोस्को ने लिखा है कि अल्पसंख्यक वर्ग संगठित होता है जबकि बहुसंख्यक वर्ग का प्रत्येक व्यक्ति उसके सामने अकेला होता है।यह बात सर्वविदित है कि अल्पसंख्यक वर्ग में प्रायः श्रेष्ठ व्यक्तियों की बहुलता होती है। मोस्को के विचार को प्रो. एस. सी. बर्मा ने अपने शब्दों में व्यक्त करते हुए लिखा है कि मोस्को ने अपने इस सिद्धान्त में उप–अभिजन की कल्पना भी दी है। उप–अभिजन का तात्पर्य लोक सेवकों औद्योगिक व्यवस्थापकों, वैज्ञानिकों और विद्वानों के मध्यम नये वर्ग से है और जिसे उसने समाज के प्रशासन का एक आवश्यक तत्व बताया। इसके सम्बन्ध में उसने लिखा है, किसी भी राजनैतिक अवयव का स्थायित्व नैतिकता, कुशाग्र बुद्धि और कार्यकुशलता के उस स्तर पर निर्भर करता है जिसे समाज का यह दूसरा स्तर प्राप्त कर चुका होता है। मोस्को अपने राजनैतिक फार्मूला पर जोर देते हुए कहता है कि प्रत्येक समाज में शासक वर्ग अपने को सत्ता में बनाए रखने के लिए एक नैतिक और कानूनी आधार खोज निकालने का प्रयत्न करता है और उन्हें उन सिद्धान्तों और विश्वासों के सामान्य रूप से मान्यता प्राप्त और स्वीकृत हैं, तर्कसम्मत और आवश्यक परिणाम के रूप में प्रस्तुत करता है। मोस्को ने यह स्वीकार किया है कि शासक वर्गों में भी परिवर्तन होता है। परिवर्तन उनके अपने ही सदस्यों के मध्य होता है। अतः यह परिभ्रमण शासक

वर्ग में ही होता है। शासक वर्ग की सबसे बड़ी विशेषता आदेश देने की प्रवृत्ति तथा राजनैतिक नियंत्रण के प्रयोग की होती है ।

जब शासक वर्ग में आदेश देने की ओर राजनैतिक नियंत्रण की शक्ति घटने लगती है तब शासक वर्ग के बाहर के लोग बड़ी संख्या में इन अभिवृत्तियों का विकास कर लेते हैं। फलस्वरूप पुराने शासक वर्ग की पदच्युति और उसके स्थान पर नए शासक वर्ग को स्थापना अनिवार्य हो जाती हैं। मोस्को मानता है कि यह एक प्रकार का नियम है कि काफी समय तक शासन कर लेने के बाद शासक वर्ग या तो जन साधारण को आवश्यक सुविधाएँ प्रदान करने में समर्थ हो जाता है अथवा वे सुविधाएँ जो वह उन्हें देता है, उनकी दृष्टि में महत्त्वहीन हो जाती है अथवा एक नए धर्म का उत्थान होता है अथवा समाज को प्रभावित करने वाली सामाजिक शक्तियों में इसी प्रकार का कोई परिवर्तन होता है और ऐसी स्थिति में सत्ता का परिवर्तन अनिवार्य हो जाता है। मोस्को ने सामाजिक परिस्थिति और व्यक्तिगत गुणों में होने वाले परिवर्तनों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने की चेष्टा की है। उसने यह स्वीकार किया है कि समाज में नए हित और नए आदशों का निरूपण होता है, नई समस्याएँ आती हैं और इन सबके परिणामस्वरूप अभिजन वर्गों के बीच प्रत्यावर्तन (Circulation) की प्रक्रिया तेज हो जाती है। मोस्को गतिशील समाज को महत्त्व देता है और शासक और शासितों के मध्य समझौतावादी विचार को अनुकूल मानता है। उसने शासक अभिजनों को यह सलाह भी दी है कि वे जनमत में होने वाले परिवर्तनों को ध्यान में रखते हुए राजनैतिक व्यवस्था को धीरे–धीरे उन परिवर्तनों के समकक्ष लाने का प्रयत्न करते है।

1 अभ्यास प्रश्न कीजिये

शासित वर्ग (Ruled Class) किसे कहते है? व्यख्या कीजिये।

17.4 पैरेटो का अभिजन सिद्धान्त (Pareto's Theory of Elites)

बिल फ्रेडो पैरेटो ने अभिजन सिद्धान्त का प्रतिपादन अपनी महान कृति 'माइन्ड एंड सोसायटी' में प्रतिपादित किया है। पैरेटो के अनुसार समाज एक प्रक्रिया है और इसमें सत्ता परिवर्तन होते रहते हैं। पैरेटो ने यह कहा है कि प्रत्येक समाज में उच्च और निम्न वर्ग में परिवर्तन होता रहता है। जब उच्च वर्ग में रिक्तता आती है, तो निम्न वर्ग इस रिक्तता को पूर्ण करते हैं और इस प्रकार उच्च वर्ग की रिक्तता को निम्न के योग्य व्यक्ति पूरा करते हैं। पैरेटो ने यह माना है कि इस प्रकार की प्रक्रिया समाज में निरन्तर चलती रहती है। पैरेटो इसी प्रक्रिया को अभिजात वर्ग का परिभ्रमण कहकर सम्बोधित करते हैं।

(1) तार्किक क्रियाएँ (Logical Action)

पैरेटो के अनुसार हम उन क्रियाओं को तार्किक क्रिया का नाम देते हैं जो तर्क युक्त रीति से साध्यों के साथ सम्बन्धित हैं केवल उस कर्ता की दृष्टि से नहीं, जो प्रक्रिया सम्पन्न करता है। बल्कि उनकी दृष्टि से भी जो अधिक ज्ञान रखते हैं। तार्किक क्रियाओं की निम्न विशेषताएँ होती हैं–

- तार्किक क्रियाएँ वे हैं,जो साधन और साध्य में सामंजस्य स्थापित करती हैं।
- तार्किक क्रियाओं का आधार तर्क, बुद्धि और अनुभव होता है।
- तार्किक क्रियाओं की वास्तविकता प्रमाणित की जा सकती है।
- तार्किक क्रियाएँ यथार्थ घटनाओं और तथ्यों पर आधारित होती हैं।

तार्किक क्रियाएँ वैषयिक और यथार्थ होती हैं, इसलिए इन क्रियाओं का अवलोकन और इन पर प्रयोग किया जा सकता है। इस प्रकार तार्किक क्रियाओं से पैरेटो का अर्थ ऐसी क्रियाओं से है जो प्रायः उद्देश्यों की पूर्ति के लिए किए जाते हैं और जिनके लिए ऐसे साधनों का प्रयोग होता है, जो उन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपयुक्त हो।

2 अभ्यास प्रश्न कीजिये

पैरेटो के तार्किक क्रियाएँ की कुछ विशेषता लिखिए (Logical Action)

---

(2) अतार्किक क्रियाएँ (Non&Logical Action)

अतार्किक क्रियाएँ वे हैं जो तर्क और बुद्धि पर आधारित नहीं होती हैं। अतार्किक क्रियाएँ वास्तविकता और अनुभव से शून्य होती हैं। इन्हें अविवेकी क्रियाएँ भी कहा जाता है। यदि हम गंभीरता से मालूम करें तो पता चलता है कि हमारे जीवन व्यवहार में अनेकों क्रियाएँ तर्क विहीन होती है। यद्यपि सामाजिक जीवन में इनका महत्त्व होता है। जिन्हें किसी निश्चित उद्देश्य के लिए ऐसे साधनों में प्रयोग किया जाता है। अतार्किक क्रियाओं की परिभाषा करते हुए पैरेटो ने लिखा है कि अतार्किक क्रियाएँ वे क्रियाएँ हैं, जो किसी वास्तविक उद्देश्य से निर्धारित नहीं होती हैं बल्कि किसी ऐसी प्रेरक शक्ति द्वारा निर्धारित होती हैं जिसकी विस्तृत व्याख्या की जा सकती। पैरेटो ने जिन अतार्किक तत्वों की विवेचना की है वे निम्नलिखित हैं–

(a) अवशेष (Residues)

मानव व्यवहार का जो स्थिर पक्ष है, पैरेटो के अनुसार वही अवशेष व विशिष्ट चालक है। पैरेटो ने आगे कहा है कि जो घटनाएँ तर्क पर आधारित नहीं हैं, उनका आधार अवशेष है। सामाजिक प्राणी होने के नाते व्यक्ति जो भी कार्य करता है, वे सभी तर्क पर आधारित नहीं होते हैं। अपनी पुस्तक में पैरेटो ने लिखा है कि साधारण व्यक्ति ही नहीं, अपितु बड़े–बड़े राजनीतिज्ञ और बौद्धिक व्यक्ति भी भावनाओं के अधीन होकर अनेक क्रियाओं का सम्पादन करते हैं। इस प्रकार क्रियाओं के पीछे जो प्रेरणा रहती है, पैरेटो ने उसे ही अवशेष कहा है। अवशेष की परिभाषा करते हुए पैरेटो ने लिखा है कि जिस प्रकार थर्मामीटर में पारे का चढ़ना ताप के बढ़ने की अभिव्यक्ति है, उसी प्रकार अवशेष मूल प्रवृत्तियों और भावनाओं को अभिव्यक्ति है। अवशेषों से तात्पर्य उन गुणों से है जिनके द्वारा मनुष्य जीवन में ऊँचा उठ सकता है।

(b) भ्रान्त तर्क (Derivations)

जब व्यक्ति अतार्किक बातों को तर्क के आधार पर सिद्ध करना चाहता है तो इसके लिए उसे अनेक प्रकार के उपाय करने पड़ते हैं। बह ऐसा प्रयास करता है कि जो कुछ भी वह कर रहा है वह तर्क पर आश्रित है। यह सिद्ध करने के लिए व्यक्ति को जो प्रयास करने पड़ते हैं, पैरेटो ने इन्हीं प्रयासों को भ्रान्त–तर्क या प्रत्युत्पाद कहा है। इन भ्रान्त–तकों का काम अवशेषों को तर्कसम्मत दिखाना होता है। ये ऐसे तर्क होते हैं जो बुद्धि पर आश्रित न होकर भ्रम पर आश्रित होते हैं। व्यक्ति में कुछ ऐसी मूल प्रवृत्ति पाई जाती है जो उसकी आदत बन जाती है। वह जो कुछ भी करता है उसे किसी न किसी प्रकार तर्क देकर सही सिद्ध करे, इसके लिए व्यक्ति स्वभाव, परिस्थितियों और आवश्यकताओं के अनुसार अनेक प्रकार के तर्क प्रस्तुत करता है। मार्टिण्डेल ने भ्रान्त–तर्क की परिभाषा करते हुए यह कहा है कि ष्भ्रान्त–तर्क वे तरीके हैं

जिनके द्वारा मनुष्य अपने कार्यों की पाखंडपूर्ण व्याख्या करते हैं। पैरेटो ने अभिजनों के बल प्रयोग को न्यायोचित अथवा विवेक सम्मत ठहराने के लिए ही भ्रन्त–तकों की विवेचना की है। इन्हीं भ्रान्तों के आधार पर अभिजन जनता को छल–बल के आधार पर गुमराह करते हैं तथा जनता से मीठे मोठे वायदे करते हैं तथा जनता के सामने वे सम्मानित व प्रभावकारी दिखते हैं।

पैरेटो ने (शासक और शासितों) अभिजात और अनाभिजातों में समय–समय पर अदला–बदली (परिभ्रमण) होते रहने को आवश्यक भी माना है। उसने लिखा है कि क्रान्तियाँ तभी आती है जब या तो परिभ्रमण की प्रक्रिया धीमी पड़ जाए या अभिजनों के उन अवशेषों से वंचित हो जाने के कारण जिनके द्वारा वे अपने को शक्ति में रख सकते थे या बल प्रयोग करने में उनकी आनाकानी के कारण, समाज के उच्च स्तरों पर (अभिजन वर्ग में) बहुत अधिक जमाव हो जाता है। इसीलिए समाज के निम्न वर्गों में ऊँचे गुणों से सम्पन्न ऐसे लोग सामने आने लगते हैं जिनमें शासन के प्रकार्यों को पूरा करने के आवश्यक अवशेष पर्याप्त मात्रा में पाए जाते हैं और जिन्हें बल प्रयोग में संकोच नहीं होता है।

17.5 सी0 राइट मिल्स का अभिजन सिद्धान्त (C.Wight Mills Theory of Elites)

सी0 राइट मिल्स पश्चिमी समाजों में इस सिद्धान्त को समान्तर रूप से सटीक व सही निरूपित करते हुए लिखते हैं कि उद्योगों के प्रमुख संचालक और समाज के अत्यधिक समृद्ध वर्ग दो भिन्न सामाजिक समूह नहीं हैं जिन्हें एक दूसरे से स्पष्ट रूप में अलग किया जा सके। सम्पत्ति और सुविधाओं की दुनिया में वे एक–दूसरे के साथ घुल–मिल गए हैं। उसने आंकड़ों व तथ्यों के आधार पर यह बताने का प्रयास किया है कि प्रमुख अधिशासियों अथवा प्रबन्धकों की नियुक्ति समाज के उन्हीं उच्चतम और उच्चतर मध्यम वगों में से होती है जिनमें उद्योगपतियों का उद्‌भव होता है। इस सामग्री के आधार पर मिल्स ने यह स्थापित करने का प्रयत्न किया कि उच्च प्रबन्धक और उद्योगपति दोनों ठोस सामाजिक समूह के रूप में एक–दूसरे के साथ सम्बद्ध हैं और इस वर्ग को मिल्स ने शक्ति अभिजन का नाम दिया है ।

17.6 मिचेल्स का अभिजन सिद्धान्त (Mitchel's Theory of Elites)

मिचेल्स के अभिजन सिद्धान्त को कुलीन तंत्र का लौह नियम के नाम से भी जाना जाता है। मिचेल्स का यह इस क्षेत्र में नया विचार है जिसे स्वल्प–तंत्र का नियम कहा गया है। इस सम्बन्ध में उनका कहना है कि मनुष्यों के प्रत्येक संगठन में जो निश्चित उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए प्रयत्नशील हैं, अन्तरवर्ती स्वल्पतांत्रिक प्रवृत्ति मौजूद रहती हैं। इससे मनुष्यों के बहुमत के लिए, गुलामी की अपनी शाश्वत मनोवृत्ति के कारण, एक अल्पसंख्यक वर्ग के प्रभुत्व को मानना उसकी अपनी पूर्व नियति बन जाती है।

सामाजिक जीवन के सभी रूपों में नेतृत्व एक आवश्यकता है। सभी व्यबस्थाओं और सभ्यताओं में कुलीनतंत्र की विशेषताओं का प्रदर्शन होता है। इस प्रकार सरल अर्थ में हम कह सकते हैं कि मिचेल्स के अनुसार कुछ मनुष्य स्वभावतः अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति स्वयं नहीं कर सकते, तब वे किसी नेतृत्व क्षमता प्रधान व्यक्ति को अपना नेता या अभिजन खोजते हैं क्योंकि वह भले ही बहुसंख्यक वर्ग के सदस्य हों वे राजनैतिक क्रिया व गतिविधि आदि के प्रति अनभिज्ञ या उदासीन रहते हैं। मिचेल्स ने यह भी माना है कि समाज में दो तरह के लोग स्वाभाविक रूप में पाए जाते हैं–

(a) उदासीन, आलसी और गुलाम प्रवृत्ति वाले लोग

(b) क्रियाशील, शासक प्रधान व्यक्ति

उदासीन, आलसी और गुलाम वाले लोग शासन में स्थायी रूप से भाग लेने में असमर्थ रहते हैं। समय–समय पर यदि उनकी प्रशंसा कर दी जाए तो वे सन्तुष्ट रहते हैं और शक्ति व शासक व्यक्ति के सामने सदैव विनयी व आज्ञाकारी बन जाते हैं। यह पक्की बात है कि नेता या सत्ताधारक अपने आपको सत्ता में बनाए रखने के लिए गुलाम वाली जनता जनार्दन की इस प्रवृत्ति का लाभ ऐसी जनता को मूर्ख बनाने के लिए शासक वर्ग कई तरह के साधनों का प्रयोग करते हैं। ये नेता एक बार जब शक्ति के शिखर पर पहुँच जाते हैं तो कोई भी उन्हें उनके स्थान से हटा नहीं सकता। नेताओं के प्रभुत्व को नियंत्रित करने के लिए यदि कानून बनाए जाते हैं तो धीरे–धीरे वे कानून कमजोर पड़ जाते हैं। परन्तु नेताओं के प्रभुत्व में किसी प्रकार की कमी नहीं आती। यही कुलीन तंत्र का लौह नियम है। यदि किसी कानून के द्वारा अथवा जन क्रान्ति के द्वारा सत्ताधारक या शासक प्रवृत्ति प्रधान व्यक्ति को सत्ता से पदच्युत कर भी दिया जाता है तो वे थोड़े समय बाद पुनः सत्ता या प्रभुता को प्रयास कर उस पर अधिकार जमा लेते हैं। साधारण उदासीन जनता इनसे इतनी डरी व भयभीत रहती है कि इनको ही अपना सब कुछ मानती है।

17.7 अभिजन सिद्धान्त की आलोचनाएँ (Criticism of Theory of Elites)

अभिजन सिद्धान्तों को अनेक विद्वानों द्वारा प्रस्तुत किया गया है। जिनमें पैरेटो, मोस्को मिल्स तथा मिचेल्स आदि विचारकों ने अभिजन के सम्बन्ध में अपनी विचार व्यक्त किए हैं। अन्य विचारकों में लासवेल, बर्नहम, जार्ज अर्टिगा आदि का भी योगदान प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से इस सिद्धान्त की ओर रहा है। इस सिद्धान्त के विकास का प्रमुख कारण मार्क्स के वर्ग संघर्ष के सिद्धात का प्रतिकार और उसकी शासक वर्ग की कल्पना को झुठलाना था। मार्क्सवादी विचारों के बढ़ते प्रभाव साम्यवादी व्यवस्थाओं को वास्तविकताओं के प्रतिरोध में यह विचार कि सत्ता तो केवल कुछ में ही रहती है।

अभिजन सिद्धान्त की कई आलोचनाएँ की गई हैं, जो निम्नलिखित हैं–

i- कतिपय विद्वानों ने माना है कि राजनैतिक अभिजनों में धनी और अमीर लोग आते हैं, मान्य नहीं है।

ii- यह सिद्धान्त राजनैतिक व्यवस्था के अतिरिक्त सामाजिक व आर्थिक परिवर्तनों के परिणामों की चर्चा करने में भी असफल रहा है।

iii- अभिजन अपने हितों के साथ–साथ समाज के बहुसंख्यक वर्ग के हितों का भी ध्यान रखते हैं, व्यवहार में ऐसा नहीं होता है।

iv- यह गलत धारणा है कि राजनैतिक सत्ता के स्वामी राजनैतिक अभिजन होते हैं। देखा जाए तो स्थायी व प्रभावी ढंग से कभी भी सत्ता केवल सम्भ्रान्त जनों में रहती है। प्रजातंत्र में सत्ता किसी के पास हो सकती है।

v- अभिजनों को सम्पूर्ण प्रक्रिया में निर्णयकर्ता मान लेना भी उचित नहीं प्रतीत होता है। आज प्रजातंत्र में जनता ही अपने निर्णयों के आधार पर अभिजनों को निर्मित करती है।

vi- पैरेटो ने अभिजनों को अपने वर्ग में बने रहने के लिए बल प्रयोग व चालाको के अवशेषों का सहारा लेने की बात कही है। यह अनीतिपूर्ण व्यवहार है जो प्रजातंत्र के विकास में बाधक है।

vii- अभिजन सिद्धान्त इस बात पर जोर देता है कि अभिजात वर्ग लम्बे समय के बाद अपना अभिजात्व खो देते हैं। कोई जरूरी नहीं है कि सभी अभिजन वर्ग एक निश्चित समय के बाद पतित ही हो जाते हों।

निष्कर्ष के रूप में, यह कहा जा सकता है कि अनेक राजनैतिक समाजशास्त्रियों ने इस सिद्धान्त की विवेचना अपने–अपने दृष्टिकोण से की है, भले ही उनमें कुछ कमियाँ आई हों। पर इतना अवश्य है कि चाहे औद्योगिक समाज हो, समाजवादी या लोकतंत्रीय समाज हो, अभिजन सदैव अल्पमत में ही रहते हैं। इनमें संगठन और एकता भी अन्य की तुलना में अधिक पाई जाती है। आखिर किसी न किसी को जो अल्पमत में होगा सत्ता में निर्णयकारिता लेनी ही पड़ती है। विकासोन्मुख राष्ट्रों के राजनैतिक विकास और आर्थिक प्रगति में अभिजनों की भूमिका बहुत महत्त्वपूर्ण रही है। हम बौद्धिक अभिजनों से इसके महत्त्व को समझ सकते हैं। बौद्धिक अभिजनों की प्रत्येक समाज में प्राचीन से आधुनिक युग तक महत्त्वपूर्ण भूमिका

देखी जा सकती है। डॉक्टर, इंजीनियर, वकील, प्राध्यापक, शिक्षक, लेखक, कलाकार आदि ऐसे अल्पसंख्यक वृद्धिजीवी वर्ग हैं जिनकी महत्ता उनके सृजनात्मक, सम्प्रेषण शक्ति और विवेचन में स्पष्टतः झलकती है।

अतः संक्षेप में, हम कह सकते हैं कि अभिजन चूँकि विशिष्ट के धनी व्यक्ति होते हैं, अतः इनका सम्मान प्रत्येक जगहों पर रहेगा, यही सामाजिक, आर्थिक और शक्ति व सप्ता के निर्धारक हो सकते हैं, समाज में चाहे जिस प्रकार की शासन प्रणाली क्यों न हो।

17.8 सारांश

पैरेटो मानता है कि इतिहास कुलीन वर्गों का श्मशान है। उसने लिखा है कि जर्मनी में आज जो अभिजात वर्ग के व्यक्ति हैं उनमें अधिकांश वे व्यक्ति हैं जो प्राचीनकाल में अभिजातों के नौकर थे। उसने आगे लिखा है कि अभिजात वर्ग समाज में शासन अवश्य करते हैं, किन्तु अपनी कब्र स्वयं ही खोदते रहते हैं। पैरेटो को सबसे बड़ी चिन्ता इस बात की थी कि अभिजात वर्ग के नष्ट हो जाने के कारण समाज में जो असन्तुलन की स्थिति आ जाती है उसे कैसे रोका जाए? ऐसी स्थिति उत्पन्न होने के कारणों की व्याख्या करते हुए पैरेटो ने लिखा है कि विभिन्न प्रकार के अभिजन वर्गों के मनोबिज्ञान में समय–समय पर परिवर्तन होता रहता है। इस संबंध में उसने अवशेषों (Residues) के सिद्धान्त को विकसित किया है। इस सिद्धान्त का आधार सामाजिक जीवन में व्यक्तियों के व्यवहार को तार्किक और अतार्किक क्रियाओं में विभाजित करके समझा जा सकता है। पैरेटो के राजनैतिक अभिजन सिद्धान्त को समझने के लिए हमें तार्किक, अतार्किक व अवशेषों के अर्थ को समझना आबश्यक है।

सी. राइट मिल्स मोस्को, पैरेटो तथा कार्ल मार्क्स से प्रभावित थे। इन विद्वानों के प्रभाव के परिणामस्वरूप मिल्स ने अपना यह नवीन राजनैतिक अभिजन का सिद्धान्त प्रतिपादित किया है। मिल्स का सम्भ्रान्त जन सामाजिक दृष्टि से उच्च स्तरीय सामंजस्यपूर्ण तथा लोक नियंत्रण को अस्वीकार करने वाला होता है। यह वर्ग सभी विवादों का निर्धारक होता है। मिल्स के अनुसार, शक्तिशाली सम्भ्रान्त जन की रचना उन व्यक्तियों द्वारा होती है जो अपने पदों के कारण सामान्य पुरुषों और स्त्रियों के सामान्य पर्यावरण से ऊपर उठ जाते हैं और ऐसे पदों पर आश्रित हैं जो प्रमुख परिणामों से संबंधित निर्णय ले सकते हैं। मिल्स आगे लिखते हैं कि शक्तिशाली सम्भ्रान्त जन पूर्णतः पृथक शासक नहीं हैं बल्कि सलाहकार, प्रवक्ता, नीति–निर्माणक एवं उच्च विचारों एवं निर्णयों के वे आधार हैं। सम्भ्रान्त जनों के नीचे मध्य स्तर के व्यावसायिक राजनीतिज्ञ हैं जिनमें कस्बे, नगर अथवा क्षेत्र के उच्च वर्ग के व्यक्तियों को रखा जा सकता है।

मिचेल्स ने इस बात को स्वीकार किया है कि इतिहास में कभी–कभी क्रान्तियाँ होती हैं और शासकों को उनके स्थान से हटा दिया जाता है, परन्तु थोड़े समय बाद उच्च वर्ग का एक नया वर्ग शक्ति

अपने हाथ में ले लेता है और दुनिया अपनी हमेशा की रफ्तार में चलती रही है। मिचेल्स कहता है कि इतिहास की लोकतांत्रिक प्रवृत्तियाँ समुद्र से उठने वाली लहरों के समान हैं। वे सदा छिछले किनारे से टकराकर टूट और बिखर जाती हैं। लौह नियम एक ऐसा नियम है जिसके शिकंजे से अधिक से अधिक लोकतांत्रिक आधुनिक समाजों और उन समाजों में अधिक से अधिक प्रगतिशील राजनैतिक दल के लिए भी छूटकर निकलना सम्भव नहीं हुआ है। अर्थात सत्ता के शिखर पर जो लोग होते हैं कभी सत्ता नहीं छोड़ते हैं।

17.9 बोध प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1. राजनैतिक अभिजन के सिद्धांत को वैज्ञानिक रूप देने का सर्वप्रथम प्रयास किसका है ।

   (अ) मार्क्स (ब) लॉसवेल (स) प्लेटो (द) अरस्तू

2. यह किसकी परिभाषा है "शासित वर्ग वह बहुसंख्यक वर्ग है जो शासक वर्ग द्वारा निर्देशित व नियंत्रित होता है"।

   (अ) प्लेटो (ब) पैरेटो (स) मोस्को (द) बोटोमोर

3. अवशेष (Residues) और भ्रान्त तर्क (Derivations) की बात किसने किया है।

   (अ) मार्क्स (ब) लॉसवेल (स) प्लेटो (द) पैरेटो

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. राजनीतिक अभिजनों के सिद्धांत को परिभाषित करते हुए इसकी अवधारणा की व्याख्या कीजिए।
2. पैरेटो के राजनैतिक अभिजन सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।
3. गिटानो मोस्को के राजनैतिक अभिजन की अवधारणा की व्याख्या कीजिए।
4. सी. राइट मिल्स के राजनैतिक सम्भ्रान्तजन से सम्बन्धित विचारों की विवेचना कीजिए।
5. मिचेल्स के राजनैतिक अभिजन के सिद्धान्त की व्याख्या कीजिए।

लघु उत्तरी प्रश्न के उत्तर

1 (ब) लॉसवेल 2 (स) मोस्को 3 (द) पैरेटो

17.10 सन्दर्भ सूची

- https://study.com/academy/lesson/elite-theory-overview-history-examples.html
- https://www.scribd.com/document
- https://www.britannica.com/topic/elite-theory
- Barozet, E. y M. Aubry (2005): "De las reformas internas a las candidatura presidencial autónoma: los nuevos caminos institucionales de Renovación Nacional", Política,
- Berger, P. L. y T. Luckmann (1966): Social construction of reality: a treatise in the sociology of knowledge, Anchor Books, Garden City, NY.
- Domhoff, G. W. (1990): The power élite and the state: how policy is made in America, Aldine de Gruyter, Hawthorne, NY.
- Hall J. y R. Schroeder (eds.) (2005): An anatomy of power: the social theory of Michael Mann, Cambridge University Press, New York.
- डॉ0 डी0 एस0 बघेल डॉ0 टी0 पी0 सिंह कर्चुली (2010) "राजनैतिक समाजशास्त्र' विवेक प्रकाशन जवाहर नगर , नई दिल्ली
- डॉ0 विरकेश्वर प्रसाद सिंह (2004), तुलनात्मक शासन एवं राजनीति ज्ञानदा प्रकाशन नई दिल्ली,

इकाई – 18 : भारत में राजनीतिक अभिजन

इकाई की रूपरेखा

18.0 उद्देश्य

18.1 प्रस्तावना

18.2 भारत में राजनीतिक अभिजन की उत्पति

18.2.1 भारत में राजनीतिक अभिजन के स्रोत

18.3 भारत में राजनीतिक अभिजन से सम्बन्धित प्रमुख अध्ययन

18.4 भारत में राजनीतिक अभिजन

18.4.1 प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजन

18.4.2 मध्यकालीन भारत में राजनीतिक अभिजन

18.4.2 ब्रिटिश भारत में राजनीतिक अभिजन

18.4.3 स्वतन्त्र भारत में राजनीतिक अभिजन

18.5 सारांश

18.6 बोध के प्रश्न

18.7 सन्दर्भ ग्रंथ

18.0 उद्देश्य

इस इकाई का अध्ययन करने के पश्चात आप जानेंगे –

- भारत में राजनीतिक अभिजन के उद्भव को समझ सकेगें।
- भारत में राजनीतिक अभिजन के समाजशास्त्रीय व्याख्या को समझेगें।
- भारत में राजनीतिक अभिजन के बदलते स्वरूप को समझेगें।

18.1 प्रस्तावना

अभी तक हमने पिछली इकाइयों में यह देखने का प्रयास किया कि जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अभिजन पाए जाते हैं। यदि हम समाज के विभिन्न क्षेत्रों को देखें तो उनमें एक या एक से अधिक अभिजन पाए जाते हैं। समाजशास्त्री दृष्टिकोण से अभिजन का सरोकार सामाजिक स्तरीकरण से है, जिसे हम अभिजन की संज्ञा से संज्ञायित करते हैं। भारतीय समाज में अभिजनों का सरोकार स्तरीकरण की व्यवस्था से पाया जाता है। ग्रामीण क्षेत्रों में जाति व्यवस्था का बाहुल्य होने के कारण वहाँ पर जातिगत समुदायों में अभिजन पाए जाते हैं, जो कि राजनीति में अपनी भूमिका को स्थानीय स्तर पर अदा करते हैं। भारतीय समाज में अभिजन को सापेक्षिक रूप से समझा जा सकता है। जातिगत श्रेष्ठता के आधार पर उसे समाज में वह दर्जा प्राप्त होता है,जिसके माध्यम से वह बहुसंख्यकों को नियंत्रित करता है। उदाहरण स्वरूप हम प्राचीन भारत में देख सकते थे कि जाति व्यवस्था में ब्राह्मणों का एकाधिकार शिक्षा के क्षेत्र में पाया गया। उसी प्रकार शासन संबंधी कार्य क्षत्रियों को दिया गया व्यवसाय संबंधी कार्य वैश्य समुदाय के पास रहा। इसी प्रकार से समाज में परिवर्तन की प्रक्रिया के माध्यम से भी समाज के कई क्षेत्रों में बदलाव देखने को मिला। मुगलों के काल में राजनैतिक व्यवस्था में परिवर्तन आया तथा भारत में अभिजनों के प्रकृति में भी बदलाव देखने को मिला। इसी प्रकार से अंग्रेजो के आने के बाद राजनीतिक अभिजनों में हमे कई प्रकार के परिवर्तन नजर आये। उदाहरण स्वरूप जिसमें गांधी जी कही न कही एक राजनीतिक अभिजन के रूप में उभर के सामने आये। इसी प्रकार से स्वतन्त्रता के बाद भारत में कई प्रकार के बदलावों को देखा गया तथा सकारात्मक भेदभाव की नीति से समाज में उन वर्गों को भी राजनीतिक अभिजनों में शामिल किया गया जोकि सदियों से वंचना का शिकार होते आये है। इस ईकाई में हम मोटे तौर पर भारत में राजनीतिक अभिजनों को तीन भागों में विभाजित करके समझने की कोशिश करेगे। जिसमें हम प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजन, स्वतन्त्रता से पूर्व राजनीतिक अभिजन तथा स्वतन्त्रता के बाद राजनीतिक अभिजन पर चर्चा करेंगे।

18.2 भारत में राजनीतिक अभिजन की उत्पत्ति

प्राचीन भारत में अभिजन की जो संरचना थी,वह आज से बहुत भिन्न थी। परंपरागत भारतीय समाज में कुछ रीती रिवाज थे, काम करने के तौर तरीके थे, वे सभी धार्मिक संहिताओं के आधार पर निर्धारित होते थे। उन दिनों जिस तरह के राजनीतिक अभिजन पाये जाते थे, उनका आधार जाति व्यवस्था थी। सामान्यतः परंपरागत हिंदू समाज में ब्राह्मण,क्षत्रिय, तथा वैश्य जिन्हें द्विज जातिया कहा जाता था। वास्तव में वे ही राजनीति अभिजन थे। लेकिन इस संदर्भ में यह महत्वपूर्ण तथ्य था कि इन तीनों ही अभिजनों में अंतरसंबंध नहीं थे। जिसका तात्पर्य यह था कि ब्राह्मणों के अभिजन को ब्राह्मण ही स्वीकार कर सकते थे। ब्राह्मणों के जो अधिकार थे, वे वैश्यो के नही थे। अन्य शब्दों में ये कहा जाए की प्रत्येक जाति के अपने अभिजन पाए जाते थे। लेकिन हम इस तथ्य को उजागर करते हैं कि गैर द्विज जातियों में किसी भी प्रकार के अभिजन नहीं होते थे। उनको मात्र अशुद्ध कार्यों में ही संलग्न किया जाता था। **के.एल. शर्मा** ने इन राजनीतिक अभिजनों पर टिप्पणी करते हुए कहा है कि प्रत्येक जाति समूह के होते हुए भी ब्राह्मणों को सभी स्वीकार करते थे। ब्राह्मणों के कुछ सामाजिक अधिकार हुआ करते थे, इनमें से कुछ ब्राह्मणों से अपेक्षा की जाती थी कि वे वेदों का अध्ययन कर, लोगों को राजनीतिक व्यवस्था का ज्ञान दे। ब्राह्मणों में भी वेदों का अध्ययन करने वाले विभिन्न प्रकार के पाए जाते थे। जैसे–जो ब्राह्मण दो वेदों में पारंगत थे उनको द्विवेदी कहा जाता था , जो तीन वेदों में पारंगत थे उन्हें त्रिवेदी कहा जाता था तथा चारों वेदों पर आधिपत्य स्थापित करने वाले को चतुर्वेदी कहा जाता था। ब्राह्मण अभिजनों को मोटे तौर पर दो भागों में विभक्त किया गया था। दैविक ब्राह्मण अभिजन तथा लौकिक ब्राह्मण अभिजन। इस प्रकार का वर्गीकरण उनकी विद्वता के आधार पर पाया जाता था।

परंपरागत भारत में राजनीतिक अभिजन के अतिरिक्त आर्थिक अभिजन भी देखने को मिलते थे, यदि इस पे समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से देखा जाए तो यह ज्ञात होता है कि राजनीति में ब्राह्मणों का ही वर्चस्व था, क्योंकि परंपरागत समाज धार्मिक आचार संहिताओं के माध्यम से संचालित होता था जिसमें प्रत्येक व्यक्ति के अधिकारों और कर्तव्यों का वर्णन दिया गया था। भारत में राजनीतिक अभिजन की उत्त्पति से सम्बन्धित तथ्यों में यह महत्वपूर्ण तथ्य है कि अभिजनो का इतिहास भी उतना पुराना है जितना कि जाति व्यवस्था का है क्योंकि एक जाति के अभिजन का दूसरी जाति के अभिजन से सम्बन्ध नही था। एक जाति के राजनीतिक अभिजन की जो प्रतिष्ठा या उसका प्रभाव था वह सभी जातियों पर समान रूप से लागू नही होता था। इन अभिजनों के बारे में यह भी तथ्य स्पष्ट रूप से बताया जा सकता है कि परम्परागत अभिजनों में कभी भी एकजुटता नही थी। यहां कहने का तात्पर्य यह है कि परम्परागत भारतीय पुरातन समाज जातियों के आधार पर विभाजित था तथा जिनमें आपस में अन्तःसम्बन्ध काफी सीमा में न के

बराबर थे जिनके कारण ये अभिजन किसी भी मामले में मिलकर आपस में निर्णय नही ले पाते थे। प्राचीन समय में राजनीतिक अभिजनों का समूह जाति पंचायत के रूप में कार्य करता था। जिसमें जातिगत समुदाय के आधार पर ही जातिगत पंचायत विवाद सम्बन्धी निर्णयों को लेता था। परम्परागत भारतीय समुदायों में गांवों में जो भी पंचायते पायी जाती थी उनमें अधिकांश रूप से द्विज जातियों के लोगो का ही प्रभाव नजर आता था। इस प्रकार से भारत में राजनीतिक अभिजनों की उत्पत्ति को हम जाति व्यवस्था के आधार पर देख सकते है।

18.2.1 भारत में राजनीतिक अभिजन के स्रोत

राजनीतिक अभिजन पर चर्चा करते समय, एक महत्वपूर्ण मुद्दा यह समझना है कि कोई व्यक्ति राजनीतिक अभिजन कैसे बनता है या दूसरे शब्दों में, उसके अभिजन के स्रोत क्या हैं। **आंद्रे बेते** इस विषय को संबोधित करते हुये बताते हैं कि राज्य या राष्ट्रीय स्तर पर राजनीतिक अभियानों छः प्राथमिक स्रोत होते है। जिसको कि हम समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से समझ सकते है कि किस प्रकार से समाज के भीतर ही वे शक्तियां मौजूद रहती है जोकि किसी भी व्यक्ति या समुदाय को अभिजन बनाने का कार्य करती है। इसको हम लोग यहां इस प्रकार से देखने का प्रयाग कर रहे है।

1. **समूह या व्यक्ति की जोड़–तोड़ करने की क्षमता –** राजनीतिक अभिजन का एक महत्वपूर्ण स्रोत यह है कि व्यक्ति किसी समूह या व्यक्ति को हेरफेर करने की क्षमता रखता है। लोकतांत्रिक व्यवस्था को प्रभावी ढंग से संचालित करने वाले समूह अक्सर राजनीतिक अभिजात वर्ग बन जाते हैं। कई उदाहरण इस बात को स्पष्ट करते है, हाल ही में पिछड़े वर्गों के रूप में वर्गीकृत कई जातियों ने सफलतापूर्वक लामबंद किया है। जाट, एक किसान जाति, राजनीतिक हेरफेर में अपनी निपुणता के कारण अपने राजनीतिक आंदोलन में सफल रही। इसी तरह, जैन अनुयायियों ने प्रभावी राजनीतिक पैंतरेबाजी के माध्यम से कुछ राज्यों में अल्पसंख्यक समूह के रूप में मान्यता प्राप्त की है। इस प्रकार, किसी समूह या व्यक्ति को हेरफेर करने की क्षमता एक राजनीतिक अभिजन बनाने में महत्वपूर्ण रूप से योगदान देती है।

2. **सामाजिक आधार–** राजनीतिक अभिजन के स्रोतो में एक मजबूत सामाजिक आधार होना भी आवश्यक है। राजनीतिक अभिजन की स्थिति प्राप्त करने के लिए, एक व्यक्ति के पास पर्याप्त सामाजिक समर्थन होना चाहिए। बहुसंख्यक उच्च जातियों के व्यक्तियों के पास अक्सर अपने मजबूत सामाजिक आधार के कारण अभिजन वर्ग बनने की अधिक संभावना होती है। भारत की स्वतंत्रता के बावजूद, यह स्पष्ट है कि भारत में अधिकांश राजनीतिक अभिजात वर्ग जातिगत श्रेठता के आधार पर ही समाज में देखने

को मिल रहे है।

3. **ग्रामीण अभिजन– के.एल. शर्मा** के अनुसार, ग्रामीण भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग बनने के लिए प्रदत्त प्रस्थिति एक महत्वपूर्ण कारक है। इन लोगो के पास पर्याप्त मात्रा मे कृषि भूमि, संपत्ति पायी जाती है, जिसका प्रमुख आधार भूतपूर्व जमींदारी और जागीरदारी का पाया जाना है, ग्रामीण क्षेत्रो में अभिजन बनने का एक प्रमुख स्रोत माना जाता है।

4. **प्रभुजाति– एम.एन.श्रीनिवास** ने प्रभु जाति के लिए कई मानदंड बताए हैं, जिनमें आर्थिक और राजनीतिक शक्ति, उच्च धार्मिक स्थिति, पश्चिमी शिक्षा को अपनाना और आधुनिक पेशे को शामिल किया हैं। गांव में किसी जाति का प्रभुत्व भी अभिजन बनने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। जैसे भारत के मैसूर में रेड्डी, पश्चिमी उत्तरप्रदेश में जाट इत्यादि प्रभुजाति के रूप में उभर कर सामने आये तथा इन्ही में से राजनीतिक पटल पर कई प्रकार के अभिजन भी पाये गये है।

5. **गांव में जाति का प्रभावी होना**–एस. सी. दूबे के अध्ययन से पता चला कि एक जाति तब प्रमुख हो जाती है जब उसके पास गांव पर शासन करने और संबंधित निर्णय लेने की शक्ति होती है, जिससे समुदाय के भीतर सत्ता का केंद्रीकरण होता है और जाति विशेष के सदस्य उस गांव से सम्बन्धित सभी प्रकार के निर्णय लेने की क्षमता रखते हो, तो उस समय प्रभावी जाति गांव के माध्यम से राजनीतिक अभिजन बनने में अपनी अहम भूमिका अदा करता है।

6. **शक्ति का केन्द्रीयकरण – टी.के. ऊमन** श्रीनिवास और एस.सी. दुबे के द्वारा बताये गये स्रोतो से अपनी असहमति व्यक्त करते हुये बताते है कि अभिजन कोई व्यक्ति भी हो सकता तथा समूह भी, यह इस तथ्य पर निर्भर करता है कि समुदाय की शक्ति किसमें निहित है। जैसे महात्मा गांधी व्यक्ति के तौर पर अभिजन की श्रेणी में आ जाते है तथा समुदाय पर अपने विचारों का प्रभाव डालते है। उसी प्रकार से जब किसी समुदाय के पास शक्ति केन्द्रित हो जाती है, उसी समय उस समुदाय में राजनीतिक अभिजन बनने की संभावना सर्वाधिक हो जाती है। जैसे कि भारत में बहुसंख्यक रूप में हिन्दू समुदाय में शक्ति केन्द्रित है। इस प्रकार शक्ति का केन्द्रीकरण राजनीतिक अभिजन के स्रोत के रूप में देखने को मिलता है।

18.3 भारत में राजनीतिक अभिजन के प्रमुख अध्ययन

भारत में राजनीतिक अभिजन के बारे में हमारी समझ तभी विकसित होगी जब हम लोग उससे सम्बन्धित अध्ययनों का अध्ययन करेगे। वैसे भारतीय राजनीति पर बहुत कुछ लिखा जा चुका है, लेकिन

भारतीय राजनीतिक अभिजनों पर प्रत्यक्ष रूप से अभी भी संतोषजनक कार्यो को समाजशास्त्रीय दृष्टिकोण से प्रस्तुत करना एक दुरूह कार्य है। ऐसा नही है कि भारत मे राजनीति को लेकर किसी भी प्रकार की उदासीनता नजर आती हो। भारतीय समाज के प्रत्येक पहलू में प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से राजनीतिक अभिजनों के बारें में बताया गया है। जिसमें से प्रमुख अध्ययनो को संक्षेप मे हम यहां प्रस्तुत कर रहे है ताकि भारतीय राजनीतिक अभिजन से सम्बन्धित समझ को विकसित किया जाये। ये प्रमुख अध्ययन इस प्रकार से है।

रजनी कोठारी की मौलिक कृति, **''पालिटिक्स इन इण्डिया'' (1970),** भारतीय राजनीतिक व्यवस्था का गहन विश्लेषण प्रदान करती है, जिसमें विशेष रूप से राजनीतिक अभिजात वर्ग की भूमिका और गतिशीलता पर ध्यान केंद्रित किया गया है। कोठारी ''कांग्रेस प्रणाली'' की अवधारणा पेश करते हैं, जहाँ भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस ने विभिन्न सामाजिक समूहों और हितों को शामिल करते हुए एक व्यापक–आधारित गठबंधन के रूप में कार्य करके राजनीतिक परिदृश्य पर अपना दबदबा बनाया। इस समावेशिता ने पार्टी को विविध राजनीतिक अभिजात वर्ग को समायोजित करने की अनुमति दी, जिससे आंतरिक गुटबाजी को बढ़ावा मिला, जिसने पार्टी को कमजोर करने के बजाय, इसके रैंकों के भीतर नेतृत्व के संचलन और नवीनीकरण को सक्षम किया। कोठारी राजनीतिक अभिजात वर्ग के बीच आम सहमति बनाने के महत्व पर जोर देते हैं, जो भारत की विशाल विविधता को प्रबंधित करने और सामाजिक धुरुवीकरण को रोकने में महत्वपूर्ण था। वे करिश्माई और संस्थागत नेतृत्व की भूमिका पर भी प्रकाश डालते हैं, विशेष रूप से जवाहरलाल नेहरू जैसे व्यक्तित्व, मानदंडों को स्थापित करने और पारंपरिक सामाजिक पदानुक्रमों को आधुनिक राजनीतिक ढांचे में एकीकृत करने में। इस एकीकरण ने आधुनिकीकरण और सामाजिक परिवर्तन को बढ़ावा देते हुए पारंपरिक सत्ता संरचनाओं को सहयोजित करके राजनीतिक व्यवस्था को स्थिर करने में मदद की। हालांकि, कोठारी ने कांग्रेस प्रणाली के सामने आने वाली चुनौतियों पर भी ध्यान दिया है, जैसे कि विभिन्न सामाजिक समूहों की मांगों को संतुलित करना और इसकी समावेशिता से उत्पन्न होने वाले विरोधाभासों का प्रबंधन करना। कांग्रेस प्रणाली के पतन और विपक्षी दलों के उदय ने राजनीतिक अभिजात वर्ग के विखंडन और अधिक बिखरी हुई सत्ता संरचना को जन्म दिया। कोठारी का विश्लेषण भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग की प्रकृति और लोकतांत्रिक प्रक्रिया को आकार देने में उनकी भूमिका को समझने के लिए एक रूपरेखा प्रदान करता है, जिसमें आम सहमति बनाने और समावेशिता पर उनका जोर समकालीन भारतीय राजनीति को प्रभावित करना जारी रखता है।

एम. एन. श्रीनिवास का काम, खास तौर पर उनके निबंधों का संग्रह **''आधुनिक भारत में जाति और अन्य निबंध'' (1962),** सामाजिक स्तरीकरण और गतिशीलता के बारे में महत्वपूर्ण जानकारी प्रदान करता है

जो भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग की पृष्ठभूमि को आकार देते हैं। श्रीनिवास ''संस्कृतिकरण'' की अवधारणा पेश करते हैं, एक ऐसी प्रक्रिया जिसके द्वारा निचली जातियाँ उच्च जातियों की प्रथाओं और जीवन शैली का अनुकरण करके ऊपर की ओर गतिशीलता की तलाश करती हैं। यह घटना राजनीतिक अभिजात वर्ग की संरचना और व्यवहार को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है, क्योंकि निचली जातियों के व्यक्ति राजनीतिक क्षेत्र में प्रवेश करने और प्रभाव प्राप्त करने का प्रयास करते हैं। श्रीनिवास का काम भारतीय राजनीति में जाति के निरंतर महत्व को रेखांकित करता है, यह दर्शाता है कि कैसे जाति की पहचान और गतिशीलता राजनीतिक व्यवहार और नेतृत्व को प्रभावित करती रहती है। आधुनिक भारत में जाति की बदलती भूमिका की जांच करके, श्रीनिवास इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि पारंपरिक सामाजिक संरचनाएं समकालीन राजनीतिक प्रक्रियाओं के साथ कैसे तालमेल बिठाती हैं और उनसे कैसे जुड़ती हैं। उनका विश्लेषण जाति और राजनीतिक शक्ति के बीच जटिल अंतर्संबंध को उजागर करता है, यह दर्शाता है कि राजनीतिक अभिजात वर्ग अक्सर इन गहराई से जड़ जमाए सामाजिक पदानुक्रमों से उभरते हैं और उनसे आकार लेते हैं। श्रीनिवास का कार्य भारत में राजनीतिक नेतृत्व के सामाजिक–सांस्कृतिक आयामों को समझने में आधारभूत है, तथा इस बात पर बल देता है कि आधुनिक लोकतांत्रिक ढांचे के बावजूद, जाति जैसी पारंपरिक सामाजिक संरचनाएं राजनीतिक परिदृश्य में महत्वपूर्ण भूमिका निभाती रहती हैं (श्रीनिवास, 1962)।

क्रिस्टोफ जैफरलॉट की कृतियाँ, **''द हिंदू नेशनलिस्ट मूवमेंट एंड इंडियन पॉलिटिक्स'' (1996)** और **''इंडियाज साइलेंट रिवोल्यूशनः द राइज ऑफ द लोअर कास्ट्स इन नॉर्थ इंडिया'' (2003)**, भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग की विकसित होती प्रकृति की एक व्यापक जाँच प्रदान करती हैं। पूर्व में, जैफरलॉट हिंदू राष्ट्रवाद और भारतीय जनता पार्टी (बीजेपी) के उदय की खोज करते हैं, इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि कैसे बीजेपी के भीतर राजनीतिक अभिजात वर्ग ने रणनीतिक नेतृत्व और जमीनी स्तर पर लामबंदी के माध्यम से पार्टी को एक प्रमुख राजनीतिक ताकत में बदल दिया है। वह हिंदू राष्ट्रवादी विचारधारा को बढ़ावा देने और भारतीय राजनीतिक विमर्श को नया रूप देने में अटल बिहारी वाजपेयी और एल.के. आडवाणी जैसे प्रमुख व्यक्तियों की भूमिकाओं पर गहराई से विचार करते हैं। **''इंडियाज साइलेंट रिवोल्यूशन''** में, **जैफरलॉट** निचली जातियों, विशेष रूप से दलितों और अन्य पिछड़े वर्गों (ओबीसी) की राजनीतिक लामबंदी पर ध्यान केंद्रित करते हैं, यह दिखाते हुए कि कैसे कांशीराम और मायावती जैसे नेताओं ने पारंपरिक उच्च–जाति के प्रभुत्व को चुनौती दी है और राजनीतिक नेतृत्व को फिर से परिभाषित किया है। यह कार्य पारंपरिक अभिजात वर्ग पर जाति–आधारित राजनीतिक लामबंदी के महत्वपूर्ण प्रभाव को दर्शाता है, जो एक अधिक समावेशी और लोकतांत्रिक राजनीतिक परिदृश्य को बढ़ावा देता है। साथ में, ये विश्लेषण वैचारिक आंदोलनों और सामाजिक परिवर्तनों द्वारा आकार दिए गए भारतीय राजनीतिक अभिजात

वर्ग की गतिशील और बहुलवादी प्रकृति को रेखांकित करते हैं (जैफरलॉट, 1996 एवं जैफरलॉट, 2003)।

गेल ओमवेट का काम भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग के विकास और प्रभाव पर एक महत्वपूर्ण दृष्टिकोण प्रदान करता है, खासकर जाति और सामाजिक आंदोलनों के नजरिए से। अपनी पुस्तक **दलित्स एंड द डेमोक्रेटिक रेवोलुशनः डॉ आंबेडकर एंड द दलित मूवमेंट इन कोलोनियल इंडिया (1994)** में, ओमवेट ने पता लगाया है कि कैसे डॉ. बी.आर. अंबेडकर के नेतृत्व ने उच्च जाति के प्रभुत्व को चुनौती देकर और दलितों के राजनीतिक और सामाजिक अधिकारों की वकालत करके राजनीतिक अभिजात वर्ग के परिदृश्य में एक परिवर्तनकारी बदलाव को उत्प्रेरित किया। अंबेडकर के प्रभाव ने हाशिए के समुदायों से एक नए राजनीतिक अभिजात वर्ग के उदय को जन्म दिया, जिसने भारतीय राजनीति में सत्ता की गतिशीलता को नया रूप दिया। इसी तरह, **अंडरस्टैंडिंग कास्टः फ्रॉम बुद्ध टू अंबेडकर एंड बियॉन्ड (2007)** में, ओमवेट जाति के ऐतिहासिक विकास और राजनीतिक अभिजात वर्ग पर इसके प्रभाव का पता लगाते हैं, यह प्रदर्शित करते हुए कि कैसे जाति–आधारित आंदोलनों ने लगातार अभिजात वर्ग संरचनाओं को चुनौती दी है और उन्हें फिर से परिभाषित किया है। उनका विश्लेषण इस बात पर प्रकाश डालता है कि समकालीन राजनीतिक अभिजात वर्ग जाति–आधारित लामबंदी और सामाजिक न्याय के जटिल क्षेत्र में कैसे आगे बढ़ता है, तथा यह सूक्ष्म समझ प्रदान करता है कि ये गतिशीलताएं व्यापक राजनीतिक परिदृश्य को कैसे प्रभावित करती हैं (ओमवेट, 1994य ओमवेट, 2007)।

जोया हसन की **"डेमोक्रेसी एंड द क्राइसिस ऑफ़ इनइक्वालिटी" (2011)** भारत में असमानता के लगातार मुद्दों और इन असमानताओं को बनाए रखने या चुनौती देने में राजनीतिक अभिजात वर्ग की भूमिका की एक महत्वपूर्ण जांच प्रदान करती है। हसन लोकतंत्र, राजनीतिक अभिजात वर्ग और सामाजिक असमानता के बीच जटिल संबंधों की खोज करते हैं, तर्क देते हैं कि राजनीतिक अभिजात वर्ग के व्यवहार और निर्णयों का लोकतांत्रिक गहनता और सामाजिक न्याय के लिए गहरा प्रभाव पड़ता है। वह इस बात की जांच करती है कि राजनीतिक अभिजात वर्ग नीति–निर्माण और पुनर्वितरण को कैसे प्रभावित करते हैं, अक्सर अपने हितों को प्राथमिकता देते हैं और यथास्थिति सत्ता संरचनाओं को बनाए रखते हैं, जो सामाजिक और आर्थिक असमानताओं को बढ़ाता है। हालांकि, हसन उन उदाहरणों पर भी प्रकाश डालती हैं जहां राजनीतिक अभिजात वर्ग ने असमानता को कम करने और सामाजिक न्याय को बढ़ावा देने के उद्देश्य से नीतियों की वकालत करने और उन्हें लागू करने में भूमिका निभाई है। उनका विश्लेषण भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग की दोहरी प्रकृति को रेखांकित करता हैः जबकि वे समान विकास में बाधा बन सकते हैं, उनके पास महत्वपूर्ण सामाजिक और आर्थिक सुधारों को आगे बढ़ाने की क्षमता भी है। हसन का कार्य राजनीतिक अभिजात वर्ग की ओर से अधिक जवाबदेही और संवेदनशीलता की आवश्यकता पर बल

देता है, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि भारत में लोकतंत्र वास्तव में समाज में व्याप्त गहरी असमानताओं को दूर कर सके और उन्हें कम कर सके (हसन, 2011)।

सुदीप्त कविराज की **''द इमेजिनरी इंस्टीटूशन ऑफ़ इंडियाःपॉलिटक्स एंड आइडियाज''(2010)** भारतीय राजनीति की वैचारिक नींव और देश की राजनीतिक संस्कृति को आकार देने में राजनीतिक अभिजात वर्ग की प्रभावशाली भूमिका पर गहराई से चर्चा करती है। कविराज जांच करते हैं कि राजनीतिक विचार और अभिजात वर्ग का व्यवहार किस तरह से आपस में जुड़े हुए हैं, यह दर्शाते हुए कि कैसे एक राजनीतिक इकाई के रूप में भारत की अवधारणा को इसके नेताओं के कार्यों और विचारधाराओं द्वारा आकार दिया गया है। वह भारत में राजनीतिक संस्थानों और नेतृत्व के ऐतिहासिक विकास की खोज करते हैं, यह बताते हुए कि कैसे इन संस्थानों का निर्माण और संशोधन समय के साथ राजनीतिक अभिजात वर्ग द्वारा उनके दृष्टिकोण और हितों को प्रतिबिंबित करने और सुदृढ़ करने के लिए किया गया है। कविराज अभिजात वर्ग की राजनीति के सांस्कृतिक और वैचारिक आयामों की भी जांच करते हैं, इस बात पर प्रकाश डालते हैं कि कैसे अभिजात वर्ग ने अपनी शक्ति और प्रभाव को वैध बनाने के लिए राजनीतिक विचारों का उपयोग किया है। यह कार्य इस बात पर प्रकाश डालता है कि कैसे राजनीतिक अभिजात वर्ग ने अपने वैचारिक और सांस्कृतिक हस्तक्षेपों के माध्यम से न केवल राजनीतिक परिदृश्य को आकार दिया है, बल्कि यह भी कल्पना की है कि भारत क्या है और क्या बन सकता है। राजनीतिक विचारों और अभिजात वर्ग के व्यवहार के बीच परस्पर क्रिया का विश्लेषण करके, कविराज उन तरीकों की सूक्ष्म समझ प्रदान करते हैं जिनसे राजनीतिक अभिजात वर्ग ने ऐतिहासिक और समकालीन रूप से भारतीय राजनीति को परिभाषित और रूपांतरित किया है (कविराज, 2010)।

इन अध्ययनों के अतिरिक्त यदि हम भारत में समाजशास्त्रीय आधार पर अध्ययनों को देखने की कोशिश करे तो हम पाते है कि राजनीतिक समाजशास्त्र के क्षेत्र में अपेक्षाकृत कम कार्य हुआ है। लेकिन इन अभावों के बावजूद कुछ कार्य है जिनके बारे में जानकारी दी जा रही है। टी.बी. बोटोमोर ने अपने लेख मॉडर्न इलिट्स इन इण्डिया में राष्ट्रीय स्तर पर पाए जाने अभिजनों की चर्चा की है। इस क्षेत्र में आंद्रे बेतई ने फिलिप मेशन (Philip Mason) द्वारा सम्पादित पुस्तक इण्डिया एण्ड सिलोन यूनिटी एण्ड डाइवरसिटी (India and Ceylon Unity and Diversity, 1967) में राजनीतिक अभिजनों का बड़ी–बड़ी संरचनाओं में, जैसे कि मंत्रिमण्डल, राजनीतिक दल, विधानसभा आदि में विश्लेषण किया है। आई.पी.देसाई ने अपने निबन्ध द न्यू इलिट (The New Elite) में भारत में राष्ट्रीय स्तर पर उभरते हुये राजनीतिक अभिजन का उल्लेख किया है। इसी प्रकार से विश्लेषणात्मक अनुसंधान मोरिस जोन्स (Morris Jones) ने भी भारतीय समाज में विकसित होते राजनीतिक अभिजनों का विश्लेषण किया है। इस सन्दर्भ में हमें एडवर्ड शिल्स (Edward Shils) का

उल्लेख अवश्य करना चाहिये। वे कहते है कि भारतीय स्तर पर जो राजनीतिक अभिजन हमें मिलते है, वे आज परम्परा और आधुनिकता के मध्य में है। दूसरे शब्दों में, शिल्स के अनुसार, भारत में राजनीतिक अभिजन की व्याख्या निरन्तरता द्वारा की जा सकती है। परम्परागत राजनीतिक अभिजन धीरे–धीरे आधुनिक अभिजन बन जाते है। इसी प्रकार से सिरसीकर (The Rural Elite in a Developing Society 1970), ए.एच. सोमजी (Democracy and political Change in India, 1971), ऑस्कर लेविस (Village Life in Northen India, 1958), मेरी कारस (The Dynamics of Indian Political Fcations, 1972), और एन्थोनी कारटर (Elite Politics in Rural India,1970) के कार्य राजनीतिक अभिजन के क्षेत्र में उल्लेखनीय है। इन्ही कार्यो के आधार पर हम भारत में राजनीतिक अभिजनों का विश्लेषण कर सकते है।

18.4 भारत में राजनीतिक अभिजन

अभी तक आपने इस ईकाई में भारत में राजनीतिक अभिजन के उद्भव से लेकर उनके स्रोतो तथा उनसे सम्बन्धित अध्ययनों के बारे में जाना। अब हम यहां पर भारत में राजनीतिक अभिजन को विभिन्न कालखण्ड़ो के आधार पर जानने का प्रयास करेगे। इसको सुविधा के दृष्टि से हमने तीन भागों में विभक्त किया है। प्राचीन भारत में अभिजन, ब्रिटिश शासन में अभिजन एवं स्वतन्त्रता पश्चात भारत में राजनीतिक अभिजन। आईये इनके बारे में बारी बारी से जानने का प्रयास करते है।

18.4.1 प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजन

प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग की अवधारणा व्यक्तियों के एक छोटे समूह को संदर्भित करती है, जो अपने समय के शासन, प्रशासन और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं में महत्वपूर्ण शक्ति और प्रभाव रखते थे। इस अभिजात वर्ग की संरचना और घटक विभिन्न अवधियों और क्षेत्रों में भिन्न थी, जो सामाजिक–राजनीतिक और सांस्कृतिक संदर्भों से प्रभावित थी। हम यहां इस तथ्य को स्पष्ट कर रहे है कि जैसे कि ऊपर भारत में राजनीतिक अभिजन के उद्भव को बताया गया है कि उनका आधार प्रमुख रूप से जाति व्यवस्था रहा है और यहाँ प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग पर एक गहन नजर डाली गई है, जो ऐतिहासिक संदर्भों द्वारा समर्थित हैः

1. वैदिक काल (लगभग 1500 – लगभग 500 ईसा पूर्व) में अभिजात वर्ग

वैदिक काल के दौरान, राजनीतिक संरचना मुख्य रूप से जनजातीय थी, जिसमेंएक प्रमुख (राजन) शीर्ष पर था। राजन को अक्सर बुजुर्गों की एक परिषद (सभा) और पूरे कबीले (समिति) की एक सभा द्वारा समर्थन दिया जाता था। ये निकाय कबीले के प्रभावशाली सदस्यों से बने होते थे, जो अक्सर

कुलीन वंश (क्षत्रिय) से होते थे। राजन कबीले का सैन्य, न्यायिक और प्रशासनिक प्रमुख होता था। उनका अधिकार निरंकुश नहीं था और अक्सर सभा और समिति की स्वीकृति के अधीन होता था। इस समय के राज्यों में ''सभा और समिति'' का विशेष महत्व पाया जाता था। इन सभाओं में जनजाति के सबसे सम्मानित और शक्तिशाली सदस्य शामिल थे, जिनमें पुजारी (ब्राह्मण), योद्धा (क्षत्रिय) और अन्य प्रभावशाली व्यक्ति शामिल थे जिनको कि राजनीतिक अभिजन की संज्ञा से संज्ञायित किया जा सकता है।

2. महाजनपद और मौर्य साम्राज्य (लगभग 600 – 200 ईसा पूर्व)

मौर्य साम्राज्य के उदय के साथ ही महाजनपदों में राजनीतिक परिदृश्य और भी जटिल हो गया था इसमें एक सुपरिभाषित नौकरशाही संरचना निहित हुआ करती थी। चंद्रगुप्त मौर्य और अशोक जैसे राजाओं और सम्राटों के पास महत्वपूर्ण शक्ति थी। उन्हें धर्म (नैतिक व्यवस्था) को बनाए रखने के कर्तव्य के साथ दैवीय रूप से नियुक्त शासकों के रूप में देखा जाता था। मौर्य प्रशासन में नौकरशाही अत्यधिक संगठित था, जिसमें मंत्रियों, प्रांतीय राज्यपालों और कर संग्रहकर्ताओं सहित अधिकारियों का एक विस्तृत पदानुक्रम था। कौटिल्य (चाणक्य) द्वारा रचित अर्थशास्त्र इस अवधि के दौरान प्रशासनिक और राजनीतिक संरचना का विस्तृत विवरण प्रदान करता है। इस अवधि में राजा को मंत्रिपरिषद द्वारा सलाह दी जाती थी, जिसमें उच्च पदस्थ अधिकारी और कुलीन लोग शामिल होते थे।

3. गुप्त साम्राज्य (लगभग 320 – 550 ई.)

गुप्त काल को अक्सर भारतीय इतिहास में स्वर्ण युग माना जाता है, जो समृद्धि, सांस्कृतिक उत्कर्ष और एक सुव्यवस्थित प्रशासन के लिए जाना जाता है। चंद्रगुप्त प्रथम और समुद्रगुप्त जैसे गुप्त सम्राट राजनीतिक पदानुक्रम के शिखर पर थे। शाही परिवार के सदस्यों का महत्वपूर्ण प्रभाव था और उन्हें अक्सर प्रमुख प्रशासनिक पदों पर नियुक्त किया जाता था। पहले के समय की तरह, राजा को मंत्रिपरिषद द्वारा सहायता प्रदान की जाती थी। प्रधानमंत्री (महामात्य) की भूमिका विशेष रूप से महत्वपूर्ण थी। इस साम्राज्य में अर्ध–सामंती संरचना थी, जिसमें स्थानीय सरदार और जमींदार (सामंत) थे जो सम्राट के प्रति निष्ठा के बदले में अपने क्षेत्रों का प्रबंधन करते थे।

4. क्षेत्रीय राज्य और प्रारंभिक मध्यकालीन काल (लगभग 550 – 1200 ई.)

इस अवधि के दौरान, भारत ने कई क्षेत्रीय राज्यों का उदय देखा, जिनमें से प्रत्येक की अपनी राजनीतिक संरचना थी। इस समयावधि में क्षेत्रीय राजा, जैसे कि चोल, पल्लव और राष्ट्रकूट राजवंशा अपने–अपने क्षेत्रों में सर्वोच्च शक्ति रखते थे। इस दौरान भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग में कुलीन और जमींदार शामिल थे जो विशाल सम्पदा को नियंत्रित करते थे और स्थानीय मिलिशिया की कमान संभालते

थे। उन्होंने राजा के अधिकार को बनाए रखने और स्थानीय प्रशासन का प्रबंधन करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते थे। कई क्षेत्रों में सभाएँ और परिषदें (नाडु) थीं, जिनमें प्रभावशाली स्थानीय हस्तियाँ और जमींदार शामिल थे, जो स्थानीय शासन और न्यायिक मामलों में भूमिका निभाते थे।

इस प्रकार ..प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग एक गतिशील समूह था जिसकी संरचना और प्रभाव समय के साथ विकसित हुआ। वैदिक काल में आदिवासी सरदारों और परिषदों से लेकर मौर्य और गुप्त साम्राज्यों की संरचित नौकरशाही और प्रारंभिक मध्ययुगीन काल के क्षेत्रीय राजाओं और कुलीनों तक, इन अभिजात वर्ग ने प्राचीन भारत के राजनीतिक परिदृश्य को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

18.4.2 मध्यकालीन भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग

मध्यकालीन भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग एक विविध और गतिशील समूह था, जो विभिन्न क्षेत्रों और अवधियों में काफी भिन्न था। यहाँ प्रमुख मध्यकालीन भारतीय साम्राज्यों और क्षेत्रों में राजनीतिक अभिजात वर्ग के प्रमुख तत्वों का अवलोकन दिया गया हैः

1. दिल्ली सल्तनत (1206–1526)

सुल्तानः दिल्ली सल्तनत के शासक, जैसे कुतुब–उद–दीन ऐबक, इल्तुतमिश और अलाउद्दीन खिलजी, सर्वोच्च अधिकारी थे। वे विशाल क्षेत्रों को नियंत्रित करते थे और प्रशासन और सैन्य मामलों पर उनका महत्वपूर्ण प्रभाव था। दिल्ली सल्तनत कुलीनों और सैन्य कमांडरों के एक वर्ग पर बहुत अधिक निर्भर थी, जिसमें वजीर और मुख्य सैन्य कमांडर (अमीर–ए–तुजुक) जैसे उच्च पदस्थ अधिकारी शामिल थे। ये कुलीन अक्सर बड़ी जागीरों को नियंत्रित करते थे और उनका क्षेत्रीय प्रभाव काफी था। क्षेत्रीय गवर्नर (इक्तादार): सुल्तानों ने प्रांतों (इक्ता) का प्रबंधन करने के लिए क्षेत्रीय गवर्नर नियुक्त किए। इन राज्यपालों के पास अपने क्षेत्रों में काफी शक्ति थी और वे साम्राज्य पर नियंत्रण बनाए रखने के लिए महत्वपूर्ण थे।

2. विजयनगर साम्राज्य (1336–1646)

राजाः विजयनगर साम्राज्य के शासक, जैसे कृष्णदेवराय, राजनीतिक अभिजात वर्ग के लिए केंद्रीय थे। उन्होंने शासन, सैन्य अभियानों और सांस्कृतिक संरक्षण में प्रमुख भूमिका निभाई। साम्राज्य में कुलीनों और मंत्रियों का एक वर्ग था जो प्रशासन के लिए आवश्यक थे। प्रमुख पदों में महामंडलेश्वर (सैन्य कमांडर) और मंत्रिपरिषद शामिल थे। विजयनगर साम्राज्य कई प्रांतों में विभाजित था, जिनमें से प्रत्येक पर एक क्षेत्रीय गवर्नर का शासन था। ये गवर्नर साम्राज्य के विशाल क्षेत्रों के प्रबंधन के लिए महत्वपूर्ण थे।

3. बहमनी सल्तनत (1347–1527)

बहमनी सल्तनत के शासक, जैसे मुहम्मद तृतीय और महमूद गवन, साम्राज्य की राजनीतिक संरचना के लिए केंद्रीय थे। दिल्ली सल्तनत के समान, बहमनी सल्तनत प्रशासन और रक्षा के प्रबंधन के लिए कुलीनों और सैन्य नेताओं के एक वर्ग पर निर्भर थी। बहमनी सल्तनत को प्रांतों (देशों) में विभाजित किया गया था, जिनमें से प्रत्येक पर एक क्षेत्रीय प्रशासक का शासन था।

4. मुगल साम्राज्य (1526–1857)

मुगल सम्राटः बाबर से लेकर अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ और औरंगजेब जैसे प्रमुख शासकों तक, सम्राट राजनीतिक अभिजात वर्ग के शीर्ष थे। उनके पास सर्वोच्च शक्ति थी और वे शासन और नीति–निर्माण के लिए केंद्रीय थे। मनसबदार उच्च पदस्थ अधिकारी और सैन्य कमांडर थे, जो सम्राट द्वारा निर्दिष्ट रैंक (मनसब) रखते थे। उनकी स्थिति और भूमि अनुदान उनके मनसब पर निर्भर करते थे। उन्होंने प्रशासन, सैन्य अभियानों और क्षेत्रीय शासन में महत्वपूर्ण भूमिकाएँ निभाईं। दरबारी अधिकारीः प्रमुख प्रशासनिक पदों में वजीर (प्रधान मंत्री), मीर बख्शी (सैन्य मामलों के मंत्री) और काजी–उल–कजात (मुख्य न्यायाधीश) शामिल थे। ये अधिकारी साम्राज्य के दिन–प्रतिदिन के प्रशासन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते थे। प्रत्येक प्रांत या सूबा पर एक सूबेदार का शासन होता था, जो स्थानीय प्रशासन और अपने क्षेत्र में मुगल सत्ता को बनाए रखने के लिए जिम्मेदार होता था।

5. मराठा साम्राज्य (1674–1818)

मराठा साम्राज्य की स्थापना छत्रपति शिवाजी महाराज ने की थी, जो सर्वोच्च शासक थे। शिवाजी के बेटों और बाद के शासकों सहित उनके उत्तराधिकारी राजनीतिक अभिजात वर्ग में केंद्रीय व्यक्ति बने रहे। मराठा प्रशासन को कुलीनों और प्रशासकों के एक समूह द्वारा समर्थित किया गया था जो शासन के विभिन्न पहलुओं का प्रबंधन करते थे। प्रमुख पदों में पेशवा (प्रधान मंत्री) और विभिन्न परिषद सदस्य शामिल थे। मराठा साम्राज्य का विस्तार मुख्य रूप से सैन्य नेताओं और कमांडरों द्वारा संचालित था, जिन्होंने प्रशासन और युद्ध दोनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

पूरे मध्यकालीन भारत में, राजनीतिक अभिजात वर्ग में शासक, कुलीन, सैन्य कमांडर और प्रशासक शामिल थे। उनका प्रभाव उनके संबंधित साम्राज्यों या राज्यों की राजनीतिक संरचना और प्रशासनिक आवश्यकताओं के आधार पर भिन्न होता था।

18.4.3 ब्रिटिश काल में राजनीतिक अभिजन

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य (1757–1947) के दौरान, राजनीतिक अभिजात वर्ग में कई प्रमुख व्यक्ति और समूह शामिल थे, जिनमें ब्रिटिश अधिकारी और भारतीय नेता शामिल थे, जिन्होंने प्रशासन, शासन और राजनीतिक आंदोलनों में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी। इस अवधि के दौरान राजनीतिक अभिजात वर्ग का विवरण इस प्रकार हैः

ब्रिटिश अधिकारी

1. **ब्रिटिश वायसरायः** भारत का वायसराय भारत में सबसे उच्च पद का ब्रिटिश अधिकारी था, जो ब्रिटिश क्राउन का प्रतिनिधित्व करता था और भारतीय उपमहाद्वीप के प्रशासन की देखरेख करता था। उल्लेखनीय वायसराय में लॉर्ड वॉरेन हेस्टिंग्स शामिल हैं, जो भारत के पहले गवर्नर–जनरल थे, और लॉर्ड माउंटबेटन, अंतिम वायसराय जिन्होंने भारत के विभाजन और स्वतंत्रता की देखरेख की।

2. **गवर्नर–जनरलः** वायसराय की उपाधि स्थापित होने से पहले, भारत का गवर्नर–जनरल ब्रिटिश ईस्ट इंडिया कंपनी और बाद में ब्रिटिश राज का मुख्य कार्यकारी अधिकारी था। लॉर्ड कॉर्नवालिस और लॉर्ड वेलेस्ली जैसे लोगों ने ब्रिटिश नीतियों और प्रशासनिक प्रथाओं को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

3. **ब्रिटिश प्रशासक और नौकरशाहः** इस समूह में ब्रिटिश भारत के प्रशासन के लिए जिम्मेदार विभिन्न उच्च पदस्थ अधिकारी शामिल थे। प्रमुख पदों में भारत के राज्य सचिव शामिल थे, जो ब्रिटेन से भारतीय मामलों की देखरेख करते थे, और प्रांतों के लेफ्टिनेंट गवर्नर और जिला अधिकारियों जैसे वरिष्ठ प्रशासक शामिल थे।

4. **ब्रिटिश सैन्य नेताः** सर रॉबर्ट क्लाइव और जनरल लॉर्ड लेक जैसे सैन्य नेताओं ने सैन्य अभियानों और रणनीतिक अभियानों के माध्यम से भारत पर ब्रिटिश नियंत्रण स्थापित करने और उसे मजबूत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई थी।

भारतीय नेता और सुधारक

1. **भारतीय राजकुमार और महाराजाः** कई भारतीय रियासतों पर स्थानीय राजकुमारों और महाराजाओं का शासन था, जो नाममात्र स्वायत्त होते हुए भी अक्सर ब्रिटिश अधिकारियों के साथ बातचीत करते थे। वे संधियों पर बातचीत करने और अपने राज्यों के भीतर व्यवस्था बनाए रखने में महत्वपूर्ण थे।

2. **राष्ट्रवादी नेताः** महात्मा गांधी, जवाहरलाल नेहरू और सुभाष चंद्र बोस जैसे भारतीय स्वतंत्रता आंदोलन के नेताओं ने ब्रिटिश शासन को चुनौती देने और भारतीय स्वशासन की वकालत करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। गांधी का अहिंसा का दर्शन और नेहरू का धर्मनिरपेक्ष, लोकतांत्रिक भारत का दृष्टिकोण स्वतंत्रता आंदोलन की दिशा तय करने में प्रभावशाली थे।

3. **राजनीतिक दल और संगठनः** भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस (Indian National Congress) और अखिल भारतीय मुस्लिम लीग (All India Muslim League) प्रमुख राजनीतिक संगठन थे जो ब्रिटिश सरकार के साथ जुड़े थे। बाल गंगाधर तिलक, लाला लाजपत राय और जिन्ना जैसे नेता इन संगठनों के प्रमुख व्यक्ति थे।

4. **सामाजिक सुधारकः** राजा राम मोहन राय, जिन्होंने ब्रह्मो समाज की स्थापना की, और बी.आर. अंबेडकर, जिन्होंने दलितों के अधिकारों की वकालत की और भारतीय संविधान पर काम किया, सामाजिक सुधार और भारतीय समाज के आधुनिकीकरण में प्रभावशाली थे।

औपनिवेशिक प्रशासन

1. **सिविल सेवाएँः** भारतीय सिविल सेवाएँ , ब्रिटिश राज की प्रशासनिक शाखा थी, जिसमें ब्रिटिश और भारतीय अधिकारी शामिल थे जो देश के दिन–प्रतिदिन के प्रशासन का प्रबंधन करते थे। वरिष्ठ अधिकारियों ने स्थानीय शासन और नीति कार्यान्वयन में महत्वपूर्ण प्रभाव डाला।

2. **विधायी निकायः** अंग्रेजों ने विभिन्न विधायी निकायों की शुरुआत की, जैसे कि इंपीरियल विधान परिषद और प्रांतीय विधायिकाएँ। इन परिषदों के ब्रिटिश और भारतीय सदस्यों ने कानून बनाने और शासन में भूमिका निभाई, हालांकि ब्रिटिश नियंत्रण की सीमाओं के भीतर।

3. **आर्थिक सलाहकार और प्रशासकः** व्यापार, कराधान और बुनियादी ढांचे के विकास की देखरेख करने वाले सहित आर्थिक नीतियों के लिए जिम्मेदार अधिकारी ब्रिटिश शासन के अभिन्न अंग थे। लॉर्ड कर्जन जैसे व्यक्ति, जिन्होंने विभिन्न प्रशासनिक सुधारों को लागू किया, इस संदर्भ में उल्लेखनीय थे।

सांस्कृतिक और बौद्धिक व्यक्ति

1. **लेखक और बुद्धिजीवीः** ब्रिटिश और भारतीय लेखकों और बुद्धिजीवियों, जैसे रुडयार्ड किपलिंग और रवींद्रनाथ टैगोर ने औपनिवेशिक काल के दौरान जनमत और सांस्कृतिक आदान–प्रदान को प्रभावित

किया। उनके कार्यों ने अक्सर ब्रिटिश भारत की सामाजिक और राजनीतिक वास्तविकताओं को प्रतिबिंबित और आलोचना की।

2. **शैक्षिक सुधारकः** ब्रिटिश और भारतीय दोनों सुधारकों ने भारत के शैक्षिक परिदृश्य को आकार देने में भूमिका निभाई। ब्रिटिश शैक्षिक नीतियों का उद्देश्य शिक्षित भारतीयों का एक वर्ग बनाना था जो प्रशासन में सहायता कर सकें, जबकि भारतीय सुधारकों ने अधिक समावेशी और प्रगतिशील शिक्षा प्रणाली की वकालत की।

भारत में ब्रिटिश साम्राज्य के दौरान राजनीतिक अभिजात वर्ग ब्रिटिश अधिकारियों और भारतीय नेताओं का एक जटिल मिश्रण था, जिनमें से प्रत्येक की शासन, प्रशासन और स्वतंत्रता संग्राम में महत्वपूर्ण भूमिका थी।

18.4.4 स्वतन्त्र भारत में अभिजात वर्ग

1947 में भारत को स्वतंत्रता मिलने के बाद, राजनीतिक अभिजात वर्ग में नेताओं और अधिकारियों का एक विविध समूह शामिल था, जिन्होंने नए स्वतंत्र राष्ट्र को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। यहाँ स्वतंत्रता के बाद के भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग के प्रमुख घटकों का विवरण दिया गया हैः

1. संवैधानिक नेता

जवाहरलाल नेहरूः स्वतंत्र भारत के पहले प्रधान मंत्री के रूप में, नेहरू गणतंत्र के शुरुआती वर्षों में एक केंद्रीय व्यक्ति थे। उनके नेतृत्व ने भारत की विदेश नीति, आर्थिक विकास और लोकतांत्रिक संस्थाओं की स्थापना में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। **डॉ. बी.आर. अंबेडकरः** भारतीय संविधान के प्रमुख वास्तुकार, अंबेडकर देश के कानूनी ढांचे का मसौदा तैयार करने में एक प्रमुख नेता थे। उनके काम ने सामाजिक न्याय और समानता पर जोर देते हुए भारत की लोकतांत्रिक और कानूनी प्रणाली की नींव रखी।**सरदार वल्लभभाई पटेलः** पहले उप प्रधान मंत्री और गृह मंत्री के रूप में, पटेल ने रियासतों को भारतीय संघ में एकीकृत करने और देश की आंतरिक सुरक्षा और प्रशासनिक संरचना को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।

2. राजनीतिक दल और नेता

भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस स्वतंत्र भारत के शुरुआती वर्षों में प्छब प्रमुख राजनीतिक दल था। **नेहरू, इंदिरा गांधी (नेहरू की बेटी) और राजीव गांधी (उनके बेटे)** जैसे नेता पार्टी के भीतर प्रभावशाली व्यक्ति थे। उन्होंने शासन, आर्थिक नीति और राजनीतिक रणनीति में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। भारतीय जनता पार्टी (भाजपा) ने खासकर 1980 के दशक के बाद एक महत्वपूर्ण राजनीतिक ताकत के रूप में

उभरी। अटल बिहारी वाजपेयी और लाल कृष्ण आडवाणी जैसे नेता प्रमुख व्यक्ति थे जिन्होंने पार्टी की नीतियों और भारतीय राजनीति में इसकी भूमिका को आकार दिया और वर्तमान में **नरेन्द्र मोदी** विश्व के सर्वाधिक प्रभावशाली व्यक्तियों में एक है जोकि भारत के राजनीतिक अभिजन है।

3. प्रशासनिक अधिकारी

सिविल सेवकः भारतीय प्रशासनिक सेवा, भारतीय विदेश सेवा और भारतीय पुलिस सेवा देश के प्रशासन के लिए महत्वपूर्ण हैं। इन सेवाओं में उच्च पदस्थ अधिकारी, जैसे कि कैबिनेट सचिव और मुख्य सचिव, नीतियों को लागू करने और दिन–प्रतिदिन के शासन को प्रबंधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। भारत के सर्वोच्च न्यायालय और विभिन्न उच्च न्यायालयों का नेतृत्व मुख्य न्यायाधीश और अन्य वरिष्ठ न्यायाधीश करते हैं जो कानूनों की व्याख्या करने और न्याय सुनिश्चित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। उल्लेखनीय हस्तियों में हरिलाल जेकिसुंदस कानिया और वाई.वी. चंद्रचूड़ जैसे मुख्य न्यायाधीश शामिल हैं।

4. क्षेत्रीय नेता

ममता बनर्जी (पश्चिम बंगाल), योगी आदित्यनाथ (उत्तर प्रदेश) और के. चंद्रशेखर राव (तेलंगाना) जैसे भारतीय राज्यों के नेताओं का क्षेत्रीय शासन और राजनीति पर महत्वपूर्ण प्रभाव है। उनकी नीतियाँ और नेतृत्व उनके संबंधित राज्यों के राजनीतिक परिदृश्य को प्रभावित करते हैं। इनके अतिरिक्त जैसे मायावती, केजरीवाल, चन्द्रबाबू नायडू, लालू यादव, नितिश कुमार इत्यादि भी राजनीतिक अभिजन है।

5. आर्थिक सलाहकार

मनमोहन सिंह (जिन्होंने वित्त मंत्री और बाद में प्रधान मंत्री के रूप में कार्य किया) सहित वित्त मंत्री और आर्थिक सलाहकार जैसे व्यक्तियों ने भारत की आर्थिक नीतियों और सुधारों को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है। इसके अतिरिक्त बड़े–बड़े व्यापारी वर्ग भी कही न कही परोक्ष रूप से राजनीतिक अभिजनों को प्रभावित करते है।

6. सामाजिक और सांस्कृतिक हस्तियाँ

सार्वजनिक बुद्धिजीवी और समाज सुधारकः डॉ. एपीजे अब्दुल कलाम (पूर्व राष्ट्रपति और वैज्ञानिक) और मेधा पाटकर जैसी कार्यकर्ताओं ने शिक्षा, विज्ञान और सामाजिक सुधार में अपने काम के माध्यम से सार्वजनिक चर्चा और सामाजिक नीतियों को प्रभावित किया है।

7. विधायी नेता

लोकसभा के अध्यक्ष और राज्यसभा के सभापति सहित संसद के दोनों सदनों के नेता विधायी प्रक्रिया और संसदीय कार्यवाही में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। सोमनाथ चटर्जी और एम. हामिद अंसारी जैसी हस्तियाँ इन भूमिकाओं में उल्लेखनीय रही हैं।

स्वतंत्र भारत में राजनीतिक अभिजात वर्ग का वर्णन देश की जटिल और विकसित होती लोकतांत्रिक संरचना को दर्शाती है, जिसमें शासन, राजनीति, प्रशासन और सामाजिक सुधार सहित विभिन्न क्षेत्रों के नेता शामिल हैं।

भारत में राजनीतिक अभिजन के स्वरूप में आज के समय में काफी बदलाव आया है। आज के भारत में राजनीतिक अभिजनों का आधार प्रजातान्त्रिक हो गया है। अब प्रदत्त प्रस्थिति का कोई महत्व नही रहा हैं। समाज के लगभग प्रत्येक वर्ग से राजनीतिक अभिजन देखने को मिल जा रहे है। ग्रामीण समुदायों में भी 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के बाद काफी सीमा तक बदलाव देखने को मिल रहा है। ग्रामों में भी महिलाये भी राजनीतिक अभिजन बनने की महत्वाकांक्षा को उजागर कर रही है। इस प्रकार से समाज में पदमूलक गतिशीलता भी देखने को मिल रही है, जिसमें कि समाज के उस वर्ग का भी प्रतिनिधित्व देखने को मिल रहा है जोकि ऐतिहासिक तौर पर समाज के सबसे निचले पायदान पर पाया जाता था। इन विविध प्रकार के नवीन प्रक्रियाओं ने भारत में राजनीतिक अभिजन के स्वरूप को नवीन आयाम प्रदान किया है।

18.5 सारांश

भारत में राजनीतिक अभिजन के बारे में हमने जानने का प्रयास किया। भारत के राजनीतिक उद्भव की जड़ो को परम्परागत जाति व्यवस्था में पाते है तथा उसी के आधार पर यह निर्धारित होता था कि द्विज जातियों में अभिजन कौन होगा। इसमें सबसे उल्लेखनीय बात यह रही थी कि प्रत्येक द्विज जातिगत समुदाय के अभिजन मात्र उन्ही के जातिगत समुदायों तक ही सीमित थे। इसके अतिरिक्त भारत में गैर द्विज जातियों को जातिगत संरचना में शामिल न करने के कारण उन्हें पुरातन समय में वंचना का दंश झेलना पड़ा जिसके कारण अभिजन वर्ग में उनकी भूमिका नगण्य थी। इन राजनीतिक अभिजनों के स्रोतो में हमने पाया कि जिस वर्ग के पास लोगो या समूह के साथ जोड़–तोड़ करने की क्षमता होती है उनके राजनीतिक अभिजन बनने के सर्वाधिक अवसर होते है। इसके अतिरिक्त जातिगत नियम, प्रभु जाति इत्यादि राजनीतिक अभिजन के प्रमुख स्रोत रहे है। भारत में राजनीतिक अभिजनों के अध्ययनों में हमने देखा कि उनमें समाजशास्त्रीय आधार में सामाजिक स्तरीकरण का पाया जाना स्वाभाविक था, जिसमें कि

जाति व्यवस्था अपनी अहम भूमिका को अदा करती दृष्टिगोचर होती है। इसके अतिरिक्त भारत में रजनी कोठारी, श्रीनिवास, आन्द्रे बेतई, आस्कर लेविस, जोया हसन, गेल ओमवेट एवं जैफरलॉट इत्यादि के अध्ययन महत्वपूर्ण है। जोकि भारतीय समाज में राजनीतिक अभिजन को समझने में सहायता प्रदान करती है। इन अध्ययनों के द्वारा हमें यह ज्ञात होता है कि भारत में राजनीतिक व्यवस्था का संचालन कौन करता था। राजनीतिक अभिजन के बारे में हमने चार चरणों में इसका इस ईकाई में वर्णन किया है। प्रथम हमने प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजनों को देखा तथा देखा कि भारतीय समाज में राजनीतिक अभिजन को निर्धारित करने में धार्मिक व्यवस्था का महत्वपूर्ण हाथ रहा है। जिसमें जातिगत नियम एवं राजा तथा महामात्य के अधिकारों का वर्णन है। इसके अतिरिक्त ग्राम पंचायतों में जाति पंचायतों का सर्वाधिक महत्व था। द्वितीय मुगल शासन में हमने सामन्तवादी व्यवस्था की जड़ों को और मजबूत होते हुये देखा तथा जागीरदारी एवं मनसबदारी प्रथा ने राजनीतिक अभिजनों को मजबूती प्रदान की। तृतीय ब्रिटिश शासन में हमने पाया कि गवर्नर जनरल एवं वायसराय आदि राजनीतिक अभिजन के रूप में देखे गये। इसमें एक और राजनीतिक अभिजन का उदय हुआ जिन्होने राष्ट्रवाद को लेकर कई प्रकार के आन्दोलन किये तथा अपने देश के लिये अहम भूमिका अदा की। जिसमें नेहरू, गांधी एवं जिन्ना आदि प्रमुख रूप से देखे जा सकते है। इसके अतिरिक्त सुधारवादियों में राजा राम मोहन राय एक प्रमुख राजनीतिक अभिजन के उदाहरण के रूप में देखे जा सकते है। चर्तुथ चरण स्वतन्त्रता के बाद का आया जिसमें कि राजनीतिक अभिजनों का उदय नवीन प्रजातांत्रिक व्यवस्था के आधार पर देखने को मिलता है तथा 73वें संविधान संशोधन अधिनियम के माध्यम से ग्रामों में भी गैर द्विज जातियों में से राजनीतिक अभिजन देखने को मिलता है। इस प्रकार भारत में परम्परागत राजनीतिक अभिजन को नवीन प्रक्रियाओं एवं मूल्यों ने प्रतिस्थापित कर समतामूलक मूल्यों के आधार पर राजनीतिक अभिजनों को जन्म दिया है।

18.6 बोध के प्रश्न

लघु उत्तरी प्रश्न

1 भारतीय राजनीतिक अभिजन के स्रोत क्या है?

2 प्राचीन भारतीय राजनीतिक अभिजन का संक्षेप में आधार लिखिये।

3 आधुनिक भारतीय राजनीतिक अभिजन की विशेषताएं लिखिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्न

1. प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजन का आधार क्या था?

(क) जाति (ख) वर्ग (ग) लिंग (घ) ये सभी

2. प्राचीन भारत में राजनीतिक अभिजन का उदाहरण बताये।

(क) वकील (ख) नौकरशाह (ग) ब्राहम्ण (घ) पुलिस

3. निम्नलिखित में कौन सा प्राचीन राजनीतिक अभिजन नही है?

(क) ब्राहम्ण (ख) क्षत्रिय (ग) साहूकार (घ) शूद्र

4. स्वतन्त्रता के बाद भारत में किस प्रकार के शासन के आधार पर राजनीतिक अभिजन का उदय देखने को मिलता है?

(क) वृद्धतन्त्र (ख) अल्पतन्त्र (ग) राजतन्त्र (घ) प्रजातन्त्र

5. 73वें संविधान संशोधन से भारत में कौन से जातिगत समुदाय को राजनीतिक अभिजन बनने का अवसर प्राप्त हुआ?

(क) क्षत्रिय समुदाय (ख) ब्राम्हण समुदाय (ग) वैश्य समुदाय (घ) दलित समुदाय

दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. भारतीय राजनीतिक अभिजन के विकास के चरणों को लिखिये।

2. भारतीय राजनीतिक अभिजनों के प्रमुख अध्ययनों का वर्णन करते हुये इसकी समाजशास्त्रीय विवेचना कीजिये।

वस्तुनिष्ठ प्रश्नों के उत्तर

1. (क), 2. (ग), 3. (घ), 4. (घ), 5. (घ)

18.7 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. Eaton, Richard M. "A Social History of the Deccan, 1300-1761: Eight Indian Lives." Cambridge University Press, 2005.

2. Habib, Irfan. "Medieval India: The Study of a Civilization." National Book Trust, 2007.

3. Hasan, Zoya. Democracy and the Crisis of Inequality. New Delhi: Oxford University Press, 2011.

4. Jackson, Peter. "The Delhi Sultanate: A Political and Military History." Cambridge University Press, 1999.

5. Jaffrelot, Christophe. India's Silent Revolution: The Rise of the Lower Castes in North India. London: Hurst & Company, 2003.

6. Jaffrelot, Christophe. The Hindu Nationalist Movement and Indian Politics: 1925 to the 1990s. New York: Columbia University Press, 1996.

7. Jamison, Stephanie W., and Brereton, Joel P. "The Rigveda: The Earliest Religious Poetry of India." Oxford University Press, 2014.

8. Kalidasa. "The Recognition of Shakuntala," translated by Arthur W. Ryder. University of California Press, 1912. pages 10-30.

9. Kautilya. "Arthashastra," translated by L.N. Rangarajan. Penguin Books India, 1992. PP 95-120

10. Kaviraj, Sudipta. The Imaginary Institution of India: Politics and Ideas. New York: Columbia University Press, 2010.

11. Kothari, Rajni. Politics in India. Boston: Little, Brown and Company, 1970.

12. Kulke, Hermann, and Rothermund, Dietmar. "A History of India." Routledge, 2004.

13. Mukherjee, Subrata, and Ramaswamy, Sushila. "History of Political Thought: Ancient and Medieval." PHI Learning Pvt. Ltd., 2004. Pages 45-85

14. Omvedt, Gail. Dalits and the Democratic Revolution: Dr. Ambedkar and the Dalit Movement in Colonial India. New Delhi: Sage Publications, 1994.

15. Omvedt, Gail. Understanding Caste: From Buddha to Ambedkar and Beyond. New Delhi: Orient BlackSwan, 2007.

16. Richards, John F. "The Mughal Empire." Cambridge University Press, 1993.

17. Sastri, K.A. Nilakanta. "The Cholas." University of Madras, 1935. Pages 75-120

18. Sharma, R.S. "Early Medieval Indian Society: A Study in Feudalisation." Orient Blackswan, 2001. Pages 50-100 and 150-200

19. Singh, Upinder. "A History of Ancient and Early Medieval India: From the Stone Age to the 12th Century." Pearson Education India, 2008. Pages 300-350 and 450-500

20. Srinivas, M. N. Caste in Modern India and Other Essays. Bombay: Asia Publishing House, 1962.

21. Stein, Burton. "Vijayanagara." Cambridge University Press, 1989.

22. Thapar, Romila. "Ashoka and the Decline of the Mauryas." Oxford University Press, 1961. Pages 130-175

23. बघेल डी.एस.,सिंहटी.पी.:राजनीतिक समाजशास्त्रए विवेक प्रकाशनए दिल्ली,2022.

24. जैन पी.सी., राजनीतिक समाजशास्त्र, रावत पब्लिकेशन्स, जयपुर, 2023।

इकाई : 19 : दबाव समूह या हित समूह का अर्थ, प्रकृति एवं विशेषतायें

इकाई की रूपरेखा

19.0 उद्देश्य

19.1 प्रस्तावना

19.2 दबाव समूह के अर्थ एवं परिभाषायें

19.3 दबाव समूह की प्रकृति

19.4 दबाव समूह की विशेषतायें

19.5 दबाव समूह और हित समूह में अन्तर

19.6 दबाव समूह की राजनीति के निर्धारक तत्व

19.7 सारांश

19.8 बोध प्रश्न

19.8.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

19.8.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

19.9 संदर्भ सूची /उपयोगी पुस्तकें

19.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन के उपरान्त आप :

- दबाव समूह के अर्थ एवं परिभाषा को समझ सकेंगें।
- दबाव समूह की प्रकृति एवं विशेषताओं की जानकारी प्राप्त कर सकेंगें।
- दबाव समूह और हित समूह में अन्तर स्पष्ट कर सकेंगें।
- दबाव समूह की राजनीति के निर्धारक तत्वों का विश्लेषण कर सकेंगें।

19.1 प्रस्तावना

दबाव समूह ऐसे लोगों का औपचारिक संगठन है जिनके एक या अधिक सामान्य उद्देश्य या स्वार्थ होते हैं और जो किसी व्यवस्था में घटनाक्रम को विशेष रूप से सार्वजनिक नीति के निर्माण इसलिए प्रभावित करने का प्रयत्न करते रहते हैं, ताकि वे अपने हितों की रक्षा एवं वृद्धि कर सकें। ये राजनीतिक दल और शासन के मध्य सम्पर्क–सूत्र की भूमिका निभाते हैं। बीसवीं व इक्कीसवीं सदी की परिवर्तित जागरूक परिस्थितियों को ध्यान से देखें तो मानव जीवन के सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक एवं सांस्कृतिक पक्षों से जुड़े हितों एवं गतिविधियों से प्रासंगिक विविधतापूर्ण आयामों को समुचित प्रतिनिधित्व प्रदान करना राजनीतिक दलों के लिए संभव नही है, इसिलिए सामाजिक जीवन से सम्बद्ध विविध हितों को यथोचित प्रतिनिधित्व देने एवं उन हितों की समुन्नति करने के उद्देश्य से दबाव समूहों का उद्भव एवं विकास हुआ। राजनीतिक व्यवस्था में दबाव समूहों की मौजुदगी कोई नई बात नहीं है। सभी प्रकार की शासन व्यवस्थाओं में और प्रत्येक समाज में दबाव समूहों का अस्तित्व विद्यमान रहा वर्तमान परिप्रेक्ष्य में सभी प्रकार की व्यवस्थाओं में दबाव समूह राजनीति की एक महत्वपूर्ण इकाई के रूप में क्रियाशील हैं और अपने सम्बद्ध समाज के लाभ के लिए क्रियात्मक भूमिकाओं का निष्पादन कर रहें हैं। विभिन्न राजनीतिक व्यवस्थाओं दबाव तथा हित समहों को लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के संचाल न के सक्रिय सहयोगी के रूप में स्वीकारा जाने लगा है।

19.2 दबाव समूह के अर्थ एवं परिभाषायें

विभिन्न विद्वानों द्वारा दबाव समूह को कई नामों से संबोधित किया गया है:जैसे –हित समूह, अनौपचारिक संगठन, गैर सरकारी संगठन, लॉबीज आदि। सन् 1908 में आर्थर बेण्टले की रचना 'Process of Government' प्रकाशित होने के पश्चात् दबाब समूहों का अध्ययन क्रियाशील राजनीति के तथ्यपूर्ण

अध्ययन की दृष्टि से काफी महत्त्वपूर्ण हो गया। प्रो.एस.ई. फाइनर ने उसे 'अज्ञात् साम्राज्य' (Anonymous Empire) की संज्ञा दी है। प्रारम्भिक दौर में ब्रिटेन, अमेरिका, फ्रांस व इटली आदि विकसित पश्चात्य लोकतंत्रीय व्यवस्थाओं में मौजूद दबाव समूहों का अध्ययन किया गया, लेकिन बाद में विकासशील व्यवस्थाओं में विद्यमान दबाव समूहों का अध्ययन भी राजनीतिक विद्वानों के शोध का विषय बना।

समाज ने दबाव समूह समाज के विविन्न हितों का प्रतिनिधित्व करने वाला एक ऐसा संगठन है जो अपने सदस्य के हितवर्द्धन हेतु सार्वजनिक नीतियों को प्रभावित करने का भरपूर प्रयास करता है। राजनीतिक व्यवस्था में विद्यमान सभी संगठनों को दबाव समूह की कोटि में नहीं रखा जा सकता है। यहां तक कि दबाव समूह व हित समूह में भी अन्तर है। उदारवादी लोकतंत्र का लक्ष्य समाज में मौजूद परस्पर विरोधी हितों में सामंजस्य स्थापित करना है। इस लोकतांत्रिक व्यवस्था का आधारतत्त्व है–नागरिकों के विचार अभिव्यक्ति की आजादी तथा संगठन बनाने और सभा करने की स्वतंत्रता । राजनीतिक स्वतंत्रता समानता इस व्यवस्था का मर्मत्तत्त्व है। इस राजनीतिक यथार्थ के परिप्रेक्ष्य में व्यवस्था के सदस्य अपने विशेष हितों की पहचान करके उनकी प्राप्ति के लिए विशेष समूहों के रूप में संगठित होते हैं। विभिन्न हितों का प्रतिनिधित्व करने वाले संगठित विभिन्न समूहों से लोग अपने हित और रुचि के अनुरूप जुड़कर संगठन की गतिविधियों में भागीदारी करते हैं। ऐसे मानव समूह को'साहचर्य' (Association) का नाम दिया जाता है।

जब कोई हित समूह अत्यधिक सक्रिय होकर अन्य हित समूहों की अपेक्षाकृत अपने हितों की सिद्धि के लिए सरकार पर विशेष दबाव बनाने की स्थिति प्राप्त कर लेता है तो उसे दबाव समूह की संज्ञा दी जाती है. यानी कि सत्ता को प्रभावित करने के मजबूत इरादे से जब हित समूह की राजनीतिक सक्रियता अत्यधिक बढ़ जाती है तो वे दबाव समूह कहलाने लगते हैं। दबाव समूह न तो राजनीतिक संगठन हैं और न ही चुनाव में अपना उम्मीदवार खड़ा करते हैं। ये हमेशा किसी विशेष पक्ष से संबद्ध होते हैं और अपने पक्ष के हित की समुन्नति के लिए चुनाव में किसी राजनीतिक दल के प्रत्याशी का समर्थन करते हैं। अत्यधिक प्रभावशालीदबाव समूह को अब 'लॉबी' कहा जाता है।

दबाव समूह और हित समूह की प्रकृति में कोई मौलिक अन्तर नहीं है। राजनीतिक विश्लेषक दबाव समूह को ऐसा हित समूह कह सकते हैं जो सामान्यतः अपने सदस्यों के संकीर्ण हितों की सिद्धि के लिए सरकार परविशेष दबाव बनाने की कोशिश करते हैं। इस कार्य को अंजाम देने के लिए दबाव समूह जनसंपर्क, प्रचार, विज्ञापन, धरना, प्रदर्शन हड़ताल आदि का सहारा लेते हैं। ऐसे समूह अपने हितों कोबढ़ावा देने के लिए अन्य वर्गों के हितों को बीछे धकेलने से भी बाज नहीं आते हैं। हालांकि, व्यवस्था के समक्ष अपना पक्ष प्रस्तुत करते समय इनके द्वारा यह दुहाई दी जाती है कि उनका प्रस्ताव सार्वजनिक हितों की

रक्षा ते प्रासगिक है। इसी प्रकार, जय शासक अभिजन नीतियों व निर्णयों के निर्माण तथा कार्यान्वयन के समय इन समूहों के दृष्टिकोण को साथ लेकर चलने का प्रयास करते हैं–और इस हेतु संगठन से सम्पर्क करते हैं, तो वे यह नहीं देखते हैं कि संबद्ध संगठन दबाव समूह है या हित समूह।

दबाव समूह के स्वरूप एवं कार्यशैली को रेखांकित करने के उद्देश्य से कुछ विद्वानों द्वारा विषय को परिभाषित करने का प्रयास किया गया है, जो निम्नांकित है :–

- माइरन वीनर के शब्दों में, "दबाव समूह से हमारा तात्पर्य शासकीय व्यवस्था के बाहर किसी ऐसे ऐच्छिक लेकिन संगठित समूह से है जो शासकीय अधिकारियों की नामजदगी और नियुक्ति तथा विधि निर्माण और सार्वजनिक नीतियों के कार्यान्वयन को प्रभावित करने के लिए प्रत्यनशील रहते हैं।"
- पीटर ओडीगार्ड के शब्दों में, "दबाव समूह ऐसे लोगों के औपचारिक संगठन को कहते है जिसके पास एक या एक से अधिक उद्देश्य या स्वार्थ होते और जो राजनीतिक घटनाक्रम को, विशेष तौर पर सार्वजनिक नीतियों के निर्माण और प्रशासनिक कार्यों को इसीलिए प्रभावित करने की कोशिश करते हैं ताकि वे अपने हितों की रक्षा एवं वृद्धि कर सकें।"
- हरमन जीगलर ने अपनी रचना "Interest Groups पद American Society, 1964" में विषय को परिभाषित करते हुए कहा है कि "यह वह संगठित समूह है जो अपने सदस्यों को औपचारिक ढंग से सरकारी पदों पर नियुक्त कराने की कोशिश किए बिना सरकारी निर्णयों के संदर्भ को प्रभावित करना चाहता है।"

दबाब समूह को क्रियात्मक राजनीति के संदर्भ में यथार्थपरक दृष्टि से परिभाषित करने का प्रयास रॉबर्ट सी. बोन ने किया है। रॉबर्ट सी. बोन के शब्दों में, दबाब समूह राजनीतिक क्रियाओं में शामिल व्यक्तियों का संयोजन है जो शासन क्रिया पर औपचारिक नियंत्रण प्राप्त किये बिना समाज में मूल्यों के आधिकारिक निर्धारण के प्रसंग में अपने उद्देश्यों की प्राथमिकता के आधार पर उन्हें मुद्दों का स्वरूप देता है। यह परिभाषा इस तथ्य का स्पष्टीकरण करती है कि व्यवस्था संचालन में दबाव समूह की भूमिका सिर्फ सरकार या शासन क्रियाओं को प्रभावित करने तक सीमित नहीं हैं, अपितु आधुनिक व्यवस्थाओं में ये समूह नीति–निर्गतों

19.3 दबाव समूह की प्रकृति (Nature of Pressure Groups)

दबाव समूह के संदर्भ में दी गयी परिभाषाओं से यह स्पष्ट अर्थ निकलता है कि दबाव समूह की प्रकृति न तोराजनीतिक दलों की भांति पूर्णतः राजनीतिक होती है और न ही हित समूहों की भांति पूर्णतः अराजनीतिक होती है। दबाव समूहों की प्रकृति पूर्णरूप से अराजनीतिक नहीं कही जा सकती है, क्योंकि अपने हितों की पूर्ति के लिए ये समूह किसी न किसी रूप में राजनीतिक गतिविधियों में भागीदारी करते रहते हैं। इसका लक्ष्य मूल रूप से अपने विशेष हितों की रक्षा करना और विशिष्ट हितों की प्राप्ति हेतु हमेशा प्रयासरत रहना है। इनके विशेष हितों की पूर्ति का माध्यम सरकार व शासन की प्रक्रियाएं होती हैं, इसलिए इन समूहों का राजनीति से सदैव सरोकार होता है। लेकिन, ये राजनीतिक दलों की भांति क्रियाशील राजनीति से सीधा सरोकार नहीं रखते हैं, अतः इनकी प्रकृति पूर्णतः राजनीतिक भी नहीं होती है।

कार्यशैली के आधार पर दबाव समूहों की प्रकृति को न तो पूर्ण रूप से राजनीतिक माना जा सकता है औरन ही पूर्णतः अराजनीतिक, बल्कि वास्तविक स्तर पर इसकी प्रकृति दोनों के बीच की है। दबाव समूह की प्रकृति का विश्लेषण करते हुए **'हैरी एक्सटीन'** ने अपनी कृति 'Pressure Groups Politics, 1960 में यह लिखा है कि दबाव समूहों का रूप पूर्णतः राजनीतिकृत समूह से कम तथा पूर्णतः अराजनीतिकृत समूह से अधिक होता है। यह स्थिति वास्तव में राजनीतिक और अराजनीतिक के मध्य एक स्तर के बीच को गतिविधियों का होता है। दबाव समूह के संबंध में 'एक्सटीन' द्वारा की गयी अभिव्यक्ति से विषय की प्रकृति का संदर्भ पूरी तरह स्पष्ट होता है।

19.4 दबाव समूह की विशेषतायें

दबाव समूहों के अर्थ, परिभाषाएं, प्रकृति एवं दबाव समूह, हित समूह तथा राजनीतिक दल के बीच पाये जाने वाले अन्तरों से यह परिलक्षित होता है कि ये समूह एक विशेष प्रकार के संगठन है जो कुछ विशिष्ट लक्षणों से युक्त है। इन विशिष्ट लक्षणों के आधार पर ही दबाव समूहों को अन्य संगठनों, समुदायों से पृथक् किया जाता है। दबाव समूह के निम्नलिखित विशेषताएँ हैं :–

1. **औपरचारिक या अर्द्ध औपचारिक संगठन –** दबाव समूहों के लिए राजनीतिक दलों की भांति औपचारिक रूप से संगठित होने की बाध्यता नहीं है। ये समूह औपचारिक एवं अर्द्ध–औपचारिक दोनों रूपों में संगठित हो सकते हैं औपचारिक रूप से संगठित दबाव समूह ज्यादा प्रभावशाली भूमिकाओं का निष्पादन करते हैं। औपचारिक रूप से संगठित दबाव समूह ही अपने सदस्यों के विशेष हितों की रक्षा तथा हितवर्द्धन हेतु सरकार व शासन–प्रक्रिया पर विशेष दबाव बनाने और निर्गत नीतियों को अपनी ओर मोड़ने में सफलीभूत होते हैं। दबाव समूहों द्वारा प्राप्त की जाने वाली हित–सिद्धि की दृष्टि से आधुनिक विद्वानों ने दबाव समूहों की कारगर भूमिका के लिए औपचारिक

संगठन की अनिवार्यता की वकालत की है। इस विचार के समर्थकों की यह मान्यता है कि संगठन शब्द औपचारिकता का बोधक है, इसलिए दबाव समूहों के लिए औपचारिक संगठन बनाना अतिआवश्यक है। इन समूहों का मुख्य लक्ष्य अपने हितों की पूर्ति के लिए विशेष रूप से राजनीतिक प्रक्रियाओं को प्रभावित करने का है और कोई भी दबाव समूह अपने इस बुनियादी लक्ष्य की प्राप्ति तभी कर सकता है जब उसका संगठन औपचारिक तथा व्यवस्थित होता है।

2. **परिसीमित उद्देश्य** – दबाव समूहों द्वारा हमेशा किसी एक वर्ग का प्रतिनिधित्व किया जाता है. इसलिए इनका उद्देश्य या लक्ष्य पूर्व निर्धारित होता है। सभी दबाव समूह एक विशिष्ट लक्ष्य को साथ लेकर चलते हैं और उसकी सिद्धि के लिए ही अपनी समस्त गतिविधियों का संचालन करते हैं। आम तौर पर सभी दबाव समूहों की भूमिकाएं उनके मार्यादित लक्ष्य तक ही सीमित होती है।

3. **सुनिश्चित स्वहित** – दबाव समहों के अस्तित्व निर्माण का तात्त्विक आधार विशिष्ट स्वहित की प्राप्ति है। इसका यह कदापि अर्थ नहीं है कि दबाव समूहों के पास सामान्य उद्देश्य नहीं होता है। विभिन्न पेशे से संबद्ध दबाव समूह अपने सदस्यों के सामान्य हित की पूर्ति का लक्ष्य लेकर आगे कदम बढ़ाते हैं. लेकिन हर परिस्थिति में दबाव समूहों का एक सुनिश्चित लक्ष्य होता है; वह है सदस्यों के निर्धारित स्वहित की पूर्ति करना। ये निश्चित स्वहित ही समूह के सदस्यों को एक सूत्र में बांधता है। इन समूहों के अन्तर्गत सजातीयता का आधार उसके सदस्यों के हितों में एकरूपता का होना है। यदि समूह के सदस्यों का हित सुनिश्चित, सुस्पष्ट और समान न हो तो वे अपने हितों की रक्षा और संवृद्धि के लिए संगठित होकर सरकारी निर्णय को प्रभावित करने की भूमिका का यथोचित निर्वहन नहीं कर सकेंगे। दबाव समूहों की इस प्रकृति की वजह से उन्हें सुनिश्चित स्वहित साधक की संज्ञा दी जाती है।

4. **सर्वव्यापक अस्तित्व** – सभी प्रकार की राजनीतिक व्यवस्थाओं में दबाव समूह का अस्तित्व विद्यमान होता है। चाहे व्यवस्था का स्वरूप उदारवादी हो या सर्वाधिकारवादी, व्यवस्था विकसित हो या विकासशील सभी राजनीतिक परिस्थितियो में दबाव समूहों की विद्यमानता अपरिहार्य है। इसके अस्तित्व की सर्वव्यापकता को स्वीकारते हुए रॉबर्ट सी. बोन ने 'Action and Organisation: An Introduction to Contemporary Political Science' में कहा है कि "दबाव समूह सभी राजनीतिक व्यवस्थाओं में, यहां तक कि सर्वाधिकारवादी राज्यों में भी पाये जाते हैं, केवल यह तथ्य कि दबाव समूहो की विद्यमानता साम्यवादी राज्यों में भी होती है. इनकी सर्वव्यापकता का प्रमाण है।" हालांकि, इसकी सर्वव्यापकता के परिप्रेक्ष्य में ध्यान देने योग्य तथ्य यह है कि सर्वव्यापी अस्तित्व के बावजूद सर्वाधिकारवादी व्यवस्थाओं में दबाव समूहों की गतिविधियां बहुत सीमित होती हैं। जहां उदारवादी

व्यवस्थाओं में दबाव समूह खुले रूप में अपनी भूमिकाओं को अंजाम देते हैं, तथा उनका कार्यक्षेत्र भी व्यापक होता है, वहीं सर्वाधिकारवादी राज्यों में ये समूह गुप्त रूप से अपनी गतिविधियों को अंजाम देते हैं।

5. **ऐच्छिक सदस्यता** – दबाव समूह हमेशा किसी–न–किसी विशिष्ट हित की पूर्ति के लिए आकार लेते हैं, इसलिए उनकी सदस्यता भी वही लोग ग्रहण करते हैं जिनके हितों की पूर्ति करना इन समूहों द्वारा संभव होता है। इन दबाव समूहों की सदस्यता की प्रकृति ऐच्छिक होती है, यानी कि लोगों को इसकी सदस्यता ग्रहण करने के लिए बाध्य नहीं किया जा सकता है। किसी दबाव समूह का सदस्य बनना या सदस्यता का त्याग करना व्यक्ति की इच्छा पर निर्भर है। ऐच्छिक प्रकृति के साथ दबाव समूह की सदस्यता परस्पर व्यापी भी होती है, यानी कि एक व्यक्ति अपनी जरूरतों की पूर्ति और जीवन के सर्वांगीण विकास हेतु एक साथ कई दबावसमूहों का सदस्य हो सकता है। उदाहरण के तौर पर एक व्यक्ति एक साथ जातीय समूह, धार्मिक समूह, उपभोक्ता समूह, श्रमिक समूह एवं व्यावसायिक समूह सभी की सदस्यता ग्रहण कर सकता है।

6. **राजनीति और प्रशासन में परोक्ष भूमिका** –सभी व्यवस्थाओं में मौजूद दबाव समूह राजनीति और प्रशासन–संचालन में अप्रत्यक्ष भूमिकाएं निभाते हैं। ये राजनीतिक दलों की भांति राजनीति और प्रशासन से सीधा संवाद नहीं करते है। इनके द्वारा न तो चुनाव में उम्मीदवार खड़ा किया जाता है और न ही इनका लक्ष्य सत्ता की प्राप्ति है। इन समूहों द्वारा सक्रिय राजनीति से बाहर रहकर परोक्ष रूप से सरकार की शासनशैली तथा सरकारी निर्गता को प्रभावित करने को कोशिश की जाती है। अपनी भूमिकाओं की वजह से अक्सर ये समूह अपने संगठन को गैर–राजनीतिक बताते हैं। लेकिन, वास्तव में दबाव समूह राजनीति और प्रशासन से अलग नहीं है। ये राजनीति और प्रशासन की सीधी प्रवाहरेखा से अलग नेपथ्य में रहकर सरकार, सरकारी निर्णयों, प्रशासनिक क्रिया–कलापों तथा व्यवस्थागत राजनीति को गंभीर स्तर पर प्रभावित करने का प्रयास करते हैं।

7. **अनिश्चित कार्यकाल** – सामान्यतः, दबाव समूहों का कार्यकाल अनिश्चित होता है। किसी विशेष हित की सिद्धि के लिए ये अस्तित्व प्राप्त करते हैं और हित पूरा होने के साथ–ही इनका अस्तित्व लुप्त भी हो जाता है। इस संदर्भ में प्रासंगिक तथ्य यह है कि सभी राजनीतिक समाजों की प्रकृति में परिवर्तनीयता का गुण मौजूद होने की वजह से राजनीतिक पर्यावरण में होने वाले बदलाव का इन समाजों पर सीधा प्रभाव पड़ता है। सामाजिक–राजनीतिक परिवर्तन के आलोक में किसी विशेष लक्ष्य की प्राप्ति के लिए निर्मित दबाव समूह को कुछ समय पश्चात् अनुपयोगी समझकर भंग भी किया जासकता है। हालांकि, सभी व्यवस्थाओं में कुछ दबाव समूहों के अस्तित्व में स्थायित्व का

तत्त्व विद्यमान होता है, जैसे–मजदूर संघ या पेशेवरों का संगठन आमतौर पर स्थायित्व के गुण से युक्त होता है।

8. **संवैधानिक तथा असंवैधानिक साधनों का प्रयोग** –दबाव समूह अपने विशेष हितों की सिद्धि के लिए परिस्थिति के अनुसार उचित–अनुचित का ध्यान न रखते हुए वैधानिक या अवैधानिक दोनों प्रकार के साधनों का इस्तेमाल करते हैं। इनका लक्ष्य निर्धारित और सीमित होता है तथा अपने लक्ष्य की पूर्ति के लिए ये हर संभव कोशिश करते हैं। अपनी हित–सिद्धि के रास्ते पर कदम बढ़ाते समय ये अवैधानिक साधनों का इस्तेमाल करने से भी बचते नहीं करते हैं।

19.5 दबाव समूह और हित समूह में अन्तर

आल्मंड, हिचनर, होर्बोल्ड, रोमन, कोकोविज आदि विद्वान् दबाव समूह की जगह हित समूह शब्द का प्रयोग करना ज्यादा श्रेयस्कर मानते हैं, वहीं जीनब्लोण्डेल, माइरन वीनर, फाइनर तथा रॉबर्ट सी. बोन जैसे विद्वान भी है का दबाव समूह और हित समूह शब्द का प्रयोग एक दूसरे के स्थान पर करते हैं और दोनों में कोई अन्तर नहीं मानते हैं। विषय के संबंध में इस भ्रान्ति की स्थिति को स्पष्ट करने के उद्देश्य से यहां दबाव समूह और हित समूह के सदर्भ में विस्तार से विश्लेषण किया जा सकता है।

दबाव समूह और हित समूह की प्रकृति में कोई बुनियादी अन्तर नहीं है। बल्कि, इन दोनों में एकरूपता भी पायी जाती है, इसीलिए दोनों को एक समझना स्वाभाविक है। दोनों समूहों का स्पष्ट विशिष्ट लक्ष्य होता है और दोनों सदैव अपने विशिष्ट लक्ष्य की प्राप्ति के लिए प्रयत्नशील रहते हैं। लेकिन, इन समानताओं के बावजूद दोनों समूहों के बीच कुछ सूक्ष्म अर्थ का अन्तर पाया जाता है जो निम्नलिखित है–

पी.एन. मसालदान ने अपनी कृति "राजनीति शास्त्र के सिद्धांत", 1973 में दबाव समूहों तथा हित समूहों की अवधारणा में मौजूद अन्तर को स्पष्ट करते हुए लिखा है कि किसी समाज की राजनीति में दलों के अतिरिक्त अन्य संगठन व समूहों का भी कार्य भाग होता है। शासन प्रक्रिया पर विशेष रूप से नीति–निर्धारण एवं विधि निर्माण पर समाज के विभिन्न समूह अपने विशिष्ट हितों की पूर्ति की दृष्टि से प्रभाव ढालते हैं। समाज में रहने वाला कोई व्यक्ति समूहों के प्रभाव से बच नहीं सकता है, जब एक नागरिक एक इकाई के रूप में किसी उम्मीदवार के पक्ष में अपना मत प्रदान करता है. वो यह अपने समूह के विचारों, दृष्टिकोणों एवं इच्छाओं के प्रभाव में ही मतदान करता है।

लगभग साठ वर्ष पहले'आर्थर बेण्टले' जैसे प्रसिद्ध राजनीतिशास्त्री द्वारा समूह के महत्व पर प्रकाश डाला गया था। अधुनिक काल में प्रसिद्ध व्यवहारवादी 'डेविड ट्रूमैन' ने भी इस विषय की ओर ध्यान आकृष्ट

कराने का प्रयास किया है। समाज में लोगों को सिर्फ सामान्य हित ही नहीं होता है. कुछ विशेष हित भी होता है। सामान्यत, व्यक्ति द्वारा अपने विशेष व्यावसायिक आर्थिक हितों को ज्यादा महत्त्व दिया जाता है। जिन लोगो का आर्थिक हित समान होता है। वे हित समूह के रूप में संगठित हो जाते हैं। जब ऐसे हित समूह अपने विशेष हितों की प्राप्ति के उद्देश्य से सक्रिय रूप में शासन पर दबाव बनाते हैं, तब उनका स्वरूप दबाव समूह में परिवर्तित हो जाता है। लगभग सभी देशों में उद्योगपतियों व्यापारियों, श्रमिको तथा विभिन्न पेशों में कार्यरत व्यक्तियों का का अपना सगठन होता है। ये संगठन अपने विशेष हितों के पैरोकार बनकर व्यवस्था में सक्रिय रहते है ताकि शासन की नीतियों द्वारा उनके हितों को कोई नुकसान न पहुंचने पाये एवं उनका हितवर्द्धन हो सकें। मसालादान ने अपनी अभिव्यक्ति द्वारा यह स्पष्ट किया है कि एक सामाजिक व्यक्ति के रूप में उद्योगपति, व्यवसायी, कृषक, मजदूर, विद्यार्थी तथा विभिन्न देशों में कार्यरत व्यक्तियों के हित पेसे के आधारपर अलग–अलग होते हैं और पेशेवर व्यक्ति अपने विशिष्ट हितों के अनुरूप हित समूह के दायरे म संगठित होते हैं। समान हितों वाले व्यक्तियों का समूह जब संगठन का रूप धारण कर लेता हैं, तो उसे हित समूह की संज्ञा दी जाती है। इन समूहों का लक्ष्य अपने सदस्यों के सामाजिक, आर्थिक, सांस्कृतिक, धार्मिक व्यावसायिक तथा पेशागत हितों की रक्षा करना है। एक व्यक्ति का समाज में कई प्रकार का हित हो सकता है इसीलिए नागरिक एक साथ कई हित समूहों के सदस्य हो सकते हैं। यही हित समूह जब अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए सरकार पर दबाव बनाने की भूमिका निभाने लगते हैं तो वे दबाव समूह की कोटि में शामिल हो जात हैं। दबाव समूहों और हित समूहों के बीच जिन असमानताओं को रेखांकित किया गया है। जो कि निम्नवत् है –

प्रथम–दोनों के बीच पहला अन्तर हित सुरक्षा की दृष्टि से कार्यशैली में प्रयोग किये जाने वाले साधनों से संबद्ध है। हित समूहों द्वारा जहां अपने हितवर्द्धन एवं हितरक्षण के लिए मुख्य रूप से प्रत्ययकारी विधि का प्रयोग किया जाता है, जबकि दबाव समूह अपने विशिष्ट हितों के लिए विशेष रूप से दबाव विधि का इस्तेमाल करके अपनी मांगों को पूरा करने के लिए सरकार पर दबाव बनाते हैं. यानी कि दोनों समूहों द्वारा हित पूर्ति के लिए अपनाये जाने वाले साधनों में मुख्यरूप से अलग–अलग विधाओं का इस्तेमाल किया जाता है। जहां हित समूह का उपकरण अनुनय है, वहीं दबाव समूह का साधन दबाव है, यानि कि पहला अन्तर हित–सिद्धि के लिए प्रयोग किये जाने वाले साधन से संबद्ध है।

द्वितीय–दोनों के बीच दूसरा अन्तर हित–सिद्धि हेतु प्रभावित करने के उद्देश्य से संबद्ध है। हित समूहों का लक्ष्य शासन व्यवस्था को प्रभावित करना नहीं होता है। हित समूहों का लक्ष्य ऐसे ही अन्य समूह या अन्य सामाजिक सरचनाओं व प्रक्रियाओं को प्रभावित करना होता है. जबकि दबाव समूहों का लक्ष्य विशेष रूप से राजनीतिक संरचना एवं प्रक्रियाओं को प्रभावित करके उसे अपने हितवर्द्धन तथा रक्षण के अनुकूल बनाना

होता है। मूलतः ये अपने सदस्यों के लिए हितों को सुरक्षित करने वाले की भूमिका निभाते हैं। यानि कि, दूसरे अन्तर का संबंध दोनों के उद्देश्य से है।

तृतीय–दबाव समूह और हित समूह के बीच तीसरा महत्त्वपूर्ण अन्तर दोनों की प्रकृति से संबंधित है। हित समूहों की प्रकृति अराजनीतिक होती है। ये क्रियाशील राजनीति से प्रत्यक्ष सरोकार नहीं रखते हैं और न ही राजनीतिक प्रक्रियाओं से सीधे रूप से जुड़े होते हैं। इसके विपरीत, दबाव समूह की प्रकृति में राजनीति का पुट शामिल होता है, इसलिए इनकी गतिविधियों का रुझान सदैव व्यवस्थागत राजनीति की ओर होता है। वास्तव मेंइनकी प्रकृतिन तो पूर्णतः अराजनीतिक है और न ही राजनीतिक दलों की भांति पूर्णतः राजनीतिक होती है।

दोनों के बीच अन्तर के संबंध में सार रूप में यह कहा जा सकता है कि हित समूहों की गतिविधियां प्रत्यक्ष रूप से राजनीतिक प्रक्रियाएयें, गतिविधियों का सक्रिय हिस्सा नहीं होती हैं, जबकि दबाव समूह राजनीतिक प्रक्रियाओं का अपृथक्करणीय हिस्सा हैं और अपने द्वारा निष्पादित भूमिकाओं के माध्यम से वे सरकार की नीतियों को या तो मजबूती प्रदान करते हैं या खिलाफ में विरोध प्रदर्शन करके उसके स्वरूप में बदलाव लाने का गंभीर प्रयास करते हैं। दबाव समूह का स्वरूप चाहे राष्ट्रीय, प्रान्तीय या स्थानीय हो एक क्रियाशील संगठन के रूप में वे हमेशा सरकार से कुछ न कुछ पाने का लक्ष्य लेकर सक्रिय रहते हैं। हित समूह भी अपने सदस्यों के हितवर्द्धन के लिए सक्रिय रहते हैं, लेकिन उनकी अपेक्षाएं सरकार से नहीं, समाज या समाज में मौजूद सामाजिक, आर्थिक सांस्कृतिक, धार्मिक समूहों व संगठनों से होती हैं और ये अपने हित साधन के लिए निरन्तर इन समूहों के संपर्क में रहते हैं।

19.6 दबाव समूह की राजनीति के निर्धारक तत्व

दबाव समूहों का अस्तित्व सर्वव्यापी है जो सभी राजनीतिक व्यवस्थाओं में मौजूद है। बावजूद इसके, विभिन्न व्यवस्थाओं में विद्यमान दबाव समूहों की प्रकृति–प्रवृति, भूमिकाएं तथा प्रभावकारिता आदि में अन्तर पाया जाता है। दबाव समूहों की कार्यविधियों यानी कि भूमिकाओं के कई नियामक होते हैं जिन्हें दबाव समूह की राजनीति की संज्ञा दी जाती है। अपनी लक्ष्य–सिद्धि के लिए प्रत्येक व्यवस्था में अपनायी जाने वाली प्रविधियां व्यवस्थागत परिस्थिति के अनुरूप एक दूसरे से पृथक् होती हैं। दबाव समूह की राजनीति के निर्धारकों में किन–किन तत्त्वों को शामिल किया जाये, ये राजनीति वैज्ञानिकों के समक्ष एक अहम् सवाल है। एलेनबाल ने इस प्रसंग में तीन निर्धारकों का उल्लेख किया है जो कि निम्नवत् है –

1. राजनीतिक संस्थागत संरचना।
2. दलीय व्यवस्था का स्वरूप।

3. राजनीतिक संस्कृति।

'एलेनबाल' का यह मानना है कि व्यवस्था में दबाव समूहों की कार्यविधियों के कईनिर्धारक होते हैं, लेकिन उनमें से ये तीन अत्यधिक महत्त्वपूर्ण हैं।

दबाव समूहों की राजनीति यानि कि भूमिका के निर्धारकों के संबंध में एक्सटीन द्वारा एलेनबाल से भी व्यापक संदर्भ का उल्लेख करते हुए इसे दबाव समूह के तीन आयामों के साथ संबद्ध किया गया है। एक्सटीन की दृष्टि में दबाव समूह की राजनीति के निर्धारकों को तीन आयामों के प्रसंग में तीन शीर्षकों के तहत स्पष्ट किया जा सकता है –**पहला**–दबाव समूह राजनीति के स्वरूप के निर्धारक, **दूसरा**–दबाव समूह राजनीति के क्षेत्र और तीव्रता के निर्धारक और एक**तीसरा**–दबाव समूह राजनीति की प्रभावशालिता के निर्धारक एक्सटीन का ऐसा मानना है कि दबाव समूहों की गतिविधियों को समझाने के लिए दबाव समूहों की राजनीति के स्वरूप या ढाँचे को उसके क्षेत्र एवं तीव्रता को तथा उसकी प्रभावकारिता के निर्धारकों का विस्तृत अध्ययन करना आवश्यक है।

19.7 सारांश

इस इकाई के अन्तर्गत हमने दबाव समूह या हित समूह के अर्थ, परिभाषाएँ, प्रकृति, विशेषताएँ एवं दबाव समूह एवं हित समूह के अन्तर को स्पष्ट किया गया है, तथा दबाव समूह को राजनीतिक के निर्धारक तत्वों का भी विश्लेषण किया गया। है।

वस्तुतः दबाव समूहों को आज लोकतांत्रिक व्यवस्था एवं प्रक्रियाओं का अभिन्न हिस्सा के रूप में स्वीकार्यता मिल चुकी है। व्यवस्था संचालन में सभी वर्गों को उचित प्रतिनिधित्व मिले और सभी समुदायों व समूहों का हितवर्द्धन संभव हो सके तथा समाज में सभी लोगो की जरूरतों की ओर सरकार का ध्यान आकर्षित कराया जा सके इस दृष्टि से राजनीतिक व्यवस्था में दबाव समूहों की विद्यमानता अत्यावश्यक है। जरूरत इस बात की है कि दबाव समूहों का उद्देश्य, लक्ष्य एवं गतिविधियां स्वहित के बजाय सार्वजनिक हित से जुड़ी हों। संक्षेप में, यह कहा जा सकता है कि अन्य लोकतांत्रिक व्यवस्थाओं की भांति भारतीय राजव्यवस्था में भी दबावगुटों की मौजूदगी को आवश्यक इकाई के रूप में स्वीकारा जाने लगा है। ये लोकतांत्रिक प्रक्रियाओं के संचालन में राजनीतिक दल, सरकार एवं अवाम के बीच कड़ी का कार्य करते हैं।

19.8 बोध प्रश्न

19.8.1 दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. दबाव समूह से आप क्या समझते है? इसकी प्रमुख विशेषताओं का विस्तृत वर्णन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2. दबाव समूह राजनीति के निर्धारक तत्वों का विस्तृत विवेचन कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

19.8.2 लघु उत्तरीय प्रश्न

1. दबाव समूह एवं हित समूह के अन्तर को स्पष्ट कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

2. दबाव समूह की प्रकृति का विश्लेषण कीजिए।

.....

.....

.....

.....

.....

19.9 संदर्भ सूची /उपयोगी पुस्तकें

1. शर्मा शशि, राजनीतिक समाजशास्त्र की रूपरेखा, पी.जी.आई. लर्निंग प्रोइवेट लिमिटेड दिल्ली।
2. जैन पी.सी., राजनीतिक समाजशास्त्र, रावत पब्लिकेशन।
3. शर्मा एल.एन., मुरारी कृष्ण, राजनीतिक समाजशास्त्र, ओरियंट ब्लैकस्वान।
4. बघेल डी.एस.,सिंहटी.पी.:राजनीतिक समाजशास्त्रए विवेक प्रकाशन दिल्ली,2022.
5. Kothari, Rajni. Politics in India. Boston: Little, Brown and Company, 1970.
6. बघेल डी0 एस0, सिंह टी0 पी0 "राजनैतिक समाजशास्त्र' विवेक प्रकाशन जवाहर नगर , नई दिल्ली 2010
7. नगला, बी.के. (1999) राजनीतिक समाजशास्त्र. जयपुर रावत प्रकाशन।

इकाई– 20 : दबाव समूह का वर्गीकरण, साधन और तरीके

इकाई की रूपरेखा

20.0 उद्देश्य

20.1 प्रस्तावना

20.2 ऑमण्ड तथा पावेल का वर्गीकरण

20.2.1 संस्थागत हित समूह

20.2.2 प्रदर्शनात्मक या उदंड हित समूह

20.2.3 संयोजित हित समूह

20.2.4 असयोजित हित समूह

20.3 जे, ब्लोण्डिल (J- blondile) का वर्गीकरण

20.3.1 सामुदायिक समूह

20.3.2 साहचर्य समूह

20.4 राबर्ट सी० बोन का वर्गीकरण

20.4.1 परिस्थितिजन्य समूह

20.4.2 अभिवृत्तिजन्य समूह

20.5 दबाव समूह की प्रकृति

20.6 दबाव समूह की कार्यप्रणाली

20.7 सदस्यता के आधार पर वर्गीकरण

20.8 सामाजिक प्रभाव के आधार पर वर्गीकरण

20.9 दबाव समूह के साधन एवं तरीके

20.10 सारांश

20.11 बोध प्रश्न

20.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

20.0 उद्देश्य

इकाई के अध्ययन के पश्चात आप जान सकेंगे–

1. ऑमण्ड तथा पावेल के वर्गीकरण को आप समझ सकेंगे।
2. जे, ब्लोण्डिल के वर्गीकरण को आप समझ सकेंगे।
3. राबर्ट सी० बोन के वर्गीकरण को आप समझ सकेंगे।
4. दबाव समूह की कार्यप्रणाली को आप समझ सकेंगे।
5. दबाव समूह के साधन एवं तरीके को आप समझ सकेंगे।

20.1 प्रस्तावना

हम सभी सामाजिक प्राणी होने के कारण हमारा हर व्यक्तियों से सम्बन्ध स्थापित रहता है। और व्यक्तियों की विभिन्न प्रकार की आवश्यकतायें होती है। विभिन्न इसलिये की व्यक्ति विचारों से भिन्न होता है। जब समान विचार वाले व्यक्ति एक संगठन बनाकर अपने लक्ष्यों या हितों को पाने का प्रयास करते है तो हम एक समूह का नाम देते है। जिसे हम दबाव समूह या हित समूह कहते है। जो राजनीतिक समाजशास्त्र की महत्वपूर्ण अवधारणा है। दबाव समूह का अध्ययन हम समाजशास्त्र एवं राजनीतिक शास्त्र में भी करते हैं।

दबाव समूह वे समूह है जो सरकार और नीति निर्धारण पर प्रभाव डालते है और संगठित रहते है।

दबाव समूह–सगंठन जो अपने हितों की रक्षा एवं संवर्धन के लिये संगठित होती है।

परिचयः– दबाव समूह जिन्हें दबाव संगठन भी कहा जाता है समाज में विशेष हितों को बढ़ावा देने और नीतिगत निर्णयों का प्रभावित करने के लिये कार्य करते हैं। ये समूह उन लोगों का संघ होते है जो किसी विशेष मुद्दे या हित के लिये एक जुट होते है और समाज या सरकार पर अपने प्रभाव को बढ़ाने के लिये विभिन्न रणनीतियों का उपयोग करते है। समाजशास्त्र में दबाव समूह की भूमिका और उनका स्वरुप समझने में हमें समाज में शक्ति और प्रभाव के ताने–बाने को समझने में मदद मिलती है।

परिभाषा – दबाव समूह उन संगठनों या समूहों को कहा जाता है जो समाज के विभिन्न हिस्सों में अपने विशेष हितों और मागों को लागू करने के लिये दबाव बनाते है। ये अक्सर राजनैतिक, आर्थिक, समाजिक

या पर्यावरणीय मुद्दो पर ध्यान केन्द्रित करते है और नीति निर्धारण प्रक्रिया में प्रभाव डालने की कोशिश करते है।

फ्रांसिस जी. केसल्स के अनुसार–''दबाव समूह वह समूह है जो प्रशासनिक कार्यो के द्वारा राजनैतिक परिवर्तन लाने का प्रयास करता है। यह समूह स्वंय राजनैतिक दल नहीं होता क्योंकि उसे व्यवस्थापित दलों की तरह प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं है।''

आमण्ड एवं पावेल के अनुसार –'' हित'समूह से हमारा अभिप्राय व्यक्तियों के उप समूह सें है जो आपस में कार्य – व्यापार तथा लाभ के बन्धनों में जुड़े है जिन्हें इन बन्धनों की जानकारी भी रहती है। हित समूह संगठित भी हो सकते हैं अर्थात् समूह के सदस्य इन कार्यों को करते हैं जो हित समूह में रहकर उन्हें करना चाहिए था यह भी हो सकता है कि व्यक्तियों में हित समूह की चेतना सामयिक और विराभी हो।''

हैनरी डब्ल्यू एहर मैन के अनुसार –

''दबाव समूह वह गिच्छेक समिति है जिसके सदस्य किसी हित के बचाव के लिये परस्पर सम्बद्ध है।''

दबाव समूह के उद्देश्य–

- हितों की रक्षाः– अपने सदस्यों की रक्षा करना
- नीतियों में बदलाव : कानून और नीतियों में सुधार के लिए दबाव बनाना।
- जन जागरुकता :– समाज से मिली विशेष मुद्दों के प्रतिजागरूकता फैलाना ।
- सामाजिक परिवर्तनः– समाज में सामाजिक एवं सांस्कृतिक बदलाव लाने की कोशिश करना।

दबाव समूह की कार्यप्रणाली–

1. लांबिग : नीति निर्माताओं से सीधी बातचीत एवं प्रभावित करने की कोशिश करना।
2. जनसंपर्क अभियानः मीडिया एवं सामाजिक नेटवर्क के माध्यम से जनजागरुकता फैलाना।
3. रिपोर्ट एवं अनुसंधान : तथ्य एवं डेरा प्रस्तुत कर नीतिगत बदलाव की दिशा मे सुझाव देना।
4 प्रतिरोध एवं विरोध प्रदर्शनः समाज एवं सरकार पर दबाव डालकर विरोध प्रदर्शन एवं धरना देना।

दबाव समूह का वर्गीकरण–

(क) कार्ल फ्रैड्रिक ने दबाव एवं हित समूह को दो वर्गो मैं बॉटा है।

(1) समान्य हित समूह– ये प्रथम श्रेणी में आते है।

(2) विशिष्ट हित समूह –विशिष्ट हितों की पूर्ति के लिये अपना कार्य संचालन करने वाले समूह द्वितीय प्रकार की श्रेणी में आते है।

20.2 ऑमण्ड तथा पावेल का वर्गीकरण

ऑमण्ड ने हित समूहों को निम्न चार श्रेणियों में वर्गीकृत किया है–

20.2.1 संस्थागत हित समूह (Institutional Interest groups)–

इस समूह के नाम से ही स्पष्ट होता है कि यह किसी न किसी संस्था के नियमों के अन्तर्गत काम करते है यह हित समूह राजनैतिक दलो एवं संगठनों के अनगिनत कार्य करते है। इस प्रकार के समूह विधायिकाओं, लोक प्रशासक संगठनों सेनाओं तथा व्यापारिक एवं सरकारी नियमों में अवस्थित है ये अपने हितो के साथ–साथ संस्थाओं का भी ध्यान हित रखते है। और जो भी उत्तरदायित्व मिलते उनका पूरी इमानदारी से निर्वहन करते है।

20.2.2 प्रदर्शनात्मक या उदंड हित समूह (Anomie Interest groups)

इस प्रकार के समूह आन्दोलनों में भाग लेने वाले समूह के रूप में वर्गीकृत किये जाते है। यह समूह आन्दोलनों जुलूस प्रदर्शनो में शामिल होकर अपना प्रभाव दिखाते है। उदाहरण फ्रांस, इटली अरब देशों से इस प्रकार के समूह अधिक प्रभावशाली है।

20.2.3 संयोजित हित समूह (Associational Interest group)

इस समूह के अर्न्तगत विशिष्ट व्यक्तियों के हितो का प्रतिनिधित्व करने वाले समूह के रूप में होते है। जैसे व्यापारिक संघ, उद्योगपतियों का संगठन, धार्मिक संप्रदाय द्वारा संगठित सदा आदि इनके उदाहरण है। इस प्रकार के समूह लगभग सभी देशो में पाये जाते इसमें बिना किसी दबाव के अपने सदस्यों की भर्ती करते है।

20.2.4 असयोजित हित समूह (Non- Associational Interest group)

इस प्रकार के हित समूह का कोई औपचारिक ढाँचा नही होता है। यह अपनी पूर्ति के लिये शासन की नीतियों पर अप्रत्यक्ष रुप से दबाव डालते है इस प्रकार के समूह की अपनी कोई व्यवस्थित प्रक्रिया नहीं

होती है समूह की आन्तरिक संरचना में कोई निरन्तरता होती है। ये हित समूह परम्परागत घरातल से जुडे होते है। जैसे वंशीय समूह, सजातीय समूह, धार्मिक समूह, नातेदारी समूह, क्षेत्रीय समूह इत्यादि।

(ग) सदस्यता के आधार पर वर्गीकरण

1. **सार्वजनिक हित समूह (Public Pressure Groups):** ये समूह समाज के विभिन्न वर्गों के हितों का प्रतिनिधित्व करते है और उनकी गतिविधियाँ सार्वजनिक होती है। जैसे – मानवाधिकार संगठन।

2. **विशिष्ट हित समूह (Private Pressure Groups):** यह समूह किसी विशेष वर्ग एवं पेशे से प्रतिनिधित्व करते है एवं उनकी गतिविधियाँ अक्सर गोपनीय होती है। जैसे – पेशेवर संगठन।

(घ) सामाजिक प्रभाव के आधार पर वर्गीकरण

1. **अन्तर्राष्ट्रीय हित समूह (International Pressure Groups):** इस प्रकार के हित समूह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर काम करते है। विभिन्न देशों के बीच समन्वय एवं सहयोग के माध्यम से अपना प्रभाव डालते है। जैसे – यूनाइटेड नेशंस की मानवाधिकार समितियाँ।

2. **स्थानीय हित समूह (Local Pressure Groups):** यह समूह क्षेत्रीय अथवा स्थानीय मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करते है। साथ ही स्थानीय समुदायों के अन्दर काम करते है। जैसे – स्थानीय पर्यावरण संरक्षण समूह।

20.3 जे. ब्लोण्डिल (J- blondile) का वर्गीकरण

जे. ब्लोण्डिल (J-blondile) ने अपनी पुस्तक 'An Introduction to Comparative Government (1969) में दबाव समूहों को दो भागों में वर्गीकृत किया है।

20.3.1 सामुदायिक समूह (Communal Group) –

इस प्रकार के समूह का निर्माण सामाजिक सम्बन्धो के आधार पर होता है इनके बीच पारस्परिक स्नेह का प्रादुर्भाव होता है। सभी सदस्य एक दुसरे का सुख–दुख अपना सुख दुख समझते है। इसी सामुदायिक भावना के कारण उस प्रकार का समूह मजबूत एवं सशक्त होता है। सामुदायिक समूह भी दो श्रेणियों में बाँटा गया है।

(i) प्रथागत दबाव समूह (Customary Pressure Group) – ऐसे दबाव समूह जो रीति रिवाज प्रथाओं एवं रूढ़ियों पर आधारित होते है। जब एक धर्म जाति के सदस्य औपचारिक रूप से संगठित होकर संख्या का निर्माण करते है तथा प्रथागत दबाव समूह की उत्पत्ति होती है।

(ii) संस्थागत समूह (Institutional Group) ये वह समूह होते है जो किसी विशेष संस्था से जुडें होते है और घनिष्ठता भी पायी जाती है। विशेष उद्देश्य न होने पर सामान्य हितों को प्राप्ति के लिये समूह के रूप में संगठित हो जाते है। जैसे वरिष्ठ नागरिक कल्याण समिति, सैनिक कल्याण समिति, बाल कल्याण समिति।

20.3.2 साहचर्य समूह (Associational Group) इस प्रकार के दबाव समूहो का लक्ष्य विशिष्ट होता है। इस समूह का एक न्यूनतम लक्ष्य अवश्य होता है। परन्तु यह लक्ष्य एक ऐसा साधन बन जाता है जिसके माध्यम सें सामुदायिक मागों का राजनीतिक व्यवस्था में सरलीकरण होता है औद्योगिक विकास के साथ–साथ ऐसे दबाव समूहो की संख्या में वृद्वि हुई है।

इनकी श्रेणी भी दो प्रकार की होती है :–

(i) संरक्षणात्मक समूह (Protective Group) – इन प्रकार के समूह में सदस्यों के हितो की सामान्य रक्षा की जाती है। यह विशिष्ठ लक्ष्य सामान्य एवं व्यापक होते है और अपने सदस्यों के सामान्य हितों की रक्षा करते है।

(ii) संवर्धनात्मक समूह (Promotional Group) – इनका जन्म विशिष्ट लक्ष्यों के साथ होता है। ऐसे समूह का निर्माण किसी विशेष दृष्टिकोण के प्रचार–प्रसार अथवा समाज की उन्नति करने के लक्ष्य को लेकर करता है ऐसे समूह लक्ष्य की उन्नति सें जुड़े होते।

20.4 राबर्ट सी० बोन का वर्गीकरण

बोन ने सामान्य प्रकृति और उद्देश्यों के आधार पर दबाव समूहों को दो भागों में बाँटा है। एक को उसने परिस्थिति–जन्य समूह और दूसरे को अभिवृत्तिजन्य समूह कहा है। इन दोनों प्रकार के समूहों का संक्षिप विवेचन निम्नलिखित है–

20.4.1 परिस्थितिजन्य समूह (Situational Groups) :–

ऐसे दबाव समूह मुख्य रूप से अपने सदस्यों की रक्षा और सुधार से सम्बन्धित होते हैं। इन समूहों का उद्देश्य सामाजिक और आर्थिक दृष्टि से अपने सदस्यों की स्थिति को सुधारना है। बोन का कहना है

कि इन दबाव समूहों का किसी खास विचारधारा से विशिष्ट सबन्ध नहीं होता। वे प्रकृति से विशिष्ट होते है और अपने सदस्यों के हितो की वृद्धि और रक्षा का भी उद्देश्य रखते हैं। इनकी कार्यपद्धति वैधानिक होती है।

20.4.2 अभिवृत्तिजन्य समूह (Attitudinal Groups)

ऐसे समूह कुछ मूल्यों के प्रति सामान्य रूप से निष्ठा रखते है। ये शांतिपूर्ण सुधारों या कभी–कभी क्रांतिकारी तरीको से समाज में व्यापक परिवर्तन लाना चाहते हैं। ये समूह परिस्थितिजन्य समूहों से भिन्न होते हैं। इनका कार्यक्रम कालबद्ध होता है। कम–से–कम समय में अपने लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए सरकार को मजबूत करने का प्रयास करते हैं। चूँकि इन समूहों के उद्देश्य अल्पकालीन होते हैं. अतः ये तेज गति की तकनीकों का प्रयोग करते है। राबर्ट सी० बोन द्वारा किया गया दबाव समूह का वर्गीकरण सामान्य होते हुए भी दबाव समूहों की प्रकृति समतन्य आने में सहायक लगता है।

20.5 दबाव समूह की प्रकृति

- हितों की रक्षाः अपने सदस्यों की रक्षा करना
- नीतियों में बदलावः कानून और नीतियों में सुधार के लिए दबाव बनाना।
- जन जागरुकताः समाज से मिली विशेष मुद्दों के प्रति जागरूकता फैलाना ।
- सामाजिक परिवर्तनःसमाज में सामाजिक एवं सांस्कृतिक बदलाव लाने की कोशिश करना।

20.6 दबाव समूह की कार्यप्रणाली

1. लॉबिंग : नीति निर्माताओं से सीधी बातचीत एवं प्रभावित करने की कोशिश करना ।
2. जनसंपर्क अभियान : मीडिया एवं सामाजिक नेटवर्क के माध्यम से जनजागरुकता फैलाना।
3. रिपोर्ट एवं अनुसंधान : तथ्य एवं डेरा प्रस्तुत कर नीतिगत बदलाव की दिशा मे सुझाव देना।
4. प्रतिरोध एवं विरोध प्रदर्शन : समाज एवं सरकार पर दबाव डालकर विरोध प्रदर्शन एवं धरना देना ।

20.7 सदस्यता के आधार पर वर्गीकरण

सार्वजनिक हित समूह (Public Pressure Groups) – ये समूह समाज के विभिन्न वर्गो के हितों का प्रतिनिधित्व करते है और उनकी गतिविधिया सार्वजनिक होती है।

जैसे– मानवाधिकार संगठन

विशिष्ट हित समूह (Privali Pressure Groups) – यह समूह किसी विशेष वर्ग एवं पेशे से प्रतिनिधित्व करते है एवं उनकी गतिविधिया अक्सर गोपनीय होती है।

जैसे– पेशेवर संगठन

20.8 सामाजिक प्रभाव के आधार पर वर्गीकरण

अन्तर्राष्ट्रीय हित समूह (International Pressure Groups) – इस प्रकार के हित समूह अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर काम करते है। विभिन्न देशों के बीच समन्वय एवं सहयोग के माध्यम से अपना प्रमाव डालते है। जैसे यूनाइटेड नेशंस की मानवाधिकार समितियाँ।

स्थानीय हित समूह (Local Pressure Groups) – यह समूह क्षेत्रीय अथवा स्थानीय मुद्दो पर ध्यान केन्द्रित करते है। साथ ही स्थानीय समुदायों के अन्दर काम करते है।

जैसे – स्थानीय पर्यावरण संरक्षण समूह।

20.9 दबाव समूह के साधन एवं तरीके

दबाव समूह वे संगठन होते है जो नीतिगत फैसलों पर प्रभाव डालने के लिए सरकार, संस्थानों या समाज पर दबाव डालते है। ये समूह अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए विभिन्न साधनों और विधियों का उपयोग करते है। जो निम्न है –

<u>प्रकोष्ठ क्रिया (Lobbying)</u> –

दबाव –समूहों को कार्य करने का सबसे सुपरिचित तरीका ''लाबिइंग'' है यह विदेशो प्रमुखतः अमेरिका में काफी लोकप्रिय होता जा रहा है। यह नीतिगत निर्णयों को प्रभावित करता है। ऐसी लाबिइंग सरकार के नीति निर्माताओ, विधायकों और अन्य अधिकारियों से सीधी बातचीत करके उन्हें अपने मुद्दो के प्रति संवेदनशील बनाने का प्रयास करते है। अधिकांश दबाव समूह अपने वैधानिक प्रतिनिधियों द्वारा लाबिइंग का काम करते है।

<u>संगठन (Organisation)–</u>

विश्व के प्रत्येक दबाव समूहों का अस्तित्व इस लिए है कि इनका निर्माण सदस्यों के संगठन पर आधारित होता है। संगठन में ही शक्ति होती है इन संगठनो के माध्यम से विभिन्न दबाव व हित समूह को ताकत मिलती है।

पेटीशन और प्रोटेस्ट (Petitions and Protests) –

इस प्रकार में सार्वजनिक ज्ञापन, याचिकाएँ और विरोध प्रर्दशनों का आयोजन कर मुद्दो पर ध्यान आकर्षित करना। इनका मुख्य लक्ष्य सामूहिक जनहित की अपील एवं विरोध के माध्यम से बदलाव लाना।

सामूहिक प्रचार (Mass Propoganda) –

अपने हितों व लक्ष्यों की प्राप्ति के लिये विभिन्न दबाव समूहों या हित समूहों द्वारा सामूहिक प्रचार–प्रसार का कार्य किया जाता। इसके लिये विभिन्न विधियों को अपनाया जाता है।

पत्र–पत्रिकांए (Paper and Magazines) –

इस प्रकार का दबाव समूह अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिये विभिन्न प्रकार की पत्र–पत्रिकाओं का प्रकाशन करते है। यह प्रत्रिकायें मासिक व वार्षिक भी हो सकती है। ऐसे दबाव समूह अपने संगठन व कार्यक्रमों को जनता के समक्ष रखते है। और जनमत तैयार करते है। दूसरी ओर शासन की नीतियों की खामियों को भी जनता के समक्ष प्रकाशित करते है जिसके कारण सरकार को अपने हितों के अनुकूल नीतियाँ बनाने के लिये बाध्य करते है।

चुनाव में भाग लेना (Electioneering) –

दबाव समूह न ही चुनाव में भाग लेते है न ही अपने प्रत्याशी को चुनाव में खड़ा करते है। यह दबाव समूह इन दलों के चुनाव में धन,बल,शक्ति आदि से मदद करते है।

सार्वजनिक बैठकें एवं कार्यशालायें (Public Meeting and Workshop) –

दबाव समूह के लोग समुदाय को इकट्ठा करके समस्या पर चर्चा करना साथ ही उन समस्याओं पर कार्यशालायें आयोजित करने का लक्ष्य होता है। इनका उद्देश्य मुद्दों के प्रति समय बढाना एव समर्थन जुटाना होता है विभिन्न प्रकार की कार्यशाला आयोजित करना जनसामान्य तक शासन विरोधी बातों को पहुचाते जिसके कारण जनमत इनके पक्ष में होता है।

न्यायालयों द्वारा दबाव (Pressure through the Court) –

दबाव हित अपने हित के लिये न्यायालयो का सहारा लेते है। थोड़ी सी ही बात लेकर आये दिन शासन के किसी कार्य को न्यायालय में चुनौती देना । ये हित समूह ऐसे नियमो का विरोध करते जो उनके हित के विपरीत होता ।

हिंसा (Violence) –

इनका एक प्रमुख साधन हिंसा भी है। हड़ताल की असफलता के कारण दबाव समूह कभी–कभी हिंसा की भी मदद या सहारा लेते है।

दबाव समूह और कर्मचारी तंत्र (Pressure Groups and Bureaucracy) –

विश्व के प्रत्येक गुट समूह में कर्मचारी संघ ने शासन पर हमेशा दबाव डालने की परम्परा बरकरार रखी है। आज प्रत्येक कर्मचारी संघ अपने–अपने हितो के लिये शासन पर दबाव डालकर हितो की पूर्ति का प्रयास करता है।

राजनैतिक दलों के अन्दर क्रियाशील रहना (Working inside Political Parties) –

प्रायः संगठित दबाव समूह किसी न किसी राजनैतिक दलों से साँठ–गाँठ रखते हैं और ये समूह अपने हित–साधन के लिए इन राजनैतिक दलों का बखूबी फायदा उठाते हैं तथा अपने कार्यों को अंजाम देते हैं। वर्तमान में दबाव समूहों को राजनैतिक दलों का संरक्षण प्राप्त होता है।

हड़ताल तथा प्रदर्शन (Strike & Demonstration) –

दबाव समूह अपने हित की रचना के लिए हड़ताल व प्रदर्शन आदि साधन अपनाते हैं। बहुधा श्रमिक संघ औद्योगिक कार्यों में संलग्न कर्मचारी की माँगों के समर्थन में हड़ताल आदि कराते हैं। इसके अतिरिक्त अन्य दबाव समूह इस साधन का प्रयोग सामान्यतः राजनैतिक स्वार्थों की पूर्ति के लिए ही करते हैं। इसके साथ ही वे सरकार पर दबाव डालने के लिए कभी–कभी प्रदर्शनों का भी आयोजन करते हैं। वर्तमान में हड़ताल व प्रदर्शनकारी दबाव समूहों की संख्या में वृद्धि हुई है।

20.10 सारांश

उपर्युक्त इकाई के विश्लेषण उपरांत प्राप्त सारांश के तौर पर कहा जा सकता है कि समूह की व्यवस्था में सर्वप्रथम ऑमण्ड तथा पावेल ने समूह को श्रेणीबद्ध बनाकर अभिव्यक्त किया जिनके विचारों में हित समूह का तात्पर है कि अपने हितों के लिए लोग संघर्ष, आंदोलन करते हैं। और सरकार के अपने हित

को दबाव बनाकर मनवाते हैं जिसे ऑमण्ड ने किसी संस्था या राजनीतिक दल को भी जोड़ते हुए कहा कि यह भी अपने हित पूर्ति के लिए कार्य करते हैं। जे. ब्लोण्डिल ने अपनी एक पुस्तक में समूह की चर्चा की है और कहा कि सामुदायिक समूह का निर्माण सामाजिक संबंधों के आधार पर होता है जिसके सदस्य एक दूसरे के दुख सुख मे भाग लेते हैं अर्थात किसी भी समूह पर या समुदायिक संगठन का कार्य ही यही होता है कि लोगों को एक साथ लेकर समाज की बनी व्यवस्था को आगे बढ़ाते रहे राबर्ट सी० बोन समूह को दो भागों में बांटते हुए बताया कि एक समूह अपने सदस्यों की रक्षा और सुरक्षा का ध्यान रखता है तथा प्रकृति से भी अच्छा लगाव रखता है इसके कार्य करने के तरीके वैज्ञानिक ढंग से होते हैं।

20.11 बोध प्रश्न

बहुविकल्पीय प्रश्न

1. ऑमण्ड तथा पावेल ने हित समूह को कितने भागो मे वर्गीकृत किया है ?

   (1) दो (2) चार (3) छ; (4) आठ

2. 'An Introduction to Comparative Government (1969) यह किसकी पुस्तक है।

   (1) ऑमण्ड तथा पावेल (2) राबर्ट सी० बोन (3) जे. ब्लोण्डिल (4) किसी की नहीं

3. अभिवृत्तिजन्य समूह (Attitudinal Groups) किसका सिद्धान्त है।

   (1) राबर्ट सी० बोन (2) ऑमण्ड तथा पावेल (3) जे. ब्लोण्डिल (4)किसी का नहीं

बहुविकल्पीय प्रश्न के उत्तर

1 (2) 2 (3) 3 (1)

लघु उत्तरी प्रश्न

4. संस्थागत हित समूह पर टिप्पणी लिखिए ।
5. प्रदर्शनात्मक या उदंड हित समूह को समझाये ।
6. सामुदायिक समूह और साहचर्य समूह की व्याख्या कीजिये ।

दीर्घ उत्तरी प्रश्न

1. ऑमण्ड तथा पावेल के द्वारा वर्गीकरण किया गया दबाव समूह तथा हित समूह की व्याख्या कीजिये।
2. राबर्ट सी0 बोन के दबाव समूह तथा हित समूह की व्याख्या कीजिये।
3. दबाव समूह के साधन एवं तरीके की विस्तृत व्याख्या कीजिये ।
4. सदस्यता के आधार पर वर्गीकरण किए गए समूह की व्याख्या कीजिये।
5. कार्ल फ्रैड्रिक द्वारा समूह पर दिये गए विचारों की व्याख्या कीजिये ।

20.12 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- डॉ0 डी0 एस0 बघेल डॉ0 टी0 पी0 सिंह कर्चुली "राजनैतिक समाजशास्त्र' विवेक प्रकाशन जवाहर नगर , नई दिल्ली 2010
- डॉ0 विरकेश्वर प्रसाद सिंह, तुलनात्मक शासन एवं राजनीति ज्ञानदा प्रकाशन नई दिल्ली, 2004
- राठौड़, पी.बी. राजनीतिक समाजशास्त्र के मूल सिद्धांत। जयपुर एबीडी पब्लिशर्स। 2005.
- फॉल्क्स, कीथ। राजनीतिक समाजशास्त्र एक आलोचनात्मक विश्लेषण। एडिनबर्ग यूनिवर्सिटी प्रेस।1999.
- बिस्वास्क के, दीप्ति। राजनीतिक समाजशास्त्र एक परिचय। कलकत्ता फ़िरमा केएलएम प्राइवेट लिमिटेड।1978
- Berger, P. L. y T. Luckmann (1966): Social construction of reality: a treatise in the sociology of knowledge, Anchor Books, Garden City, NY.
- Domhoff, G. W. (1990): The power élite and the state: how policy is made in America, Aldine de Gruyter, Hawthorne, NY.
- Hall J. y R. Schroeder (eds.) (2005): An anatomy of power: the social theory of Michael Mann, Cambridge University Press, New York.

इकाई– 21 : दबाव समूह तथा राजनैतिक दल में अंतर

इकाई की रूपरेखा

21.0 उद्देश्य

21.1 प्रस्तावना

21.2 दबाव समूह का अर्थ

21.3 परिभाषायें एवं अर्थ

21.4 राजनीतिक दल का अर्थ

21.5 राजनैतिक दल की परिभाषा

21.6 राजनैतिक दल की संरचना एक प्रकार

21.7 दबाव समूह एवं राजनैतिक दल में अन्तर

21.8 सारांश

21.9 बोध प्रश्न

21.10 सन्दर्भ सूची

21.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन उपरान्त आप जान सकेंगें।

1. दबाव समूह का अर्थ एवं परिभाषा आप जानेगे।
2. राजनैतिक दल के अर्थ के बारे में जानेंगे।
3. दबाव समूह एवं राजनैतिक दल में अन्तर जानेगे।

21.1 प्रस्तावना

दबाव समूह वे संगठन होते है जो सरकार और सार्वजनिक नीतियों पर प्रभाव डालने के लिये काम करते है, लेकिन वें सीधे चुनाव में भाग नहीं लेते है। इनका मुख्य उद्देश्य अपनी विशिष्ठ समस्यायों, मुद्दो, या हितों को ध्यान में रखते हुये नीतिगत बदलाव लाना होता है। साथ ही समाज मे विभिन्न वर्गो और मुद्दो पर ध्यान केन्द्रित करते है अपने लक्ष्यो को प्राप्त करने के लिये विभिन्न प्रकार की रणनीतियो का प्रयोग करते है।

राजनीतिक दल – एक संगठन है जिसका मुख्य उद्देश्य राजनीतिक सत्ता प्राप्त करना और इसका उपयोग करना होता है, ये पार्टियाँ चुनाव में भाग लेती है और सरकार के कार्य प्रणाली को संचालित करती है। राजनीतिक दल लोकतन्त्र की नींव होते है और समाज में बदलाव, सुधार और विकास की दिशा में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। यह एक संगठित समूह होता है जो विशेष विचारधारा नीतियों और कार्यक्रमों के आधार पर काम करता है इसका लक्ष्य चुनावी प्रक्रिया में भाग लेकर सत्ता में आना और अपने विचार धारा एवं नीतियों को लागू करना राजनीतिक दल के पास एक संरचित संगठन होता है जिसमे विभिन्न पदों और जिम्मेदारियो के साथ एक संगठनात्मक ढांचा होता है। इसमे राष्ट्रीय, राज्य और स्थानीय स्तर पर विभिन्न इकाईयाँ शामिल होती है। प्रत्येक राजनीतिक दल की अपनी विशिष्ठ विचारधारा एवं नीतियाँ होती है और ये विचारधारा समाज के आर्थिक, सामाजिक, एवं राजनैतिक पहलुओं पर आधारित होती है।

सत्ता में आने के बाद, राजनैतिक दल नीतियों एवं कार्यक्रम को लागू करती है। सरकारी कार्यक्रमों का प्रबन्धन करती है और समाज के विकास के लिये निर्णय लेती है।

21.2 दबाव समूह का अर्थ

दबाव समूह एक अराजनैतिक संगठन है इसका कोई राजनैतिक विचारधारा नहीं होती है।

वी. ओ. कीः ''दबाव समूह एक ऐसा असार्वजनिक संगठन है जिनका निर्माण सार्वजनिक नीति को प्रभावित करने के लिये, किया जाता है। ये प्रत्याशियों के चयन तथा सरकार के व्यवस्थापन के उत्तरदायित्व की अपेक्षा सरकार को प्रभावित करने का प्रयत्न करने अपने हित साधन में लगे रहते है''।

सरल अर्थों में एक प्रकार के हित रखने वाले व्यक्तियो का एक ऐसा स्वैच्छिक अथवा गैर सरकारी संगठन होता है जो अपने हितों को पूरा करने का प्रयास करते है तथा सरकार में उत्तरदायित्व लिये बिना लोक नीतियों को प्रभावित करते है।

21.3 परिभाषायें एवं अर्थ

स्टीफेन एल. बेस्बी : "वर्तमान समाजशास्त्रियों की भाषा में समान व्यक्तियों के एकत्रीकरण से कोई भी व्यवस्थित अंतः क्रिया एक समूह का निर्माण करेगी और क्रिया हित की ओर संकेत करेंगी। इस आधार पर यद्यपि और औपचारिक रूप से संगठित अनेक हित समूह है तथापि हम अनेक और भी जोड़ सकते है तथा राजनैतिक प्रक्रिया में और उस पर उसे प्रभाव की पूर्ण जानकारी के लिये उनका भी अध्ययन आवश्यक है''।

हर्बर्ट गुटमैन : ''वह संगठन, जो किसी विशेष सामाजिक या आर्थिक हित की रक्षा के लिये काम करता है और नीतिगत निर्णयों को प्रभावित करने के लिये विभिन्न प्रकार की रणनीतियों का उपयोग करता है''।

गेराल्ड डब्लू. सुसमन : ''ऐसे समूह के रूप में परिभाषित किया जाता है जो समाज में विशेष हितो की रक्षा के लिये काम करते है और विभिन्न रणनीतियों के माध्यम से सार्वजतिक नीतियों और निर्णयों को प्रभावित करने का प्रयास करता है।''

अर्थात कह सकते हैं। की दबाव समूह पर विभिन्न समाजशास्त्रियो की परिभाषाएं इस तथ्य को उजागर करती है कि यें सगठंन समाज में विशेष मुद्दों पर ध्यान केन्द्रित करती और नीतिगत बदलाव लाने के लिये प्रभावी तरीकों का उपयोग करती है ।

21.4 राजनैतिक दल का अर्थ

लैटिन भाषा के शब्द Partire (Part) से दल की उत्पत्ति हुई जिसका अर्थ विभाजन है, यही कारण है दल की उत्पत्ति समाज मे विभिन्न हितों मे विचारधाराओं वाले वर्गो मे पारस्परिक विभाजन के फल स्वरूप हुई है।

राजनैतिक दल एक संगठित समूह है जिसका मुख्य उद्देश्य राजनीतिक सत्ता को प्राप्त करना उसे प्रभावी ढंग से प्रबंधित करना। राजनैतिक दल समाज में अपनी नीतियों और विचार धारा के माध्यम से जन समर्थन

प्राप्त करती है और चुनावी प्रक्रिया के माध्यम से सत्ता में आने का प्रयास करती है। सत्ता में आने के बाद यह पार्टी सरकार की नीतियो को लागू करती है और समाज के विभिन्न पहलुओ पर प्रभावित करती।

राजनैतिक दल के प्रमुख तत्व इस प्रकार है।–

(1) संगठित संरचना :– एक राजनैतिक पार्टी के पास एक व्यवस्थित संगठनात्मक ढाँचा होता है जिसमें विभिन्न स्तर पर पदाधिकारी होते है। इसमे केन्द्रीय समिति, क्षेत्रीय समितियों और स्थानीय इकाईयाँ शामिल है।

(2) विचारधारा और नीतियाँ :– हर राजनैतिक दल की अपनी विचारधारा और नीति होती है। ये विचारधारा समाज के आर्थिक, सामाजिक, राजनीतिक पहलुओं पर आधारित होती और पार्टी की नीतियों और कार्यकमों को दिशा प्रदान करती है।

(3) चुनाव प्रक्रिया में भागीदारी :– राजनीतिक दल चुनावी प्रक्रिया का एक हिस्सा होती है और चुनाव अभियानों का आयोजन करती है उम्मीदवार खड़ा करके मतदाताओं और अपनी नीतियों और विचारधाराओ की गहन जानकारी देते है।

(4) सत्ताधारी कार्य प्रणाली :– सत्ता में आने के बाद राजनीतिक पार्टी, नीतियों एवं कानूनों को लागू करती है, सरकारी कार्यक्रमो का प्रबन्ध करती है और समाज के विकास के लिये होती है।

किसी भी आधुनिक राज्य में तानाशाही छोड़कर, दलीय सरकार के पास कोई विकल्प नही है सरकार को नेता की आवश्यकता होती है। नेता को उनके पीछे आसंगत जनसाधारण की नहीं बल्कि संगठित अनुसरण की आवश्यकता होती है जो जनसाधारण के लिये मुद्दो का स्वतन्त्र चयन करती है।

इसलिये कह सकते है। राजनीतिक व्यवस्था का सफल संचालन करना है तो राजनीतिक दलो का होना बहुत ही अनिवार्य है।

समाज में परिवर्तन और विकास के कारण राजनीतिक दल को अब सम्मान की दृष्टि से देखा एवं माना जाता है। बिना राजनीतिक दल के किसी शासन व्यवस्था का चल पाना नामुमकिन है। यह एक ऐसा गुट होता है जिसके सदस्य किसी साझी विचारधारा में विश्वास करते है। और अपने–2 गुटो के म उम्मीदवारो को खड़ा करते है और निर्वाचित करवा कर दल को कार्यक्रम व नीतियों को लागू करवाने की कोशिश करते है। इसलिये कह सकते है राजनीतिक दल ऐसे लोगो का समूह है जिसके सदस्य एक विचारधारा एवं सिद्धान्तो पर विश्वास रखते है।

21.5 राजनैतिक दल की परिभाषा

एडमंड बर्क (Edmund Burke) राजनैतिक दल को परिभाषित करते हुए बर्क कहते है कि–

''राजनीतिक दल व्यक्तियों का ऐसा समूह है, जिसके सदस्य सामान्य सिद्धान्तो पर चलते हुए अपने सामूहिक प्रयासों द्वारा राष्ट्रीय हित का परिवर्तन करने के लिये एकता के सूत्र में बंधे होते है।''

सेम्युअल जे. एल्डर्सविल्ड के अनुसार– ''राजनीतिक दल विस्तृत समाज में सामाजिक समूह अथवा अर्थपूर्ण एवं प्रतिमानिक क्रियाओं की एक व्यवस्था है। इसका गठन ऐसे व्यक्तियों से होता है जो विशिष्ट पहचाने वाले समूह के उद्देश्यों की पूर्ति करते तथा विभिन्न भूमिकाओं में दल कार्यो को करते है।

आर0एम0 मैकाइवर (R.M. Maicaiver) के अनुसार – ''हम राजनीतिक दल की परिभाषा एक ऐसे संगठन के ठप कर सकते है जिसका संगठन कतिपय सिद्वान्त अथवा नीति के समर्थन में होता है तथा जो संवैधानिक साधनों से राज्य सरकार के घटकों का निर्माण करती है।

सारतोरी जी. (Sartory G.) के अनुसार ''वह कोई भी राजनीतिक समूह जो एक अधिकारिक नाम से (चुनावो में भी) पहचाना जाता है तथा चुनावी उम्मीदवारों के माध्यम से सार्वजनिक पदों की प्राप्ति करवाने में सक्षम है। हित समूह के विपरीत राजनीतिक दल' गंभीरता से सरकार की कुंजी प्राप्त करने का लक्ष्य राखते है और शक्ति का प्रयोग करते हैं।''

जोसेफ शुम्पीटर (Joseph A- Schumpeter) ने अपनी पुस्तक Two theories of Democracy में लिखा कि '' ऐसे लोगो का समूह जो सार्वजनिक कल्याण को बढ़ावा देने के लिये कुछ विशेष सिद्वान्तों पर सहमति रखत है व दल नहीं है। एक दल वह है जिस समूह के सदस्य राजनीतिक शक्ति के लिये प्रतिस्पर्धा संघर्ष करने का कार्य करते है।''

इस प्रकार कह सकते है कि राजनीतिक दल वह होते है–

1. जिनमें एक संगठन होता है दल मे एक नियम एवं संविधान होता है। इसमे कुछ पदाधिकारी, नियम और आफिस होता है। इनके माध्यम से दल में नियम एवं अनुशासन रहते है।
2. हर राजनीतिक दल के एक नियमित विचारधारा एवं सिद्वान्त पाये जाते और संवैधानिक तरीके से चुनाव में भाग लेकर सत्ता प्राप्त करने का प्रयास करता है।

3. राजनीतिक दल में परस्पर विरोधी समूह होते है लेकिन किसी उद्देश्य व राजनीतिक विचारधारा के साथ मिले होते है।

4. एक अल्पतन्त्र पाया जाता है राजनीतिक दल में शक्ति का केन्द्रीयकरण होता है। साथ ही संगठन का विशेष स्तरीकरण की व्यवस्था में विभाजित होता है।

5. राजनीतिक दल में एक सदस्य दूसरे सदस्य को दल की गतिविधियों की जानकारी देते रहते है। और नये सदस्य बनाये जा सकते है। एक तरह की यह खुली संरचना है।

उपर्युक्त से स्पष्ट होता है कि किसी भी राजनीतिक शक्ति का आधार वोट होता है। और विधायिका का चयन मतदान प्रणाली के माध्यम से होता है।

इस सन्दर्भ में मैक्स वेबर (Max Weber) ने कहा कि राजनीतिक दल शक्ति में ग्रह में निवास करते हे और उनके कार्य सामाजिक एवं राजनीतिक शक्ति हथियाने के लिये होते है।

21.6 राजनैतिक दल की संरचना एवं प्रकार

मोरिस दुवर्जर (Maurice Duverger) ने अपनी पुस्तक Political Parties: Their Orgamzation and Activity in the modern state (1954) में उन्होने राजनीतिक पल की विस्तार से व्याख्या की है। उनका कहना है राजनीतिक दल का उद्देश्य या लक्ष्य शान्ति को प्राप्त करना एवं उससे सम्बन्धित कार्यों में भाग लेना और साथ ही चुनाव में प्रत्याशियों को विजय प्राप्त कराना जिससे सरकार पर नियन्त्रण पा सके एवं सम्भव हो तो सत्ता प्राप्त कर सके।

दुवर्जर कहते है अपनी पुस्तक में कि राजनीतिक दल कोई समुदाय नहीं है बल्कि बहुत अलग–अलग समुदाय का एक समूह है, सम्पूर्ण देश में गुट, स्थानीय संस्थायें जो संघ के रूप में लगभग सभी देशो में पाये जाते है।

मोरिस दुवर्जर के अनुसार राजनीतिक दल की संरचना चार तत्वों से मिलती है।

1. **कॉकस या गुट (Caucas):–** कॉकस वह राजनीतिक दल होता है जो जाने पहचाने लेकिन प्रभावी लोगो का एक छोटा समूह होता है। और यह समूह कभी नहीं चाहता है कि उस छोटे समूह की संख्या बढ़े । यह समूह तब सक्रिय होता है जब चुनाव का समय आता है।

कॉकसका छोटा समूह होने का तात्पर्य है कि उनकी शान्ति कम होती है बल्कि यह बहुत महत्वपूर्ण होते है अधिक क्षमता वाले होते। भारत के प्रत्येक राजनीतिक दल में एक गुट/काकॅस होता है जो नीति निर्माण, चुनाव और महत्वपूर्ण फैसले में प्रमुख भागीदारी होती है।

2. **शाखा (Branch):–** यह मताधिकार का जब विस्तार होता है उसके परिणाम स्वरूप निकल कर आता है। शाखा का सीधा सम्बध जनता से होता है। यह एक खुला समूह होता, और इनकी संख्या पर जोर अधिक होता है। गुट केवल चुनाव तक सक्रिय होता परन्तु शाखा लगातार संचालित होती है। इसमे भी विभिन्न पदाधिकारी होते है और सबके कार्य एवं भूमिकायें निश्चित होती है। शारवा में स्तरीकरण पाया जाता है जिससे पदाधिकारियों के अनुसार पदाक्रम पाया जाता है। क्योंकि शाखा संगठित होती है इसके कारण सदस्यो में एकता पायी जाती है। राजनीतिक दल को शक्ति शाखाओं से ही प्राप्त होती है और वे अधिकतर क्षेत्र की विभिन्न शाखाओं से जुड़े रहते है।

3. **कोष्ठक (CELL):–** कोशिका की उत्पति या खोज साम्यवदी दलों ने की है। जब साम्यवादी दल ने क्रान्ति के माध्यम से परिवर्तन लाना चाहा तभी कोष्ठक की उत्पत्ति हुई। कोशिका जैसे नाम से स्पष्ठ होता है कि यह बहुत सूक्ष्म एवं लघु होता है। यह गुपचुप तरीके से कार्य करते है। और संगठन की संरचना का कार्य इसी कोशिका या कोष्ठक के माध्यम से होता है। कोशिका मूलतः उन सदस्यों का समूह है जो एक ही व्यवसाय में लगे हुए है जो प्रतिदिन कार्य के समय मिलते है। इसकी संरचना या निर्माण इस प्रकार का होता है कि एक कोशिका के नष्ट होने पर सम्पूर्ण दल संरचना संकट में न पड़े क्योकि एक ही स्तर पर प्रथक–प्रथक ईकाइयों के बीच कोई सम्पर्क नहीं रहता है।

4. **सेना या मिलीटिया (Militia):–** राजनीतिक दल को संरचना का प्रमुख सेना या नागरिक माना गया यह एक प्रकार की निजी सेना है जिसके सदस्यों को सेना में सैनिकों की भर्ती की तरह ही लिया जाता है, सेना के सदस्यों को नियम एवं अनुशासन में रहना पडता है इसके सदस्य सेना के समान टुकड़ियों, कम्पनियों व बटालियनों में संगठित होते, इस सेना के सदस्य एक विशेष वर्दी पहनते है और अपने दल के झण्डे के प्रति नतमस्तक होते है। इनका अपना एक विशेष प्रकार का आचरण होता है। सेना एक प्रकार से सत्तारूढ़ दल जो गैर–सरकारी सेना होती है जो देश के भीतर शत्रुओं से लड़ने और उन्हे समाप्त करने के लिये पर्याप्त होती है।

इस प्रकार राजनीतिक दल की संरचना में चार तत्व महत्वपूर्ण है। सभी तत्व की विशेष भूमिका होती है।

राजनैतिक दल का प्रकार (Types of Political Partiis)

मेरिस दुवर्गर (Maurice Duverger) अपने लेख The origin of Partiu में राजनीतिक दलों की संरचना के प्रकार निग्न है।

(1) प्रोटो दल (Protoparty): यह एक प्रकार का राजनीतिक गुट होता है। जिनका आधार उच्च, मध्यम, एवं कुलीन वर्ग से होता है। इनकी स्ंख्या काफी कम होती है। और इनका नेतृत्व कुलीन वर्ग करते है। दल का संचालन स्वार्थ पूर्ति के लिये ही होता है। 17वी व 18वी शताब्दी में इंग्लैण्ड में टोरी व व्हिग जैसे गुट या समूह थे। इन दोनों गुटों की अपनी–अपनी विचारधारा और संगठन है, इसी कारण उन्हें लिबरल गुट कहते है।

(2) केडर दल (Cadre Party): इस दल में सदस्यों की संख्या सीमित होती है। इसमे सदस्यो का चयन उनकी योग्यता एवं उनके सामर्थ्य पर होता है। ऐसे दलों को प्रायः वही व्यक्ति नियन्त्रित करते है जो धनी और योग्य होते है केडर दल के सदस्यों को सदस्य बनने के लिये कोई सदस्यता फार्म नहीं भरना पड़ता है। न ही कोई आर्थिक रूप से कुछ देना पड़ता है। साथ ही न कोई लेखा जोखा देना पड़ता है। यूरोप व अमेरिका में रेडिकल सोशिलिष्ट पार्टी और अमेरिका की रेडिकल पार्टी इसका प्रमुख उदाहरण है। 19वी सताब्दी में कुछ ऐसे दल पाये जाते है। जो आन्तरिक रूप से निर्मित होते है। कैडर दल के सदस्य मूल रूप से अभिजन एवं कुलीन वर्ग के लोग होते है केडर दल अनौपचारिक समूह होता है।

(3) मास दल (Mass Party): मास दल में संख्या का महत्वपूर्ण स्थान होता है अगर माँस दल का सदस्य बनना है तो इसकी सदस्यता प्राप्त करनी पड़ती है। इसके लिये आवेदन करना पड़ता है। इनका मुख्य उद्देश्य सदस्यों की संख्या बढाना और चन्दा इकठ्ठा किया जाता है। क्योकि यह दल उद्योगपतियों एवं पूँजीपतियों पर आश्रित नहीं होता है। मास दल में सदस्यों की संख्या अधिक होती है। इनमे जो सदस्य होते है वह जनसामान्य के होते है किसी विशेष वर्ग के नहीं होते है। और अपनी समस्याओं को जनसामान्य से ही सुलझाते है। यह दल अपने को उद्योगपतियों और पूँजीपतियों से दूर रखते है। और उनसे किसी भी प्रकार की आर्थिक मदद नहीं लेते है।

इनकी सदस्यता बहुत व्यापक होती है और इनका गठन विधान मण्डलों से बाहर होता है। और सामान्य जनता इनसे जुड़ने की कोशिश करती है। इनकी चुनाव में भागीदारी प्रत्यक्ष

रूप से होती है और अपने उद्देश्य की प्राप्ति के लिये विधानमण्डलों व संसद में अपना प्रतिनिधित्व चाहते है। दल की पूरी वित्त व्यवस्था सामान्य सदस्यो के हाथो में होती है।

(4) केच ऑल पार्टी (Catch All Party) – पिछले कुछ वर्षों मे तेजी से राजनीति का स्वरूप बदलने लगा है। सभी देशो में व्यवस्कों को मताधिकार प्राप्त हो गया है। जिसके कारण राजनीतिक दलो का स्वरूप भी बदल गया है। केच ऑल पार्टी का मतलब है कि सभी कुछ प्राप्त करना है। इसीलिये ये दल सभी प्रकार के मतदाताओं से मत प्राप्त करने की कोशिश करते है। Catch All Party किसी एक विशेष दल से नहीं जुड़े होते जबकि सभीवर्गों व मत प्राप्त करने का प्रयास करते है।

ये दल चुनाव में जनसंचार के माध्यम से अपने मतदाताओं से सम्पर्क करते है। और मतदाताओं से व्यक्तिगतः मिलने की जरूरत नहीं होती। ये नेता व कार्यकर्ता अपने दल की छवि ठीक व स्वच्छ बनाने की कोशिश करते है। इनमें दलों की सदस्यता हमेशा खुली रहती है। एक दल और अपने दूसरे दल को आकर्षित करते रहते है। यह केच ऑल पार्टी सभी दलो को ध्यान में रखकर काम करती है। यह पार्टी पूंजीपतियों एवं सभी समाज के वर्गों के चन्दा लेकर अपने दल को चलाती है।

(5) सर्वसत्तावादी दल (Totalitarian Parties):– इस दल को अधिनायक वादी दल भी कहते है। यह दल राजनीतिक व्यवस्या के विरोधी होते है। इस दल का मुख्य उद्देश्य सत्ता प्राप्त कर संवैधानिक व्यवस्था को निकाल फेंकना उसके साथ एक नयी व्यवस्था को लागू करना। जो एक विचारधारा और उद्देश्य के समर्थक होते है वह इस सर्वसत्तावादी दल के होते है। जैसे नाजी दल एवं फासी दल।

फ्रांस एवं इटली के साम्यवादी दल जो चाहते है कि सोवियत संघ की तरह अधिनायकवादी व्यवस्था स्थापित की जाये। इस प्रकार के दलों में राजनीतिक स्रोत एवं संचार के साधनो पर पूरी तरह नियन्त्रण होता है। इसमें राजनीतिक गोपनीयता बनायी रखी जाती है। इसमें अपने विचारों को व्यक्त करने की स्वतंत्रता नहीं होती है।

(6) कार्टेल दल (Cartel Party): कार्टेल शब्द की उत्त्पत्ति सबसे पहले कॉटन एवं पीटर मेर ने सन् 1995 में शुरु की। अर्थात उत्पादक संघों से सम्बन्धित है ये स्वतन्त्र है दलीय राजनीति का मतलब है कि यह एक पेशेवर राजनीतिज्ञ होते है। कार्टेल दल अपनी ओर आकर्षित करता है।

21.7 दबाव समूह एवं राजनैतिक दल में अन्तर

	दबाव समूह	राजनीतिक दल
1.	यह एक संगठन है जो नीतिगत निर्णयों को प्रभावित करने के लिये कार्य करती है।	यह एक संगठन है जो सत्ता मे आने के लिये चुनाव लड़ता है और सरकार बनाने का प्रयास करता है।
2.	दबाव समूह विशेष नीतियो एवं मुद्दो पर ध्यान आकर्षित करता एवं प्रभाव डालता है।	राजनीतिक दल सत्ता में आना और शासन करना उसका कार्य है।
3.	दबाव समूह की संरचना अपेक्षा कृत ढीली है और अक्सर गठबन्धन एवं नेटवर्क के रूप में कार्य करती है।	इसकी संरचना संगठनात्मक एवं पदानुक्रम होती है।
4.	इसकी सदस्यता विशेष वर्गों, व्यवसायों एवं विचारधाराओं तक सीमित रहती है।	यह आम जनता के लिये खुली सदस्यता रहती है।
5.	दबाव समूह नीतिगत बदलाव या विशेष मुद्दो पर ध्यान आकर्षित करने का लक्ष्य होने के साथ सदस्यता शुल्क, चन्दा एवं निजी दानकर्ता से पोषित होता है।	राजनीतिक दल चुनाव जीतने बनाने के लक्ष्य के साथ चुनावी चन्दा सरकारी अनुदान आदि से पोषित होते है।
6.	दबाव समूह की कार्यप्रणाली जनमत निर्माण लॉबीइंग और सार्वजनिक जागरूकता अभियान से लगे रहना है।	राजनीतिक दल की कार्यप्रणाली सार्वजनिक चुनाव में भाग लेना चुनाव प्रचार करने के साथ चुनाव आयोग एवं अन्य सरकारी एजेन्सियों द्वारा नियमित होता है।
7.	दबाव समूह नीतियों पर सुझाव देने और दबाव डालने के प्रयास के साथ इनकी स्वतंन्त्रता सरकारी सत्ता से स्वतंत्र रहते हुए केवल सलाहकार एक प्रभावक होते है।	राजनीतिक दल सरकार बनाने में नीतिगत निर्णय लेते समय इनकी स्वतंत्रता सरकारी सत्ता प्रबन्ध एवं प्रशासन में शामिल रहते है।
8.	दबाव समूह का प्रचार माध्यम मीडिया रिपोर्टर, साक्षात्कार होते	जबकि राजनीतिक दल का प्रचार माध्यम मीडिया, रैलिया एवं विज्ञापन होते

9.	दबाव समूह में कोई राजनैतिक विचारधारा नही होती है।	जबकि राजनीतिक दल का अपना एक राजनीतिक कार्यक्रम होता है एवं उसकी विचारधारा भी राजनीतिक होती है।
10.	दबाव समूह का उद्देश्य सत्ता प्राप्त करना नही होता बल्कि अपने हितो की रक्षा करना होता है। साथ ही निर्वाचन मे भाग नही लेते	राजनीतिक दल का उद्देश्य सत्ता प्राप्त करना होता। तथा योजना एवं कार्यक्रम के आधार पर अपने उम्मीदवार खड़े कर निर्वाचनों मे भाग लेते है।
11.	दबाव समूह विधानमण्डल के बाहर का कार्य करने के साथ, एक ही समय में एक ही व्यक्ति अधिक दबाव समूह का सदस्य हो सकता है।	यह विधानमण्डल को बाहर व अन्दर दोनो में कार्य करते है। और एक व्यक्ति ही राजनीतिक दल का सदस्य हो सकता है।

21.8 सारांश

दबाव समूह एक ऐसा संगठन है जो सरकारी नीतियों और फैसलों को प्रभावित करने के लिये काम करता है। इसका मुख्य उद्देश्य सरकार पर दबाव डालना ताकि हितो और विचारों को प्रमुखता दी जा सके। यह समूह आमतौर पर विशेष मुद्दे पर केद्रित होते है जैसे पर्यावरण, शिक्षा, व्यापार आदि।

इसी प्रकार राजनीतिक दल एक संगठित समूह है जिसका मुख्य उद्देश्य चुनाव लड़कर सरकार बनाना होता है। और विभिन्न मुद्दो पर विचार और नीतियाँ पेश करती है। राजनीतिक दल विभिन्न सामाजिक आर्थिक एवं राजनीतिक मुद्दों पर अपनी स्थिति को स्पष्ट करती है और सत्ता में आने के बाद इन नीतियों को लागू करने का प्रयास करती है। इसका लक्ष्य सत्ता प्राप्ति और उसका संचालन करना होता है।

21.9 बोध प्रश्न

1. दबाव समूह का अर्थ एवं परिभाषा लिखिए।
2. राजनैतिक दल की संरचना एवं प्रकार पर प्रकाश डालिए।
3. दबाव समूह एवं राजनैतिक दल में अन्तर स्पष्ट कीजिए।

21.10 सन्दर्भ सूची

1. सिंह, मनवीर (2022) – राजनीतिक समाजशास्त्र, शक्ति पब्लिशर, दिल्ली।
2. शर्मा, एल. एन. एवं मुरारी, कृष्ण (2014) – राजनीतिक समाजशास्त्र (21वीं सदी के बदलते सन्दर्भ में), ओरियन्ट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड।
3. सिंहल, एस. सी. (2020) – राजनीतिक समाजशास्त्र, युवराज बुक सेलर।
4. शर्मा, उर्मिला एवं शर्मा एस. के., (2023) – भारतीय राजनैतिक चिन्तन, अटलांटिक पब्लिशर एवं डिस्ट्रीब्यूटर।
5. सेंगर, शैलेन्द्र (2022) – भारतीय शासन एवं राजनीति, अटलन्टिक पब्लिशर।
6. जैन, पी. सी., (2023) – राजनीतिक समाजशास्त्र, रावत पब्लिकेशन।
7. जौहरी, जे. सी. (2021) – राजनतिक समाजशास्त्र, एस. बी. पी. डी. पब्लिकेशन।

इकाई – 22 : दबाव समूह या हितसमूह की राजनैतिक महत्व दोष या हानियाँ

इकाई की रूपरेखा

22.0 उद्देश्य

22.1 प्रस्तावना

22.2 दबाव समूह का महत्व

22.3 दबाव समूह का राजनीतिक औचित्य

22.4 दबाव समूह का राजनीतिक महत्व

22.5 दबाव समूह की दोष या हानियाँ

22.6 दबाव समूह की आलोचनायें

22.7 सारांश

22.8 बोध प्रश्न

22.9 सन्दर्भ सूची

22.0 उद्देश्य–

इस इकाई के अध्ययन उपरान्त आप समझ सकेंगें–

1. दबाव समूह क्या है ? एवं उसके बारे में चर्चा करेंगे।
2. दबाव समूह का राजनीतिक महत्व क्या है ? इसको विस्तार से जानेगें।
3. दबाव समूह के दोष अथवा हानियों को आप जानेगें।
4. दबाव समूह की आलोचना के विषय में जानेगें।
5. दबाव समूह के क्या सुझाव है ? उसको जानेगें।

22.1 प्रस्तावना

प्रेशर ग्रुप दबाव समूह ऐसे सगंठन होते है जिनका उद्देश्य सरकार और नीति–निर्माताओं पर प्रभाव डालना होगा यह समूह की अपने विशिष्ठ उद्देश्यों और हितो के लिये काम करते है जैसे किसी समाज में किसी विशेष वर्ग के अधिकारों की रक्षा करना, विशेष–नीतियो को प्रोत्साहित करना, या किसी विशेष मुद्दों पर ध्यान आकर्षित करना, दबाव समूह का मुख्य उद्देश्य होता है, कि नीतिगत फैसलों को प्रभावित करना। राजनीतिक समूह वे संगठन होते है जो चुनावी राजनीति में सक्रिय रहते है और सत्ता में भागीदारी के लिये संघर्ष करते है।

डब्ल्यू डब्ल्यू रोस्टो (W.W. Rostow) के अनुसार दबाव समूह वह संगठन होते है जो राजनीतिक निर्णय –प्रक्रिया में अपने विशिष्ट हितो को बढावा देने के लिये प्रभाव डालते हैं। ये समूह किसी भी सरकार की नीति निर्धारण प्रक्रिया को प्रभावित करने के लिये गुट और प्रचार के माध्यम से काम करते है। अर्थात् दबाव समूह का मुख्य उद्देश्य अपने सदस्यों के हितो को प्राथमिकता दिलवाना और समाज के किसी विशेष वर्ग के लाभ की रक्षा करना होता। ये समूह उन नीतियों और निर्णयों को प्रभावित करने का प्रयास करते है जो उनके विशेष हितो से सम्बन्धित होते है।

आर्थर बर्न्स (Anthorn burns) के अनुसार दबाव समूह वह संगठन होते है जो सीधे चुनावी राजनीति में भाग नही लेते है लेकिन नीतिगत निर्णयो को प्रभावित करने के लिये विभिन्न राजनीतिक एवं सार्वजनिक दबाव का उपयोग करते हैं। इन समूहो का मुख्य उद्देश्य समाज में अपनी विचारधारा और मुद्दो को प्रस्तुत करना होता है।

आर्थर बर्न्स के अनुसार–दबाव समूह अपनी चुनावी राजनीति में सक्रिय भागीदारी नहीं करते इसका मतलब है कि ये संगठन चुनाव नही लड़ते और सरकार बनाने के लिये वोट नही मागते हैं वे सत्ता में सीधे भागीदारी नहीं करते बल्कि इनकी गतिविधियाँ नीति निर्माण और समाज पर प्रभाव डालने पर केन्द्रित होती है।

कहा जा सकता है कि दबाव समूह विशेष प्रकार की नीतियों या सामाजिक बदलाव के लिये समाज में जागरूकता फैलाते है, वे प्रभावशाली अभियान चलाते है, जैसे कि प्रदर्शन, रैलियाँ और मीडिया कैम्पेन आदि ताकि जनता और सरकार उनके मुद्दो पर ध्यान दे और समर्थन प्राप्त करे।

22.2 दबाव समूह का महत्व

1. **नीति निर्माण में योगदान :–** दबाव समूह नीतियों एवं कानून के निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है। ये सरकार और नीति निर्माताओ को समाज के विभिन्न हिस्सो की समस्याओ और आवश्यकताओं के बारे में जानकारी प्रदान करते है।

2. **जनमत निर्माण :–** दबाव समूह लोकतांत्रिक प्रक्रिया एवं जनमत निर्माण में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है क्योंकि जनता के विभिन्न वर्गों के विचारों एवं मांगों को सरकार तक पहुँचाने का कार्य करते है।

3. **सामाजिक एवं आर्थिक सुधार::–** दबाव समूह समाज के लिये सकारात्मक कार्य भी करते है। समाज में कमजोर वर्गो के लियेआवाज को उठाते है। और अपने अधिकारों की रक्षा करते है और साथ ही ये वर्ग आन्दोलन भी चलाते है जिससे समाज में बराबरी और न्याय सुनिश्चित किया जा सके।

4. **विवादों का समाधानः–** दबाव समूह विभिन्न सामाजिक और आर्थिक विवादों का समाधान ढूढ़ने में मदद करते है। वे सरकार व अन्य संगठनो के साथ मिलकर समस्याओं का समाधान निकालते है।

5. **संसाधनों की असमानताः–**सभी दबाव समूह केवल अपने हितों को ही प्राथमिकता देते जिससे समाज के अन्य हिस्सो की अनदेखी होती है।

22.3 दबाव समूह का राजनीतिक औचित्य

अगर देखा जाय तो आज दबाव समूह इतना अधिक प्रभावित है कि कोई कानून या नीति निर्माण और कानून निर्माताओं को धन बल अथवा अप्रत्यक्ष व प्रत्यक्ष तरीके से लाभान्वित कर देते है। इसका मतलब है कि दबाव समूह कभी भी सक्रिय राजनीति में भाग नही लेते है। वे अपने हितों के अनुरूप विभिन्न दलों के उम्मीदवार को सहयोग करते है। दबाव समूह के अगर कोई भी हित के विरूद्व व्यवस्था होती है तो

वह शान्ति का या उस व्यक्ति का विरोध करते है। राजनीति व्यवस्था में ऐसे परिवर्तन हो रहे जिसमे व्यक्तिगत रूप से विचारकों का महत्व कम हो रहा है। इस लिए दिन प्रतिदिन दबाव समूह का महत्व बढ़ता जा रहा है। इस सम्बन्ध में फाइनर (Finer) ने कहा कि जहाँ सिस्टम व संगठन मे राजनीति दल कमजोर होगें' वहाँ दबाव समूहो को दबा दिया जायेगा।

लोकतान्त्रिक राज्य मे विभिन्न वर्गो के अलग–अलग हित होते है और हित को प्राप्त करने के किये कई दबाव समूह उत्पन्न होते जो हितो की पूर्ति करते है। दबाव समूह सामान्य जनता को शासनतक पहुंचाने में मदद करते है। और मार्ग भीबनाते है।

अर्थात दबाव समूह वास्तव में राजनीतिक वातावरण का एक पैमाना है जिसके आधार पर नीति निर्माता अपने द्वारा बनायी गयी नीतियों का विश्लेषण कर सकते है।

22.4 दबाव समूह का राजनीतिक महत्व

अगर दबाव समूह को देखा जाये तो लोकतान्त्रिक व्यवस्था में मुख्य रूप से राज्यों की कार्य प्रणाली और राजनीतिक, व्यव्हार में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। दबाव समूह वह है जिनके सदस्यों के सामान आर्थिक हित होता है। इन हितों की प्राप्ति के लिये वह हर समय और प्रयास करते है।

दबाव समूह कार्यपालिका, न्यायपालिका एवं व्यवस्थापिका तक को प्रभावित करते है। भारत में ऐसे अनेक दबाव समूह जो सरकार की कार्यप्रणाली को प्रभावित करते है। महिला संगठन, श्रामिक सगंठन, उद्योगपतियों का संगठन, व्यापारियों का संगठन, छात्र संगठन आदि सब दबाव समूह में सम्मिलित है। दबाव समूह सरकार पर दबाव डालते है। सम्बन्धित मंत्रालयों, विभागों सांसदों विधायकों आदि से मिलकर या पत्र लिखकर अपनी बात को प्रस्तुत कर अपनी बातों को मनवाने की कोशिश करते है। दबाव समूह अपनी बातों को मनवाने के लिये कोई कसर नहीं छोड़ते है। चुनाव जब भी आयोजित होते है तब–तब दबाव समूह सक्रिय हो जाते है। यह न केवल आर्थिक हितों से जुड़े होते है बल्कि भाषा, संस्कृति, क्षेत्रीयता, जाति और धर्म इयादि में भी जुड़े होते है।

22.5 दबाव समूह की दोष या हानियाँ

दबाव समूह अक्सर अपनी विशेष धारणाओं और उद्देश्यों के लिये काम करते है, जो सभी के हित में नहीं हो सकते है। इसमें समाज का विभाजन और विवाद उत्पन्न हो सकता है। कुछ दबाव समूह इतने प्रभावशाली होते है और वे सरकार व अन्य संगठन पर दबाव डालकर निर्णय लेने में हेर–फेर कर सकते है जिससे लोकतान्त्रिक प्रक्रियाओं की कमी हो सकती है।

दबाव समूह द्वारा उठाए गये मुद्दों के कारण समाज के विभिन्न वर्गों में असंतोष और असहमति उत्पन्न हो सकती है जिससे सामाजिक स्थिरता पर असर पड़ सकता है। दबाव समूह कभी–कभी अपने उद्देश्य को पूरा करने के लिये अनावश्यक या अन्यायपूर्ण दबाव डाल सकते है जिससे सरकारी नीतियों और निर्णयों पर सकारात्मक प्रभाव पड़ सकता है।

दबाव समूह के विशेष उद्देश्यों से यह नही मान लेना चाहिए की इसमें कोई दोष नहीं है। आज के दौर में दबाव समूह में दिन प्रतिदिन स्वार्थवादिता बढ़ रही है दबाव समूह में होने वाली दोषों को हम इस प्रकार रख सकते।

1. कभी–कभी ऐसा होता है कि दबाव समूह के लोगो में अपनी मतभेद के कारण सामान्य हित को हानि पहुंचाने की सम्भावना अधिक हो जाती है।

2. दबाव समूह चुनाव के दौरान अपने इच्छित प्रत्याशियों के लिये मत खरीदते है और अपने द्वारा समर्पित विजयी उम्मीदवार को बाध्य करते है कि वें अपने संसदीय कर्तव्यों एवं राष्ट्रीय कीमतों पर उनके हितों का संरक्षण करें।

3. अमेरिका के एक अध्ययन सें यह पता चलता है कि दबाव समूह द्वारा राजनीतिक जीवन की पवित्रता तथा स्वच्छता खतरे में हो जाती है।

4. दबाव समूहों के हितों के संघर्ष में तीव्रता और व्यापकता के बढ़ जाने से सामाजिक एकता को भी खतरा पहुंचने की संभावनायें बढ़ सकती है।

5. दबाव समूहों को नकारात्मक कार्य प्रणालियाँ लोकतन्त्र के लिये अच्छी नहीं मानी जाती है।

6. दबाव समूह अक्सर केवल एक विशिष्ट समूह या वर्ग के हितों का प्रतिनिधित्व करते है। इससे उनके विचार और उद्देश्य व्यापक जनमत में भिन्न हो सकते है, जिससे उनकी लोकप्रियता सीमित रह सकती है।

7. दबाव समूह का कारण समाज में विभाजन हो सकता है क्योंकि वे केवल अपनी विशेष प्राथमिकताओं को बढ़ावा देते और अन्य समूह के हितों को अनदेखी कर सकते है।

8. कुछ दबाव समूह अपनी मांगों की पूर्ति के लिए भ्रष्टाचार का सहारा लेते है।

9. दबाव समूह के अत्याधिक दबाव से निर्णय लेने की प्रक्रिया में तेजी लाने की कोशिश करते हैं जिससे सोच विचार में कमी हो जाती है एवं स्थाई समाधान की संभावना घट सकती है।

10. कुछ दबाव समूह के कारण शक्ति और संसाधनों का उपयोग करके नीतिगत निर्णयों पर अनुचित प्रभाव डाल सकते है।

22.6 दबाव समूह की आलोचनायें

1. दबाव समूह अक्सर केवल अपने विशिष्ट सदस्य वर्ग या उद्योग के हितों का प्रतिनिधित्व करते है, जिससे सारे समाज के हितों की अनदेखी हो सकती है। इससे नीतियों मे असंतुलन पैदा हो जाता है। साथ ही दबाव समूह के संघर्ष और विरोधी विचारधाराओं के कारण समाज में विभाजन और तनाव उत्पन्न हो सकता है। यह सामाजिक सामन्जस्य को बाधित कर सकता है और विभिन्न समूह के बीच संघर्ष बढ़ा सकता है।

2. दबाव समूह का प्रभावशाली होना हमेशा लोकतान्त्रिक प्रक्रिया के लिए अच्छा नहीं होता। अमीर या शक्तिशाली समूह के पास अधिक संसाधन एवं प्रभाव होता है जिससे वे अपनी प्राथमिकताओं को लागू करवा सकते है। जबकि छोटे या कमजोर समूहों की आवाज दब जाती है।

3. कुछ दबाव समूह की गतिविधियों के कारण कभी–कभी सार्वजनिक हित की अनदेखी की जाती है। उनकी मांगों की पूर्ति के लिये नीतिगत बदलाव ऐसे हो सकते है, जो व्यापक जनहित के विपरीत हो।

4. दबाव समूह केवल इसलिये भी आलोचना की जाती है कि यह केवल स्वयं के विशिष्ठ हितों की प्राप्ति के लिये सरकार के पास जाते है। इनका सामान्य जन से कोई सरोकार नहीं होता है।

22.7 सारांश

अतः कह सकते है कि दबाव समूह सामाजिक न्याय एवं सुधार के मुद्दों को उजागर करते हैं और इनकी दिशा में काम करते है, जैसे– महिला सशक्तिकरण, मानवाधिकार और पर्यावरण संरक्षण, दबाव समूह सामाजिक मुद्दों पर जनता को जागरुक करते है और उन्हें समाधान के लिये प्रेरित करते है साथ ही ये समूह समाज मे विचारों की विविधता को बढ़ावा देते है और विभिन्न दृष्टिकोणों को सामने लाते है जिससे लोकतन्त्र की मजबूती होती है। वहीं दूसरी ओर दबाव समूह कभी–कभी केवल एक विशेष वर्ग या समुदाय के हितो का प्रतिनिधित्व करते है, जिससे समाज के बाकी हिस्सों की उपेक्षा हो सकती है।

इस प्रकार दबाव समूह समाज में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते है लेकिन उनके कार्यों और प्रभावों के नकारात्मक पहलुओं को भी समझना और संतुलित दृष्टिकोण अपनाना आवश्यक है।

22.8 बोध प्रश्न

1. दबाव समूह के राजनैतिक औचित्य की विस्तृत व्याख्या कीजिए।
2. दबाव समूह में राजनीति का क्या महत्व है ?
3. दबाव समूह कि कमियाँ बताइये।
4. इबाव समूह के महत्व की व्याख्या कीजिए।
5. दबाव समूह के आलोचनात्मक व्याख्या कीजिए।

22.9 सन्दर्भ सूची

1. सिंह, मनवीर (2022) – राजनीतिक समाजशास्त्र, शक्ति पब्लिशर, दिल्ली।
2. शर्मा, एल. एन. एवं मुरारी, कृष्ण (2014) – राजनीतिक समाजशास्त्र (21वीं सदी के बदलते सन्दर्भ में), ओरियन्ट ब्लैकस्वॉन प्राइवेट लिमिटेड।
3. सिंहल, एस. सी. (2020) – राजनीतिक समाजशास्त्र, युवराज बुक सेलर।
4. शर्मा, उर्मिला एवं शर्मा एस. के. (2023) – भारतीय राजनैतिक चिन्तन, अटलांटिक पब्लिशर एवं डिस्ट्रीब्यूटर।
5. सेंगर, शैलेन्द्र (2022) – भारतीय शासन एवं राजनीति, अटलन्टिक पब्लिशर।
6. जैन, पी. सी., (2023) – राजनीतिक समाजशास्त्र, रावत पब्लिकेशन।
7. जौहरी, जे. सी. (2021) – राजनतिक समाजशास्त्र, एस. बी. पी. डी. पब्लिकेशन।

इकाई – 23 : भारत में दबाब समूह की विशेषताएँ एवं वर्गीकरण

इकाई की रूपरेखा

23.0 उद्देश्य

23.1 प्रस्तावना

23.2 दबाव समूह व हित समूह का अर्थ एवं परिभाषा

23.3 दबाब समूह के प्रकार

23.4 दबाब समूह की विशेषताएँ एवं महत्व

23.5 भारत में दबाब समूह का वर्गीकरण

23.6 सारांश

23.7 बोध प्रश्न

23.8 सन्दर्भ सूची

23.0 उद्देश्य

इस इकाई के अध्ययन उपरान्त आप जान सकेंगे –

1. दबाव समूह या हित समूह का अर्थ एवं परिभाषा को आप जानेंगे।
2. दबाब समूह के प्रकार के विषय में आप समझ सकेंगे।
3. दबाब समूह की विशेषताओं का अध्ययन आप कर सकेंगे।
4. दबाव का वर्गीकरण को आप समझ सकेंगे।

23.1 प्रस्तावना

दबाब समूह या हित समूह, समाज के संगठित समूह होते है जिनका उद्देश्य सरकारी नीतियों और निर्णयों को प्रभावित करना होता है। ये समूह राजनीतिक सत्ता की प्राप्ति की बजाय विशेष हितों और मुद्दो के संरक्षण पर ध्यान केन्द्रित करते हैं।

दबाब समूह का प्रभाव न केवल राजनीति में बल्कि सामाजिक और आर्थिक क्षेत्र में भी देखा जाता है, जहाँ वे अपनी आवाज और विचारों को प्रमुख बनाने के लिए विभिन्न साधनों का उपयोग करते हैं। दबाव समूह या हित समूह का गठन समाज के विभिन्न वर्गो समूहों और समुदायों की आवश्यकताओं और समस्याओं को ध्यान में रखते हुए किया जाता है।

वे नीतिगत निर्णयो, विद्यायी प्रक्रियाओ, और सार्वजनिक समस्याओं में सक्रिय भूमिका नियति हैं। जिससे सम्बन्धित वर्गों के हितों की रक्षा हो सके ।

दबाब समूह अपना कार्य विभिन्न तकनीको के माध्यम से करते है जैसे– लॉबिंग, सार्वजनिक अभियानों का संचालन, विरोध प्रदर्शन, और कानूनी कार्यवाही आदि ।

दबाव समूह समाज के भीतर बदलाव लाने, असमानताओ को समाप्त करने, और नीतिगत सुधारों के लिए संघर्ष करते हैं।

इस प्रकार दबाव समूह का मुख्य उद्देश्य नीति निर्माताओं पर प्रभाव डालना, समाज में जागरूकता फैलाना, और सामाजिक या राजनीतिक बदलाव की दिशा में कार्य करना ।

23.2 दबाव समूह व हित समूह का अर्थ एवं परिभाषा

दबाव समूह या हित समूह व्यक्तियों का ऐसा समूह है समाज के विभिन्न वर्गों और समूहों के हितो को बढ़ावा देने और उनकी रक्षा के लिए सक्रिय रूप से संगठित होते हैं। इसे दबाव समूह इसलिए कहा जाता है क्योंकि यह सरकारी नीतियों और निर्णयों को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं। दबाव समूह, हित समूह, और निहित समूह एक ही है और एक–दूसरे के स्थान पर इस्तेमाल किये जाते हैं। वे राजनीतिक दलों से अलग हैं क्योंकि ये चुनावों को चुनौती नहीं देते या सत्ता हथियाने की कोशिश नहीं करते ।

हित धारक समुह लोबिंग, संचार, जनसंपर्क, प्रचार, याचिका, सार्वजनिक बहस और विधायकों के साथ सम्पर्क जैसे वैध और शान्ति पूर्वक तरीकों से सरकारी नीतियों और निर्णयों को प्रभावित करने का प्रयास करते हैं।

दबाव समूह या हित समूह का मुख्य उद्देश्य अपने सदस्यों के आर्थिक, सामाजिक, या सांस्कृतिक लोगो की रक्षा करना होता है, और वे इस उद्देश्य को प्राप्त करने के लिए विभिन्न तरीकों का उपयोग करते हैं।

दबाज समूह की परिभाषाएं–

1. **W.J.M.– डब्ल्यू. जे. एम. मैकेंजी**– ने दबाव समूह को संगठित समूह के रूप में परिभाषित किया है जिनके पास औपचारिक संरचना और वास्तविक सामान्य हित दोनों होते है, जहाँ तक वे निर्णयों को प्रभावित करते हैं।

2. **मूडी और स्टडर्ट–** कैनेडी : दबाव समूह को किसी भी संगठित समूह के रूप में परिभाषित करते है जो सरकार को प्रभावित करने की कोशिश करते हैं।

3. **सैमुअल फाइनरः** ने दबाव समूह को एक ऐसा संगठनों का रूप बताया है जो सार्वजनिक निकायों और नीतियो को अपनी इच्छानुसार प्रभावित करने की कोशिश करते है, लेकिन वें सीधे सरकार चलाने के पक्ष में नहीं होते।

4. **पीटर शिवलेः** दबाव समूह को एक ऐसा समूह मानते हैं जिसमें समान रूचियों या उद्देश्य वाले लोग एकत्रित होते हैं, और अपनी इच्छाओ को पूरा करने, अपने हितों को बढावा देने, और सरकारी समर्थन प्राप्त करने के लिए न्याय करते हैं।

5. **एन. सी. हण्टः** दबाव समूह वे संगठित समुह होते हैं जो बिना राजनीति सत्ता की मांग किए सरकार की नीतियों और निर्णयों को प्रभावित करते हैं। ये समूह विभिन्न साधनो का उपयोग करते हुए नीति–निर्माताओं पर दबाव डालते है ताकि उनके हितों के अनुरूप कार्य हो सके ।

हालाँकि इन परिभाषाओं में कुछ अंतर हो सकता है, लेकिन यह स्पष्ट है कि दबाव समूह स्वैच्छिक सामाजिक समूह होते है मनचाहा बदलाव लाने या अवांच्छित बदलाव को रोकने के लिए प्रभावी रूप से सक्रिय रहते हैं। उनकी इस सक्रियता को ''दबाव राजनीति'' कहा जाता है, जिसमें सरकार और अन्य राज्य तंत्रों जैसे– विद्यालयो, कार्यपालिका, या निर्णय लेने और सार्वजनिक नीतियों को लागू करने वाले व्यक्तियों को प्रभावित करने के लिए विभिन्न तरीको का उपयोग किया जाता है।

23.3 दबाव समूह के प्रकार

अब जब हमें यह समझ में आ गया है कि दबाव समूह क्या होते है, तो आइये दबाव समूहों के विभिन्न प्रकारों पर नजर डालते हैं।

1. **संस्थागत हित समूहः** ये संगठन औपचारिक रूप से गठित होते हैं और उन व्यक्तियों से बने होते है जो सरकार में कार्यरत होते हैं। ये संगठन सरकारी नीतियों पर प्रभाव डालने का प्रयास करते है। इनमें राजनीतिक दल, संसद, सेना और नौकरशाही शामिल होते हैं। ऐसे संगठन नियमो और कानूनों का पालन करते हुए संवैधानिक तरीको का उपयोग करके विरोध दर्ज करते हैं।

   उदाहरण के लिए, IAS एसोशिएशन, IPS एसोसिएशन, और राज्य सिविल सेवा एसोसिएशन जैसी संस्थाएं।

2. **गैर एसोसिएशन हित समूहः–** ये अनौपचारिक समूह होते है जो रिश्तेदारों, पूर्वजों, जातीय समूहो, क्षेत्रो, सामाजिक स्थितियों और वर्गो पर आधारित होते हैं। ये समूह अपने हितो को व्यक्तियो, परिवारों और धार्मिक नेताओं के आधार पर स्पष्ट करते हैं। इनकी संरचना औपचारिक नहीं होती। इनमें भाषा समूह और जातीय समूह होते हैं।

3. **एनोमिक हित समूहः–** एनोमिक दबाव समूह वे समूह होते है जो समाज में स्वेच्छा से बिना किसी औपचारिक संगठन के, राजनीतिक प्रणाली में हस्तक्षेप करते हैं। ये समूह अक्सर दंगों, प्रदर्शनों, हत्याओ आदि जैसी गतिविधियो के माध्यम से असंतोष या विरोध प्रकट करते हैं।

4. **<u>एसोसिएशन हित समूहः–</u>** ये संगठित और विशेष समूह होते है, जो किसी विशेष उद्देश्य के लिए बनाये जाते है। इनमें ट्रेड यूनियन, व्यापार और औधोगिक संगठन, और नागरिक समुह शामिल होते हैं। उदाहरण के लिए, बंगाल चैम्बर ऑफ कॉमर्स, इंडियन चैम्बर ऑफ कॉमर्स AITUC (ऑल इंडिया ट्रेड यूनियन काउंसिल), शिक्षको का संघ, छात्रो का संघ जैसे नेशनल स्टूडेंट यूनियन ऑफ इंडिया (NSUI)।

23.4 दबाव समूह की विशेषताएँ एवं महत्व

- **साझा हित** – दबाव समूह साझा हितो, चिंताओ या कारणों के इर्द–गिर्द बनते हैं। सदस्य समूह इनमें ऐसे मुद्धों को शामिल करते है जो उनकी मान्यताओ से मेल खाते है, जैसे– पर्यावरण संरक्षण, स्वास्थ सेवा सुधार।
- **स्वैच्छिक सदस्यता–** सदस्यता स्वैच्छिक होती है व्यक्ति अपनी इच्छा से इसका सदस्य बनता है, और समूह के लक्ष्यों का समर्थन करता है। और इसकी गतिविधियों में योगदान के लिए तैयार रहता है।
- **विशिष्ट उद्देश्य–** इनका ध्यान एक विशेष मुद्दे या हित पर केन्द्रित होता है।
- **गैर राजनीतिक स्वभाव–** ये समूह सीधे राजनीतिक सत्ता प्राप्त करने का प्रयास नहीं करते, बल्कि सरकार और नीति–निर्माताओं को प्रभावित करने का कार्य करते हैं।
- **संगठित संरचना–** दबाव समूह की स्पष्ट और संगठित संरचना होती है, जिसमें नेतृत्व, सदस्यता और कार्य–प्रणाली का निर्धारण होता है।
- **लॉबिंग प्रचार–** ये समूह अपने उद्देश्यों को प्राप्त करने के लिए लॉविंग, जनजागरूकता अभियान, विरोध प्रदर्शन, और मीडिया का उपयोग करते हैं।
- **लचीलापन** – दबाव समूह अपनी रणनीति में और तरीकों में परिस्थितियों के अनुसार समायोजित कर सकते हैं।

दबाव समूह का महत्वः

दबाव समूह निम्नलिखित कारणों से महत्वपूर्ण हैं –

- ये समूह महत्वपूर्ण मुद्दों व जनमत पर चर्चा करते हैं और उसे संगठित करते हैं। यह नागरिको को विशिष्ठ मुद्दों पर शिक्षित भी करते हैं।
- ये समूह संवैधानिक अधिकारो और स्वतंत्रताओ की रक्षा के लिए सक्रिय रहते हैं।

- ये समूह नीतियों की समीक्षा और सुधार की प्रक्रियाओं में भाग लेते हैं और सरकारी कार्यप्रणालियों पर नजर रखते हैं।
- ये समूह हितो की करते हैं और अपने सदस्यों की समस्याओं को सरकार के सामने रखते हैं।
- दबाव समूह सामाजिक न्याय, मानवाधिकार, और पर्यावरण संरक्षण जैसे महत्वपूर्ण मुद्दो पर जागरुकता फैलाते हैं। समाज में सकारात्मक बदलाव के लिए काम करते हैं।

इन कारणों से दबाव समूह समाज और लोकतंत्र के विकास और कार्यप्रणाली में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

23.5 भारत में दबाव समूह का वर्गीकरण

भारत में लोगों की मांग के अनुसार विभिन्न श्रेणियों के अर्न्तगत कई दबाव समूह बनाये गये है। उनमें से कुछ नीचे सूचीबद्ध हैः

(1) व्यापार समूहः फेडरेशन ऑफ इंडियन चैम्बर्स ऑफ कॉमर्स (FICCI), संम्बन्धित फेडरेशन ऑफ इंडियन, ऑल इंडिया फूड एंड ग्रेन ट्रेडर्स एसोसिएशन (FAIFDA), आदि ।

(2) ट्रेड यूनियनः इंडियन नेशनल ट्रेड यूनियन कांग्रेस (INTUC), ऑल–इंडिया ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC), हिंद मजदूर सभा (HMS), भारतीय मजदूर संघ (BMS)।

(3) कृषि समूहः इसमें भारतीय किसान संघ, अखिल भारतीय किसान सभा आदि शामिल है।

(4) आदिवासी समूहः आदिवासी राष्ट्रीय स्वयंसेवक (TNU), असम की आदिवासी लींग, त्रिपुरा में नेशनल सोशलिस्ट काउंसिल ऑफ नागालैण्ड (NSCN), और यूनाईटेड मिजो फेडरल आर्ग आदि।

(5) विचारधारा आधारित समूहः चिपको आंदोलन, नमर्दा बचाओ आंदोलन, इंडिया अगेंस्ट करप्शन, महिला अधिकार संगठन आदि।

(6) धार्मिक समूहः राष्ट्रीय स्वयं–सेवक संघ (RSS), विश्व हिंदू परिषद (UHP), जमात–ए– इस्लामी आदि।

(7) जाति समूहः हरिजन सेवक संघ, नादर जाति संघ, भाषाई समूह तमिल संघ, आंध्र महासभा आदि।

(8) शैक्षिक और पेशेवर संघः

- नेशनल टीचर्स यूनियन – शिक्षकों के अधिकारों और समस्याओ को उठाता है।
- डॉक्टरों की एसोसिएशन–स्वास्थ्य नीतियों में सुधार के लिए काम करता है।

(9) मानवाधिकार और सामाजिक न्याय समूहः

- एमनेस्टि इंटरनेशनल इंडिया– मानवाधिकारों की रक्षा के लिए कार्य करता है.
- दयालु समाज – समाज में समानता और–न्याय के लिए कार्य करता है।

ये दबाव समूह भारत की लोकतांत्रिक प्रक्रिया को सशक्त बनाते हैं और विभिन्न समूहों की आवाज को नीति–निर्माण में शामिल करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं।

आमण्ड का वर्गीकरण (clasification by Almond) – आमण्ड के अनुसार दबाव समूह चार प्रकार के होते है।

1. **संस्थागत हित समूह (Institutional Interest Group)** – एक ऐसा समूह जो किसी सरचना में रहकर अपने हित को पूरा करने के लिये दबाव समूह में कार्य करते है। हित समूह का विकास, राजनीतिक दलो, विधानमण्डलो, अधिकारी तन्त्र आदि औपचारिक संस्था के सामान होता है। इनका मुख्य उद्देश्य राष्ट्रीय हितों की पूर्ति करना है। एक यह अधिक संगठित एवं मजबूत होते जिनसे अपने हितों को काफी स्पष्ट एवं मजबूती से प्रस्तुत करते है।

2. **असाहचर्यज्य हित समूह (Non-Associational Interest Group)** – यह न पूर्ण रूप से संगठित होते है न ही औपचारिक होते है। यह अपने–अपने हितों को ध्यान में रखकर समायोजन में ज्यादा रूचि रखते है। इनका जन्म धर्म, रक्त सम्बंध, नातेदारी, क्षेत्रीय समूह के आधार पर होता है। यह विशिष्ट व्यक्तियो के नेतृत्व में बनते भी है और टूट जाते है। इसलिये यह समूह निरन्तरता नही रखते बल्कि परिस्थिति के अनुसार बनते है।

3. **अप्रतिमान हित समूह (Anomic Interest Group)** – यह समूह भीड़, जुलूस, दंगो, हड़ताल, प्रदर्शनों के रूप में अचानक राजनीतिक व्यवस्था में प्रवेश करते है इनकी प्रवृत्ति बहुत अस्त व्यस्त होती है। ये शासनतन्त्र को भ्रमित करके अपने हितों की प्राप्ती के लिए किसी भी हद तक का प्रयास करते है। इस समूह का विकास तनाव व असंतोष के कारण होता है।

4. **साहचर्यजन्य हित या दबाव समूह (Association Interest / Pressure group)** – यह समूह विशेष व्यक्ति के हितो को ध्यान में रखकर बनाये जाते है इनका संचालन पेशेवर लोगों के द्वारा होता है। इनकी कार्य प्रणाली काफी व्यवस्थित एवं संगठित होती है।

राबर्ट सी. बोन का वर्गीकरण (classification of Robert C-Bone) आपने इसका वर्गीकरण दो भागों में किया है।

1. **परिस्थितिजन्य दबाव समूह (Situational Pressure group)–** इस प्रकार के समूह का उद्देश्य अपने सदस्यों की वर्तमान सामाजिक दशा को सुधारना होता है, इनकी प्रकृति विशिष्ठ होती है और सदस्गों के हितों को पूरा करने के लिये वैधानिक प्रक्रिया का सहारा लेते है।

   इनका मुख्य लक्ष्य दीर्घकालिक हितों को प्राप्त करना होता है।

2. **अभिवृतिजन्य दाटा समूह (Attitude Pressure groups)** इस प्रकार का समूह कुछ मूल्य पर आधारित होते है इनका मुख्य लक्ष्य सामाजिक परिवर्तन लाना, नई क्रान्ती लाना है। पर यह शान्तीपूर्वक प्रक्रिया को करते है। नयी, नयी तकनीकों का प्रयोग करके जल्दी दी लक्ष्यों को प्राप्त करते है।

कार्लफ्रेंडरिक का वर्गीकरण (Classification by Carl fried rich)

आपने दो प्रकार का वर्गीकरण किया है।

1. **सामान्य दबाव समूह (common Pressure group)** – जिन दबाव समूह का उद्देश्य सामान्य होता और जन कल्याण के साथ जुड़कर हितो को पूरा करने के लिये दबाव डालते।

2. **विशिष्ट दबाव समूह (Specific Pressure group)** – इस प्रकार के दबाव समूह के हित विशेष होते है और अपने हितो की पूर्ति के लिये सरकार पर विशेष तरीके से दबाव डालते है। सामान्य हित होते हुए भी इनकी प्रकृति, संगठन, उद्देश्य, कार्य–विधि विशिष्ट होती है।

23.6 सारांश

दबाव समूहों को लोकतांत्रिक प्रक्रिया का एक अभिन्न और उपयोगी तत्व माना जाता है। समाज इतना जटिल है कि व्यक्ति अकेले अपने हितो की रक्षा नहीं कर सकता है। अधिक प्रभावशाली बनने के लिए, हमें अपने आस– पास के लोगों का समर्थन चाहिए। यही वजह है कि सामान्य हितों के आधार पर दवाव समूह

बनते हैं। लोकतांत्रिक राजनीति में बात–चीत और समन्वय महत्वपूर्ण है, और कुछ संघर्ष भी उसका हिस्सा होते है। इसीलिए नीतियों को बनाते और लागू करते समय सरकार के लिए इन संगठित समूहो से परामर्श करना महत्वपूर्ण है।

23.7 बोध प्रश्न

1. दबाव समूह का अर्थ एवं परिभाषा को लिखिए।
2. दबाव समूह के प्रकार की व्याख्या कीजिए।
3. दबाव समूह की विशेषता का वर्णन कीजिए।
4. दबाव समूह का वर्गीकरण कीजिए।
5. साहचर्य समूह पर टिप्पणी लिखिए।
6. दबाव एवं समूह सी0 बोन का लिखिए।

23.8 संन्दर्भ सूची

1. Moody, J. & Studdert&Kennedy, G. (1970). The Pressure Group System. Longman.
2. Finer, S. E. (1970). The Theory and Practice of Modern Government. Methuen.
3. Shipley, P. (1981). Pressure Groups and Political Parties. Routledge.
4. Hunt, N.C. (1997). The Political Economy of Pressure Groups. Routledge.
5. Forman, F. N., Baldwin, N. D. J., Forman, F. N., & Baldwin, N. D. J. (1999).
6. Pressure groups. Mastering British Politics, 128-150.
7. Marsh, I. (2003). Interest groups and social movements. The Cambridge Handbook of Social Sciences in Australia.
8. Grant, W. (2004). Pressure politics: The changing world of pressure groups. Parliamentary Affairs, 57(2), 408-419.